CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

145

स्तुति सौरभ

संकलन एवं लेखन: आर्यिका दृढ़मति जी ससंघ

5184

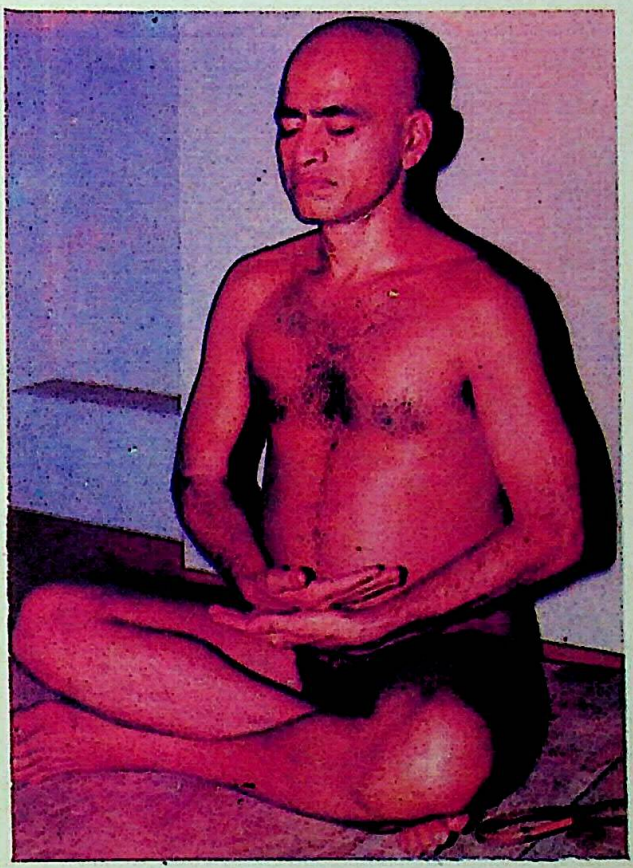

दिगम्बर जैनाचार्य १०८
श्री विद्यासागर जी महाराज

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुभाशीष

परम पूज्य आर्यिका 105 श्री दृढ़मति जी ससंघ

5184

प्रकाशन
आगम प्रकाशन,
5373. जैनपुरी, रेवाड़ी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आगम प्रकाशन के संस्थापक सदस्यगण

१. देवेन्द्र जैन, सर्राफ
C/o. वर्धमान ज्वैलर्स
गुड़ बाजार, रेवाड़ी
दूरभाष : 23912, 25409, घर : 24007

२. रमेश जैन बजाज
C/o. बनवारी लाल तारा चन्द
गुड़ बाजार रेवाड़ी
दूरभाष : 22162 घर : 22809

३. डा० विनय कुमार जैन
C/o. डा० के० सी० जैन
रेलवे रोड़, रेवाड़ी
दूरभाष : 23805

४. महेन्द्र कुमार जैन सर्राफ
C/o. छुट्टन लाल इन्द्र सैन जैन
गुड़ बाजार, रेवाड़ी
दूरभाष : 22719 घर : 24719

५. अरविन्द कुमार जैन
C/o. छोटे लाल मेहर चन्द जैन
गुड़ बाजार रेवाड़ी
दूरभाष : 22471, 23171
घर : 22671, 23371

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्तुति सौरभ

संकलन एवं लेखनः आर्यिका दृढ़मति जी ससंघ

5184

रत्नत्रय के संसाधक, चारित्र-चूड़ामणि, समाधि सम्राट दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 विद्यासागर जी मुनि महाराज की परम शिष्या आर्यिका श्री 105 दृढ़मति माता जी के ससंघ रिवाड़ी (हरियाणा) मे 1994-95 पावन वर्षा योग के उपलक्ष्य में दिगम्बर जैन समाज रिवाड़ी द्वारा सादर प्रकाशित

शुभाशीष

परम पूज्य आर्यिका 105 श्री दृढ़मति जी ससंघ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति स्थल : जैन साहित्य सदन
श्री दिगंबर जैन लाल मन्दिर, चाँदनी चौक,
दिल्ली-6, फोन-3280942

प्रथम संस्करण : 1995
ISBN :- 81-86705-00-7

मुद्रक : गोयल आफसेट वर्क्स
A-60/1 G.T. Karnal Road
Opp. Vijay Cinema
Delhi-110033
Ph. 7211428

मूल्य : 50 रुपये मात्र

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

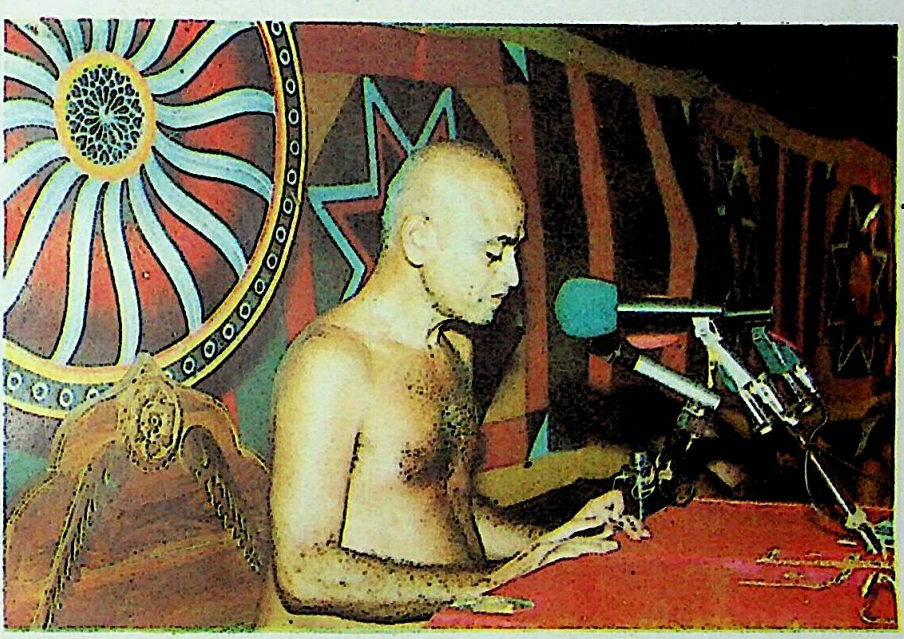

आचार्य श्री विद्यासागर जी

विद्यासागर, विश्ववन्द्यश्रमणं, भक्त्या सदा संस्तुवे,
सर्वोच्चं यमिनं विनम्य परमं, सर्वार्थसिद्धि प्रदम्।
ज्ञानध्यान तपोऽभिरक्त मुनिपं, विश्वस्य विश्वाश्रयम,
साकारं श्रमणं, विशाल हृदयं, सत्यं शिवं सुन्दरं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जय हो! जय हो! जय हो!

अनियत विहारवालों की नियमित विचार वालों की
सन्तों की, गुणवन्तों की सौम्य शान्त छविवन्तों की
जय हो! जय हो! जय हो!

पक्षपात से दूरों की यथाजात यतिशूरों की
दयाधर्म के मूलों की साम्यभाव के पूरों की
जय हो! जय हो! जय हो!

भवसागर के कूलों की शिव आगर के चूलों की
सब कुछ सहते धीरों की विधि मल धोते नीरों की
जय हो! जय हो! जय हो!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाश किरण

रेवाड़ी नगर एक जिला-मुख्यालय जो हरियाणा प्रदेश में देहली से जयपुर मार्ग पर देहली से ८५ कि.मी. एवं जयपुर से १८५ कि.मी. दूरी पर स्थित है। राजस्थान प्रदेश यहां से १२ कि.मी. की दूरी से शुरु हो जाता है। देहली अहमदाबाद रेलवे लाइन पर सबसे बड़ा जंकशन है। पिछले २-३ वर्षों से बड़ी रेल्वे लाइन का कार्य तेजी से चल रहा है।

लगभग एक लाख की जनसंख्या वाली इस रेवाड़ी तहसील में ३६० ग्राम हैं अतः व्यापार की दृष्टि से यही एक बड़ी मण्डी है, अनाज व कपड़े का व्यवसाय विशेष रूप से होता है, वैसे धातु के काफी कारखाने भी खुले हुए हैं, धातु से बनी सामग्री पर नक्काशी के लिए रेवाड़ी प्रसिद्ध क्षेत्र है।

जैन समाज के १७५ घर हैं, जो सभी दिगम्बर मूल आम्नाय के प्रति श्रृद्धान्वित हैं, समाज में एकता है, जैनेतर समाज में भी जैन समाज रेवाड़ी कीअच्छी साख है। मुस्लिम सम्प्रदाय के अतिरिक्त प्रायः सभी सम्प्रदाय के लोग यहाँ हैं। सन्तुलित साझेदारी होने के कारण कोई जातीय दंगे फसाद आदि नहीं होते सभी जाति, सम्प्रदाय एवं धर्म के अनुयायी पूर्ण सौहार्द्र एवं भ्रातृत्व भाव से रहते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यहाँ रमणीक ५ दिगम्बर जैन मन्दिर हैं जिनमें एक विशाल, भव्य नसिया जी लगभग १४१ वर्ष प्राचीन (स्थापित सम्वत् १९१०) जहां अतिशय युक्त, आकर्षक, भव्य जिन प्रतिमा श्री शान्ति नाथ जी की मुख्य वेदी पर प्रतिष्ठित है। अत्यन्त प्राचीन, आकर्षक, अतिशयवान प्रतिमाओं से सुशोभित श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर है जिसमे मूल नायक प्रतिमा श्री चन्प्रप्रभु भगवान् की वैशाख सुदी सम्वत् ११३० ईस्वी सन् १०७३ में) प्रतिष्ठित है । एक प्रतिमा जी श्री आदिनाथ भगवान् की चतुर्थकालीन यहां पर स्थानीय तहसील से, अतिशय दिखाकर खुदाई के समय प्राप्त हुयी थी। यह मन्दिर इतना प्राचीन होते हुये भी आज नवीनता सी शोभा पाता है। १७६ वर्ष प्राचीन (सम्वत् १८७५ में स्थापित) कुआँ वाला मन्दिर, चन्द्रप्रभु जिनालय के नाम से है। सम्वत् १८५० में स्थापित एक चैत्यालय तथा एक नया मन्दिर भी है जो लगभग ७० वर्ष से निर्मित है। २५ वर्ष पूर्व नसिया जी में आचार्य श्री विमल सागर जी एवं १०८ श्री अजित सागर महाराज जी की प्रेरणा से एक विशाल मानस्तंभ का निर्माण किया गया जिसकी पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा यहाँ पर बड़े उत्साह एवं धर्म प्रभावना के साथ सम्पन्न हुयी।

'मंगसिर बदी पञ्चमी को प्रतिवर्ष विशाल रथयात्रा-महोत्सव (विमानोत्सव) होता है। यह तिथि बाबा लालमन दास जी द्वारा निश्चित की गई थी जिनकी रेवाड़ी जैन समाज पर विशेष कृपा रही। प्रारम्भ से अब तक यह महोत्सव सानन्द सम्पन्न होता आ रहा है, वर्तमान में आर्यिका संघ के सान्निध्य में निस्सन्देह सम्पन्न होगा ही और भविष्य में भी होता रहेगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साधु सन्तों के पावन चरणों की विहार स्थली रेवाड़ी में सर्वप्रथम आचार्य शान्ति सागर जी का ससंघ आगमन हुआ। उनके अथक प्रयास से ही यहाँ पर जैन समाज का धार्मिक क्षेत्र में नवजीवन प्रारंभ हुआ। घरों से मिथ्यात्व का बोझ लगभग समाप्त हो गया वरना देवी-देवता, आले-दिवाले, बासोड़ा आदि पूजन का यहाँ पर बहुत अधिक प्रचलन था। आचार्य श्री शान्ति-सागर जी के बाद जो चेतना आयी उसके फलस्वरुप साधु वर्ग के चरण रेवाड़ी में पड़ने लगे। इसी शृंखला में आचार्य १०८ श्री देशभूषण जी संघ सहित तीन बार आचार्य विमल सागर जी भी ससंघ तीन बार एवं आचार्य धर्म सागर जी महाराज भी संघ सहित पधारे। आचार्य शान्ति सागर जी, आचार्य विद्यानन्द जी एवं अन्य बहुत से आचार्य, मुनिराज, क्षुल्लक जी, आर्यिका संघ एवं ब्रह्मचारिणी बहनों का यहां पर समय-२ पर आगमन होता रहा है एवं आर्शीवाद प्राप्त होता रहा है। आचार्य ज्ञानभूषण जी एवं मुनि श्री श्रुतसागर जी (मुरैना निवासी) का चातुर्मास कराने का सुअवसर भी मिला। दो वर्ष पूर्व आचार्य १०८ श्री कुन्थुसागर जी अपने विशाल संघ (३२ पिच्छी) सहित आए थे।

रेवाड़ी न केवल साधु सन्तों की मंगल विहार स्थली रही अपितु दीक्षा-स्थली एवं समाधिस्थली भी रही चैत्र शुक्ल १३ सम्वत् २०२५ को आचार्य श्री विमलसागर जी द्वारा आचार्य श्री सुमति सागर जी की यहाँ पर ऐलक दीक्षा हुई थी, नाम वीर सागर जी रखा गया था। आचार्य श्री कीर्ति सागर जी ने भी मंगसिर कृष्णा पंचमी विक्रम संवत् २०३३ वी० नि० स० २५०३ तद्नुसार शुक्रवार १२ नवंबर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१९७६ को श्री १०८ मुनि पार्श्वकीर्ति जी महाराज को क्षुल्लक से मुनि दीक्षा दी थी। यहाँ की समाज पर क्षुल्लक श्री आदिसागर जी महाराज का काफी प्रभाव रहा जो कि आ० श्री विद्यासागर जी के गुरु परम पूज्य महाकवि आचार्य ज्ञानसागर जी के संघ से थे, उनका यहाँ काफी समय तक सान्निध्य रहा तथा उनकी समाधि भी यहीं पर हुई। एक माता जी एवं दो ब्रह्मचारी जी की भी समाधि हुई इन सभी की समाधि स्थली नसिया जी हैं। ब्रह्मचारी श्री चन्दन लाल जी एवं प्रभुदयाल जी भी रेवाड़ी के मूल निवासी थे।

आचार्य कुंथ सागर जी के बाद उनके शिष्य मुनि श्री कुमुदनन्दी का पिछले २ वर्ष में यहाँ चातुर्मास हुआ, लेकिन उसके बाद डेढ़ साल से किसी भी साधु का समागम रेवाड़ी जैन समाज को नहीं हो रहा था कि अचानक विशेष पुण्योदय से १९९४ का यह वर्ष रेवाड़ी के लिए परम सौभाग्य लेकर आया जिसमें सन्तशिरोमणि १०८ दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर की कृपा से उनके धर्मस्नेह से उन्हीं की परम विदुषी शिष्या पूज्य आर्यिका श्री १०५ दृढ़मति माता जी का १८ आर्यिकाओं के विशाल संघ सहित मंगल वर्षायोग-चातुर्मास का कल्याणकारी सुयोग प्राप्त हुआ। संघ का ग्रीष्म कालीन प्रवास श्री अतिशय क्षेत्र महावीर जी में रहा तदुपरान्त संघ को गुरु आज्ञा मिली चातुर्मास हेतु रेवाड़ी (हरियाणा) में विहार करने का। यह शुभ समाचार विद्युत वेग से रेवाड़ी जैन समाज ने पाया। शीघ्र ही समाज में उत्साह जागा और महिला-पुरुष एवं युवक वर्ग संघ को अपने नगर में चातुर्मास कराने की उत्कट भावना से महावीर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी पहुँचे विनम्र प्रार्थना स्वीकार कर संघ धर्म-प्रभावना करता हुआ १५-७-९४ को रेवाड़ी में आया। आबाल वृद्ध नर-नारी ने इस महान उपलब्धि से अपने आपको धन्य-धन्य माना और २१-७-९४ आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी की मंगल बेला में संघ के आठवें पावन वर्षायोग जो आठ कर्मों से मुक्ति पाने की शुभ सूचना देने वाला है की स्थापना हुई। इतने विशाल संघ का चातुर्मास इसके पूर्व कभी नहीं हुआ।

आर्यिका संघ के योगदानों को शब्दों में बांधना कठिन है, संघ के पावन आगमन से उनके अमृत प्रवचनों से समाज की मुख्यतः नई पीढ़ी के आचार-विचार में अभूतपूर्व परिवर्तन आया। नगर एवं आसपास की जनता सम्प्रदाय भेद को भुलाकर भरपूर धर्मलाभ ले रही है। संघ का रेवाड़ी में क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका आकलन तो आने वाले समय में अपने आप ही हम सबके समक्ष होगा। संघ-सान्निध्य एवं प्रेरणा से नव युवक वर्ग एवं बालिकाओं में जो आचार-विचार सम्बन्धी सुधार हुए हैं वे अद्भुत हैं, रेवाड़ी जैन समाज के लिए अद्वितीय है। आगामी अनेक वर्षों के लिए जैन समाज की एक मजबूत दीवार तैयार हुई है।

परम पूज्य आर्यिका संघ सतत अध्ययन, चिन्तन, मनन एवं तत्त्वचर्चा में अभ्यस्त हैं, ये पूज्य गुरुदेव की महिमा है, उन्हीं के साधना-संस्कारों का, निर्देशों का प्रभाव है। जिनवाणी के प्रति भगवान् महावीर स्वामी के सिद्धान्तों के प्रति बड़ी आत्मीयता है अतः उन सिद्धान्तों के संरक्षण एवं प्रचार प्रसार की भावनाओं से ओत-प्रोत आर्यिका श्री की प्रेरणा एवं निर्देशन में अनेक ग्रन्थों का मुद्रण एवं प्रकाशन हुआ जिसमें से एक विनम्र योगदान इस कृति का भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है जो आप सबके कर-कमलों में सुरभित है, सुशोभित है। जिनवाणी के प्रति संघ का विशेष लगाव है, अतः यहां सभी मन्दिरों शास्त्रों का जो अच्छा भण्डार है उसकी सुरक्षा हेतु विशेष रूप से आर्यिका श्री तपोमति जी की प्रेरणा एवं आर्यिका श्री नम्रमति जी का सहयोग रहा फलस्वरुप उन ग्रन्थों की जिल्द आदि सधवा कर उन्हें नवीन रूप दिया गया।

पुस्तकों के प्रकाशन, प्रसार एवं वाचन में पूज्य श्री दृढमति जी की विशेष रुचि है। उनके दिन-रात अथक परिश्रम के परिणाम स्वरूप ही यहां रेवाड़ी में पुस्तकें छप सकी हैं। यद्यपि समस्त आर्यिका संघ ने पुस्तक सम्पादन एवं संकलन कार्य में बड़ी माता जी को पूर्ण सहयोग दिया है तो भी पूज्य आर्यिका श्री गुणमति जी, श्री जिनमति जी एवं श्री प्रशम मति जी का विशेष योगदान रहा। पूज्य दृढ़मति जी की जो वाचन शैली है, सूक्ष्म एवं गूढ़ से गूढ़ विषय को सरलता से श्रोता के हृदय में बैठाने की जो कला है एवं उनके ज्ञान का जो विशेष क्षयोपशम है उसके अनुरूप ही पुस्तकों के प्रकाशन एवं घर-२ में पहुंचाने की उनकी अत्यन्त जिज्ञासा है। स्वास्थ्य बेहद खराब होने के बावजूद भी उनका यह लेखन एवं अध्ययन का कार्य चलता ही रहता है। भगवान् महावीर एवं आचार्य श्री विद्यासागर जी उनकी लेखनी को शक्ति, दृढ़ता एवं वेग प्रदान करें।

o o o

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संघ में 18 माता जी एवं 11 ब्रह्मचारिणी बहिनें हैं-

1. आर्यिका श्री दृढ़मति माता जी
2. आर्यिका श्री तपोमति माता जी
3. आर्यिका श्री सत्यमति माता जी
4. आर्यिका श्री गुणमति माता जी
5. आर्यिका श्री जिनमति माता जी
6. आर्यिका श्री पावन मति माता जी
7. आर्यिका श्री साधना मति माता जी
8. आर्यिका श्री विलक्षणा मति माता जी
9. आर्यिका श्री धारणा मति माता जी
10. आर्यिका श्री वैराग्य मति माता जी
11. आर्यिका श्री अकलंक मति माता जी
12. आर्यिका श्री निकलंक मति माता जी
13. आर्यिका श्री आगम मति माता जी
14. आर्यिका श्री स्वाध्याय मति माता जी
15. आर्यिका श्री नम्रमति माता जी
16. आर्यिका श्री प्रशम मति माता जी
17. आर्यिका श्री मुदित मति माता जी
18. आर्यिका श्री सहज मति माता जी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ब्रह्मचारिणी बहिनें:

1. ब्र० नलिनी दीदी, देहली,
2. ब्र० आशा दीदी, हिनोती
3. ब्र० रश्मि दीदी, जबलपुर
4. ब्र० सन्ध्या दीदी, गुना
5. ब्र० सविता दीदी, सागर
6. ब्र० उषा दीदी, जबलपुर
7. ब्र० सविता दीदी, मुंगावली
8. ब्र० सुनीता दीदी, कटनी
9. ब्र० कल्पना दीदी, गुना
10. ब्र० ज्योति दीदी, विदिशा
11. ब्र० राजुल दीदी, अशोक नगर

उज्जवल प्रकाश की ये किरणें सर्वत्र सभी प्राणियों के हृदय में ज्ञान एवं संयम का प्रकाश प्रज्जवलित करती रहें इसी सद्भावना एवं प्रेरणा से यह पुस्तक समर्पित है।

जैन समाज रेवाड़ी

चार्तुमास स्थल

श्री दिगम्बर जैन कुँआ वाला मन्दिर एवं
श्री दिगम्बर जैन नया मन्दिर
जैन पुरी, रेवाड़ी (हरियाणा)

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समर्पण

प्रत्येक मानव का मन भाव विभोर हो झूम रहा है। जैसे सावन भादों के सांवले मेघ देखकर मयूर झूम उठता है, वैसे ही परम पूज्य गुरुवर दिगम्बराचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी की वाणी रूपी मेघ की अविरल अमृत वर्षा से जन मानस नाच उठता है।

वर्तमान में दिगम्बर जैन समुदाय में भास्वर नक्षत्र की भांति स्पष्ट एवं आकर्षक सत्ता को स्थापित करने वाले जैनावधूत परम पूज्य आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज का नाम देदीप्यमान है। आपने आचरण के क्षेत्र में ज्ञान के क्षेत्र में, आदर्श स्थापित किये हैं, उनको देखते हुए चतुर्थकालीन जैन सन्तों का स्मरण सहज ही हो जाता है, तथा आज की इस चकाचौंध भरी दुनिया के समक्ष वे आश्चर्यजनक अवभासित होते हैं।

आचार्य श्री की वचन वर्गणा से हमेशा ज्ञान मोती बरसते रहते हैं, सुनने वाले अघाते ही नहीं और भले ही वे कुछ न बोलें परन्तु अबोध दर्शक चातक की भांति इस चन्द्रमा को सभी ऐसे निहारते, जैसे छोटा बालक आम के पेड़ के नीचे इस इन्तजार में खड़ा रहता है कि अब आम टपका. ....अब टपका ...अब टपका...। आधुनिक युग के इन अद्वितीय सुवैज्ञानिक ने जैन जैनेतर सभी गुमराह बालकों, युवक, युवतियों, प्रौढ़ों और वृद्धों को धर्म से जगाया है। वे सभी के आत्म की शल्य क्रिया सिखा कर रूढ़ियों के भव परम्पराओं के रोग से मुक्त करने का भरसक प्रयास कर रहे हैं और सबकी आत्मा को अमृत घुट्टी का पान कराकर अमरता का आशीर्वाद दे रहे हैं उनके चरणों में हमेशा हमारा विनम्र नमन-वन्दन अर्पित-समर्पित।

कृतिकार संत प्रमुख आचार्य श्री विद्यासागर जी जन्मना कर्नाटक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाषाभाषी होने पर भी संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, मराठी और हिन्दी भाषा के भी पूर्ण अधिकारी हैं। हिन्दी भाषा-राष्ट्र भाषा का इतना शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण होता है कि उसे सुनकर यह प्रतीत नहीं होता कि हिन्दी इनकी मातृभाषा नहीं है। दक्षिणप्रान्तीय होने पर भी अनेक वर्षों से आपका मंगल विहार मध्यप्रदेश में हो रहा है, उससे प्रभावित होकर वहां के अनेक युवा महाव्रत धारण कर स्व-पर कल्याण कर रहे हैं। आपके संघ में अनेक साधु जैनागम के अच्छे ज्ञाता और प्रभावक वक्ता हैं। यद्यपि आप अपने संघ में आर्यिकाओं को नहीं रखते तथापि आपसे दीक्षित 69 आर्यिकाओं के अनेक संघ एवं आर्यिका श्री विशालमति जी विज्ञानमति, विद्युतमति जी अपनी निर्दोष चर्या और वक्तृत्व कला से जिनशासन की महती प्रभावना कर रही हैं।

रेवाड़ी दिगम्बर जैन समाज ही क्या पूरे हरियाणा क्षेत्र एवं उत्तरप्रदेश की समस्त समाज के पुण्य-प्रताप की प्रबलता रही कि युवा शिरोमणि सन्त आचार्य श्री की परम शिष्या आर्यिका श्री दृढ़मति जी का ससंघ आठवां पावन वर्षायोग हरियाणा क्षेत्र के रेवाड़ी शहर में हो रहा है जिनके माध्यम से यहां धर्म का वातावरण बना। ससंघ आर्यिका संघ के मनोविज्ञान ने अपने आप हम सभी के जीवन की वर्षों पुरानी जीर्ण-शीर्ण किताब को पढ़ा और उनके पृष्ठों को आध्यात्मिक तथा दार्शनिक स्याही सोक्ते से साफ कर नया रूप प्रदान किया। फलतः बच्चों को नया उत्साह, युवकों को नया जोश नया होश साथ में नया तोष और बुजुर्गों को नया ज्ञान मिला।

इस अनूठे पावन वर्षायोग में रेवाड़ी समाज की काया पलट हो गई, जैन-जैनेतर सभी व्यक्तियों का जीर्णोद्धार हो गया। आर्यिका संघ की वाणी ने किसी को नहीं छोड़ा, जिन्होंने भी सुना उन सभी को आत्मा/परमात्मा के विषय में सोचने को मजबूर हो जाना पड़ा, सबकी आत्माओं को झकझोर दिया। वर्षायोग में वर्षा के पानी ने नगर के प्राचीनतम भवनों को धोया और आर्यिका संघ ने धर्मामृत/प्रवचनामृत वर्षा से हम सबके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिल और दिमागों को धोया। आध्यात्मिक वर्षायोग का ऐसा चमत्कार हम लोगों ने अपने जीवन में प्रथम बार देखा। इस वर्षायोग का सबसे बड़ा प्रभाव तो यह हो रहा है कि रेवाड़ी में धार्मिक क्षेत्र में एक ऐसी युवा पीढ़ी तैयार हो रही है, जो आगामी कई वर्षों तक जैन धर्म की बागडोर संभालती रहेगी।

आर्यिका संघ के शुभाशीष एवं मार्गदर्शन से प्रस्तुत कृति "स्तुति सौरभ" के सम्पादन एवं प्रकाशन का गुरुतर कार्य सम्पन्न हो पाया है। कृति की अच्छाईयों के लिए हम उनके कृतज्ञ हैं, भाषा, मुद्रण-प्रकाशन की कमी या त्रुटियाँ हमारी अपनी हैं। सुविज्ञ पाठक उसे जानकर शब्द एवं अर्थ शोध कर पढ़ें, हमारी त्रुटियों की ओर इंगित कर हमें बोध करायें फलस्वरुप भावी प्रयासों में उनकी पुनरावृत्ति न होने पाये।

अन्त में सद्गुरु के चरणों की रज धारण कर
उनके श्री चरणों में बारम्बार विनम्र नमन-नमन-नमन।
स्तुति सौरभ का
समर्पण-समर्पण-समर्पण

समस्त दिगम्बर जैन समाज
रेवाड़ी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृति परिचय

आचार्य विद्यासागर जी प्रतिभा सम्पन्न कवि भी हैं अतः उनकी कोई भी काव्य कृति मात्र कवि कर्म नहीं है किन्तु प्रत्येक कृति मानों एक दार्शनिक सन्त की आत्मा का संगीत है। सन्त जो साधना के जीवन्त प्रतिरूप हैं और साधना जो आत्म विशुद्धि की मंजिलों पर सावधानी से पग धरती हुई लोकमंगल को साधती है। ये सन्त तपस्या से अर्जित जीवन दर्शन को अनुभूति में रचा-पचा कर सबके हृदय में गुंजरित कर देना चाहते हैं। निर्मल वाणी और सार्थक सम्प्रेषण का जो योग चिन्तन और प्रवचनों में होता है उसे अनेक छन्दों का प्रवाह और काव्यानुभूति की अंतरंग जय समन्वित करके आचार्य श्री ने अनेक काव्य कृतियों का, संस्कृत शतकों का हिन्दी शतकों का रूप दिया है। आपने अनेक स्तोत्रों तथा आचार्य कुन्दकुन्द एवं समन्तभद्राचार्य के अनेक ग्रन्थों का पद्यानुवाद किया है। 'समणसुत्तं' का 'जैनगीता के नाम से 'कुन्दकुन्द का कुन्दन' नाम से वसन्त तिलका छन्द में समयसार का, 'रयणमञ्जूषा नाम से रत्नकरण्डक श्रावकाचार' का पद्यानुवाद किया है। 'निरञ्जन शतक, निजानुभव शतक, श्रमण शतक, भावना शतक, परीषहजय शतक, सुनीतिशतक आदि की रचना सुन्दर सरल भाषा में की है आपकी ये सभी रचनायें 'वसन्ततिलका' एवं 'ज्ञानोदय' छन्द में है। पाठक जब मधुर स्वर से पाठ करते हैं तब पाठक एवं सभी श्रोता भावविभोर हो जाते हैं। सन् 1988 में आपका 'मूकमाटी' नामक आध्यात्मिक महाकाव्य भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली से प्रकाशित हुआ है जो हिन्दी जगत् में बहुचर्चित एवं बहुप्रशंसित हुआ है।

प्रस्तुत कृति 'स्तुति सौरभ' में आचार्य श्री के पांच शतकों का संकलन है जिनका प्रत्येक वर्ण, स्वर्ण से बहुमूल्य है, इनमें न सिर्फ अर्हत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भक्ति का पीयूष भरा है अपितु जैन दर्शन के मौलिक सिद्धान्त भी कूट-कूट कर भर दिये गये है यह आचार्य श्री विद्यासागर जी की विशुद्ध बुद्धि का चमत्कार एवं सशक्त लेखनी का कमाल है। इस कृति की विषम वस्तु पूर्णतः प्रभु श्रद्धा सुमन के रूप में है जो 'स्तुति सौरभ' के नाम से सुरभित है हम सबके समक्ष। संगीतप्रिय इस दुनिया के आवाल वृद्ध सभी फिल्मी-रागवर्धक गीतों को गुनगुनाने गाने की अपेक्षा नैतिक, भक्तिप्रद और वैराग्यवर्धक आध्यात्मिक छन्दों को/गीतों को गायें और मन को राग के संस्कारों से विलग कर धार्मिक-नैतिक मानवीय अवधारणाओं में लगायें, इसी उद्देश्य से आचार्य श्री ने पद्य-रचनाओं को किया। उन्हीं की पांच शतक रचनायें इसमें संकलित हैं। 'मूकमाटी' महाकाव्य की कुछ कवितायें, साथ ही आचार्य श्री के ही शिष्य अन्य मुनियों की कुछ स्फुट रचनायें और सच्चे प्रभु-गुरु एवं उनकी वाणी जिनवाणी के प्रति श्रृद्धा सुमन स्वरुप भजन संग्रह माला भी समर्पित है। दान और पूजा श्रावक का प्रमुख कर्त्तव्य है, अतः इसे ध्यान में रखते हुए "आहार दान कैसे और क्यों ?" एवं जिन मन्दिर/जिन पूजा एक विज्ञान और कला है" इन विषयों पर भी कुछ जानकारियाँ दी गई हैं। प्रस्तुत कृति की पूर्ण विषय वस्तु को छह खण्डों में विभाजित किया है क्रमशः जिनके नाम निम्न प्रकार हैं:-

खण्ड : 1 प्रभु श्रद्धा सौरभ

खण्ड : 2 काव्य सौरभ

खण्ड : 3 जिन वन्दन सौरभ

खण्ड : 4 गुरु वन्दन सौरभ

खण्ड : 5 शारदा वन्दन सौरभ

खण्ड : 6 विविध विषय सौरभ

कृपा हुई गुरु की। वरद हस्त रहा इस मस्तक पर। अणु-अणु का अतिशय ज्ञात हुआ। कण-कण को परिचय प्राप्त हुआ। जहाँ-जहाँ उनके शिष्यों के चातुर्मास हुए वहां-वहां ज्ञान की अभिनव गंगोत्रियां खुलीं और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जन-जन-मानस उपकृत हुआ। उन्हीं की अनुकंपा, असीम कृपा हम सब पर बरसी कि आचार्यश्री विद्यासागर जी की परम शिष्या आर्यिका श्री दृढ़मति जी के आठवें पावन ससंघ वर्षायोग का सुयोग हमें मिला। जिन्हें पाकर रेवाड़ी की वसुन्धरा, माँ जिनवाणी की सेवा देखकर प्रफुल्लित हो उठी।

इस चतुर्मास के दौरान आर्यिका संघ द्वारा तत्त्वार्थसूत्र, द्वादश अनुप्रेक्षा, रत्नकरण्डक श्रावकाचार, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, मूकमाटी को हम सब के समक्ष बड़ी ही सरल और सहज शैली में समझाने का प्रयास किया गया।

प्रस्तुत कृति से मेरा मतलब उन-उन तमाम अध्यात्मिक भजन, कविताओं से है जिन्हें आवाल वृद्ध श्रद्धा भक्ति से सुबह शाम गुनगुनाते रहते हैं। इसमें भक्ति सौरभ की कोई चासनी बलात् नहीं दी गई है, वरन् इन्हें पढ़ते-2 विद्वान् स्वयं सहज ही उस बिन्दू की गहराई को मापने लग जाता है।

आचार्य विद्यासागर महाराज की तथा अन्य मुनियों की कविताओं का यह संकलन उनकी शिष्या आर्यिका श्री दृढ़मति जी के रेवाड़ी प्रवास की स्मृतियां जन-जन के मन में झंकृत करता रहेगा। परम पूज्य आचार्य के चरणों में विनम्र-वन्दन अर्पित कर उनके प्रति श्रद्धा के सुमनों द्वारा कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं तथा उनके उपकार को बहुशः स्मृत करते हैं। जिनशासन की प्रभावना के साथ जिन शासन के अनुपालन की ओर हमारे कदम बढ़ सकें इसी सद्भावना के साथ जन-जन के करों में सादर-सविनय समर्पित है- स्तुति सौरभ.....सौरभ.....सौरभ।

मुनिसंघ सेवा समिति,
रेवाड़ी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक झलक

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

'जीवन ज्योति जगाने जिनने बना दिया खुद को बाती।
जन जीवन को सौंपी इनने करुणा की अनुपम थाती।।'

आचार्य श्री विद्यासागर जी एक उत्कृष्ट संत तो हैं ही एक कुशल कवि, वक्ता और विचारक भी हैं, काव्य रुचि और साहित्य अनुराग उन्हें विरासत में मिला है। उनके दीक्षा गुरु आचार्य श्री ज्ञान सागर जी स्वयं मेधावी कवि थे, जिन्होंने संस्कृत साहित्य को अनेकों महाकाव्यों के द्वारा समृद्ध किया। आचार्य श्री के कंठ में भी अपने गुरु के समान ही सरस्वती का निवास है। इसे गुरु का वरदान कहें या पूर्व-पुण्योदय, जिससे उनके बोलने, गुनगुनाने, यहाँ तक कि चलने और उठने बैठने में भी एक लय अनुस्यूत है।

अहिंसा, क्षमा, अपरिग्रह, तपस्या, सत्य एवं शुद्धता के दार्शनिक विश्वासों की पीठिका पर दृढ़तापूर्वक आसीन श्री दिगंबर जैनाचार्य विद्यासागर जी के कलाकार मानस में संसार के स्वरूप को ढोकर भयंकर हिंडोल होता है। फलतः आज के समाज जीवन-मूल्य, जीवन- व्यवहार, मनोविज्ञान, आचार-व्यवहार पर पैनी एवं खोजी दृष्टि डालते हुए उन्होंने एक कुशल वैद्य के समान रोगों का निदान एवं समाधान दोनों ही प्रस्तुत किए हैं।

व्यक्तित्व-कर्नाटक बेलगाँव के सदलगा ग्राम की मृदु मिट्टी से मल्लप्पा व श्रीमती जी सृजा। गृह की द्वितीय संतान होकर भी अद्वितीय हैं। शैशव से ही सन्त दर्शन की भावना अतृप्त रही। समय-समय पर तृप्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यत्किञ्चित् हुई। कौमार्य की दौड़ से कहीं तेज दौड़कर राजस्थान की मरुभूमि में प्रवेशकर आचार्य श्री ज्ञानसागर जी से दीक्षित हो विद्या, बुद्धि, संयम, सेवा और अनुभव का सम्पोषण किया। तभी तेजस्वी बदन के अन्दर आध्यात्मिक कवि हृदय का स्मरण हुआ व मंद स्पंदित ओष्ठों से धर्म की गाथा आरंभ हुई जो अद्यवधि अवाध्रूपेण वृद्धिंगत है।

यौवन की दहलीज पर पग थामते ही धर्म-निकष-प्रदेश बुंदेलखंड में दाखिला ले, सुकोमल सुर्ख कनकाभ तन से निरीह हो, यथा सूत्र धर्माचरण प्रस्तुत कर एकाधिपत्य जाहिर करते हुए स्वैर स्वतंत्र विचरण कर रहे थे। यहाँ पाई इन्होंने मानव के अन्दर उठती /उड़ती जिज्ञासाओं की चिड़िया को पहचानने की अनुपम दृष्टि और आत्मानुशासन के धरातल पर जिन शासन की अश्रुत-पूर्व बागडोर। एकाकी साधना के दुर्गमों में विचरते हुए अनुभूतियों की लेखनी से श्वेत पृष्ठों को रंगा और अभी भी रंगते ही जा रहें हैं, बहुभाषाविद हो साहित्य जगत में प्रवेशकर।

कृतित्व-नर्मदा का नरम कंकर, डूबो मत लगाओ डुबकी तोता क्यों रोता (काव्य-संग्रह) **चेतन के गहराव में** (सचित्र प्रतिनिधि काव्य संग्रह) मूक-माटी (महाकाव्य) पाँच संस्कृत शतक, सात हिन्दी शतकों के अतिरिक्त अनेक जैन ग्रंथों, स्तोत्रों का पद्यानुवाद तथा हिन्दी, अंग्रेजी, कन्नड़, बंगला आदि में स्फुट रचनाएँ भी।

जन्मः शरद् पूर्णिमा संवत् 2003 (10 अक्टूबर 1946)ग्राम सदलगा
दीक्षाः आषाढ़ शुक्ल पंचमी 2025 (30 जून 1968) अजमेर
आचार्य पदः मार्गशीष कृष्ण दूज 2029 (22 नवंबर 1972) नसीराबाद।

संयम सौरभ साधना, जिनको करे प्रणाम।
त्याग तपस्या तीर्थ का, विद्यासागर नाम।।

'आर्यिका श्री दृढ़मति जी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुक्रमणिका

खण्ड 1 : प्रभु श्रद्धा सौरभ

क्रम संख्या		प्रष्ठ संख्या
1.	मंगल पाठ	1
2.	जिन मन्दिर-जिन दर्शन-जिन पूजन	2
3.	जिन पूजा, विज्ञान और कला	4
4.	जयवन्त जिनालय	11
5.	जिनेन्द्र स्तवन (24 भगवानों के अलग-अलग) (समन्तभद्र की भद्रता एवं दोहा स्तुति शतक)	12
6.	निरंजन शतक	55
7.	निजानुभव शतक	75
8.	भावना शतक	96
9.	सुनीति शतक	116
10.	नन्दीश्वर भक्तिः	136
11.	एकीभाव स्तोत्र का पद्यानुवाद	149
12.	भक्तामर स्तोत्र (संस्कृत, हिन्दी एवं अर्थ सहित)	154
13.	श्री भक्तामर भाषा पाठ (श्री कमल कुमार जी शास्त्री कृत)	180
14.	कल्याण मन्दिर स्तोत्रं- (संस्कृत, हिन्दी एवं अर्थ सहित)	190
15.	मंगलाष्टक	217
16.	महावीराष्ठक स्तोत्रं (अर्थ सहित)	219
17.	शारदानुतिरियम्	223
18.	पञ्च गुरु भक्ति	226

खण्ड 2 : काव्य सौरभ

19.	समपर्ण द्वार पर	229
20.	नर्मदा का नरम कङ्कर	231
21.	मनमाना मन	233
22.	चित-कबरा/स्वयं वरण	235

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

23. तुम कैसे पागल हो/ हे! आत्मन् 236
24. कदम फूल कदम शूल/ होले-होले 237
25. भोर की ओर/ पूर्णकाम/सोच 238
26. अंतर/ ना सही 239
27. काँधे 240
28. लिबास/ खिड़की 241
29. वह मैं/ अकेले 242
30. उसने कहा/ अतृप्त 243
31. अगर 244
32. लौटकर लौट आया हूँ 245
33. कब खफाँ हो, दफा हो जाये!!! 246
34. रंगरुटों के बूट 247
35. शर्म छोड़ दो/ मर्म खोल दो 248
36. दो बूँद 250
37. आखिर जहर किसका? 252
38. तीर्थंकर नहीं तो तीर्थ तो बना लो 253
39. रागी किसका 254
40. बरसाती मेंढक 256
41. माफ नहीं, इन्साफ होगा!!! 257
42. दृष्टि का फेर / मर्यादा 258
43. कुछ ही सब कुछ है/ डोली 259
44. मैंने पाठ पढ़ा है जग का 260
45. पशुओं से सीख 261
46. वे लाजवाब हैं 262
47. गुणों के साथ/ वसुधैव कुटुम्बकम् 263
48. मूक-माटी/ नारी 264

खण्ड 3 : जिन वन्दन सौरभ

49. जिनेन्द्र स्तुति 265
50. जैन गीत- (प्रार्थना) 266

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

51. प्रार्थना–हे प्रभो ! ज्ञान का दान दो.... 267
52. निरखो अंग अंग जिनवर के (जिनेन्द्र भक्ति) 268
53. महावीर गुण गाओ 269
54. पार्श्वनाथ–स्तुति 270
55. विनती–सुनिये दयालु भगवन 271
56. रोम रोम से निकले प्रभु जी नाम तुम्हारा 271
57. नन्हा सा फूल हूँ मैं.... 272
58. चाह मुझे है दर्शन की..... 273
59. तेरी परम दिगंबर मुद्रा को... 274
60. जय–जिनेन्द्र बोलिये 275
61. ओ ऽऽऽ जगत् के शान्ति दाता ! 276
62. वीर–वंदना 277
63. तुम्हें कैसे पाऊँ 278

खण्ड 4 : गुरु वन्दन सौरभ

64. आचार्य भक्ति 279
65. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की पूजन 284
66. आचार्य श्री विद्यासागर जी की पूजन 288
67. आचार्य श्री विद्यासागर चालीसा 293
68. आचार्य – स्तवन (आचार्य को विनय से उर में....) 295
69. ज्ञान–तीर्थ विद्यासागर 296
70. भजन मेरा नम्र प्रणाम है 297
71. गुरु स्तुति –ते गुरु मेरे मन बसो 298
72. गुरु वन्दना (बन्दौ दिगंबर गुरु चरण....) 299
73. विनयांजलि 301
74. विद्यासागर की गुण आगर की 303
75. गुरुवर तेरे चरणों में.... 304
76. तेरे चरणों में हम, काटें अपने करम 305
77. ऐसे मुनिवर देखे हमनें 306

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

78. शत-शत बार नमन् है 307
79. संदेश हैं ज्ञान दिवाकर के 308
80. ज्ञान सिखा देना 310
81. गुरु-स्तुति 311
82. नीको लगे गुरु-द्वारा... 312
83. मुनि दिगंबर रचते स्वयंबर... 313
84. परम दिगंबर मुनिवर देख्यो... 314
85. अभिनन्दनीय गुरुवर 315
86. गुरु-वन्दना (कैसे अदा करेगें) 316
87. गुरु गरिमा (तूने कर दिया कमाल) 317
88. हे जैन जगत् के श्रेष्ठ सन्त 319
89. संसार सिन्धु के तुम हो किनारे 320
90. मुझे तेरा शरण मिल गया 321
91. .....तकदीर बदल जाये 322
92. .....दे दो आसरा 323
93. कलयुग के महा सन्त 324
94. कठिन साधना संयम तप में..... 325
95. आई पूनम की ये रात आई 326
96. चमका भाग्य सितारा है 327
97. मन एक मन्दिर 328
98. सुन ले ओ भाई 329
99. श्री ज्ञानसागर मुनिराज के पावन चरणों में सादर श्रद्धांजलि 330

खण्ड 5 : शारदा वन्दन सौरभ

100. शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक मङ्गलाचरण 335
101. शारदा स्तवन 337
102. जिन मुख पंकज से निकली हो 338
103. जिनवाणी माता 340

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

104. हे! भारती माँ! 341
105. हे शारदे माँ! शरण तेरी आये 342
106. हे शारदे माँ! हे शारदे माँ 343
107. जिनवाणी माता! दर्शन की बलहारियाँ 344
108. माता तू दया करके 345
109. वीर हिमाचल तें निकसी 346

खण्ड 6 : विविध विषय सौरभ

110. अब मैं मम मन्दिर में रहूँगा 347
111. पर भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगम्बर 348
112. मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा? 349
113. भटकन तब तक जारी 350
114. बनना चाहता यदि शिवांगना-पति 351
115. चेतन निज को जान जरा 352
116. हरदम है तैयार तू.... 353
117. एक रोज तो चलना है.... 354
118. दुःखों से भरा 355
119. जीवन के किसी भी पल में 356
120. जीवन की पहेली सुलझाने आये हैं 357
121. आया कहाँ से कहाँ है जाना 358
122. ....मम मन्दिर में रहूँगा 359
123. माटी का है भेद अनोखा.... 360
124. बोलो बन्धु किधर-किधर 362
125. तू रोता है क्यों? 363
126. भोले पशुओं की सुन लो पुकार.... 364
127. बातें हैं कल्याण की 365
128. दिन रात मेरे स्वामी.... 366
129. समाधि भावना (जब प्राण तन से निकले) 367
130. बारह भावना (कविवर भूधरदास जी कृत) 368

स्तुति सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

131. मेरी भावना (जिसने राग द्वेष कामादिक) 370
132. वैराग्य भावना (वज्र नाभि चक्रवर्ती) 372
133. आलोचना पाठ 375
134. जैन साधुओं को आहार दान क्यों ? कैसे ? 379
135. संस्मरण (विभिन्न....) 390
136. सामयिक : प्रक्रिया और विधि 396
137. जैन ध्वज वंदना 399
138. मन्दिर में न करने योग्य कार्य 400
139. शास्त्र सभा एवं गुरु के निकट न करने योग्य काय 403
140. My Self (My Soul) 404
141. विद्या सुधा सूक्ति 405
142. मुक्तक 408
143. शाकाहार/दान/पुण्य/क्षणिकाएं 411
144. महापर्व आया 414
145. गुरु विद्यासागर जी, समकित मम परिवार के (स्तुति) 416

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 1

प्रभु श्रद्धा सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'मंगल-पाठ'

णमो अरिहंताणं,
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं

चत्तारि मंगलं
अरिहन्ता मंगलं
सिद्धा मंगलं
साहू मंगलं
केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं

चत्तारि लोगोत्तमा
अरिहन्ता लोगोत्तमा
सिद्धा लोगोत्तमा
साहू लोगोत्तमा
केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगोत्तमो

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि
अरहन्ते सरणं पव्वज्जामि
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि
साहू सरणं पव्वज्जामि
केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि

एसो पञ्च णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिन मन्दिर-जिन दर्शन-जिन पूजन

मंदिर जीवन है, जहाँ सोई हुई चेतना अनायास जाग उठती है और संसार के आल जाल को तोड़कर भगवान के श्री चरणों की ओर प्रवाहित होने लगती है।

जहाँ मूर्ति में विराजे भगवान का दर्शन, उनकी वीतराग चितवन, हमारे रागपाश को छिन्न-भिन्न कर हमारे अहं को गला कर हमें अपने आत्म स्वरूप में रमने के लिए मुक्त कर देती है, मानों क्षण भर में अंतस् में सोया हुआ भगवान जाग उठता है।

मंदिर और मूर्ति की यही तो उपयोगिता है। वक्त रहते हमें उसे पहचान लेना होगा। भगवान के दर्शन में आत्म-दर्शन की सीख ले लेनी होगी वरना खाली हाथ यहाँ से लौट जाने की वेदना अंतहीन होगी।

पूजन और अभिषेक का अपना अलग विज्ञान है। यह मंदिर की आध्यात्मिक प्रयोगशाला के दो जीवन्त प्रयोग हैं। अपने अहं को विसर्जित करके चेतना को प्रभुमय करने के क्षण हैं। विषय भोग और काम वासना में जाते हुए इन्द्रिय और मन को समेट कर प्रभु के चरणों में लीन करने के क्षण हैं।

पहले नहा लीजिए। सादे-साफ सुथरे कपड़े पहन कर मंदिर चलिए। रास्ते में कई और काम निपटाते हुए मत चलिए। किसी और से मत मिलिए! सीधे मंदिर पहुँचिये।

आप भगवान से मिलने जा रहे हैं। खाली हाथ मत जाइए। मुट्ठी चावलों से भर लीजिए और हृदय दर्शन की लालसा से भरिये। आ गया मंदिर का द्वार, पैर धो लीजिए। मन का बोझ यहीं बाहर उतार कर रख दीजिए। बाहर का कोलाहल द्वार के बाहर ही छोड दीजिए। श्रद्धा-भक्ति से नमित होकर प्रवेश करिये तभी दर्शन हो पायेंगे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ये रही प्रभु वेदी। श्री 2प्रभु विराजे हैं। जय हो स्वामि नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु ! जीवन आपको पाकर धन्य हो गया। आनंद से भर गया। झुककर जमीन पर माथा टेकिये। संभल कर उठिये और श्री जिन की वीतराग छवि को अपलक देखिए हृदय में बसा लीजिए। जो जितना टूटे फूटे शब्दों में उनके गुणों का गान हो सके, करिए। स्तुति पढ़िए, फिर झुकिए अब उठकर अपने शरीर से मोह छोड़कर कायोत्सर्ग की मुद्रा में सीधे खड़े होकर निराकुल भाव से नौ बार "णमोकार मंत्र" पढ़िये। शरीर से ममकार छोड़िए। प्रभुमय होते जाइए तन मन सब समर्पित कर दीजिए। चावल चढ़ा दीजिए और कामना करिए, चावल की तरह जीवन में साफ-सुथरे, निर्भय होने की। सारे आवरण हटाकर अपने शुद्धात्म को प्राप्त करने की। जन्म मरण से मुक्त होने की।

आँख खोलिए। देखिए कितना अद्भुत है प्रभु का दर्शन। चलिए, एक और प्रणाम जमीन पर माथा टेककर निवेदित करिये।

बन सके तो ऐसे ही हर वेदिका पर तीन प्रणाम निवेदित करिये। तीन प्रदक्षिणा दीजिए या फिर तन-मन वचन तीनों को प्रभुमय करते हुए कम से कम एक बार प्रणाम निवेदित करते हुए शेष वेदी का दर्शन, वंदन कीजिए।

'जिन' भगवान की उपासना करने वाले जैन माने जाते हैं यानि हमारे साथ ऐसे 'जिन' भगवान का नाम जुड़ा है, जो उन भगवान को इंगित करता है, रागद्वेष नहीं करते, विषय कषाय से रहित होते हैं, आरंभ परिग्रह से रहित होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अगर हम जैन हैं, तो जैनों जैसा कार्य भी होना चाहिए। "जिन" भगवान के आदेशानुसार सिद्धान्तों का, आचरणों का अनुसरण करना चाहिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिन पूजा विज्ञान और कला

जिन मंदिर :- **मुनि क्षमासागर**

हमारा जीवन मंदिर की तरह है। आत्मा की वीतराग अवस्था ही देवत्व है। हम सभी में वह देवत्व शक्ति विद्यमान है। अपनी इस देवत्व शक्ति को पहचान कर, उसे अपने भीतर प्रकट करने के लिए हमने बाहर मंदिर बनाये हैं औरउनमें अपने आदर्श वीतराग अर्हन्त और सिद्ध परमात्मा को स्थापित किया है।

हम जानते हैं और रोज देखते हैं कि घर तो पशु-पक्षी सभी बना लेते हैं लेकिन मंदिर मनुष्य ही बना पाता है। मंदिर के विज्ञान से जो लोग परिचित हैं, और जो मंदिर की कला को जानते हैं, हम उनसे पूछे तो मालूम पड़ेगा कि मंदिर की हर चीज फिर चाहे वह मंदिर का गुम्बज हो, चाहे मंदिर के छोटे-छोटे कलात्मक खिड़की-दरवाजे हों, चाहे मंदिर के प्रवेश-द्वार पर लगे हुए विशाल घंटे हों, या कि भगवान के सम्मुख समर्पित किये जाने वाले, दीप धूप और अष्ट द्रव्य हों सबका संबंध कलात्मकता और गहरी वैज्ञानिक सूझबूझ से है।

गुम्बज से टकराकर गूंजती ओंकार ध्वनि, घंटे का धीमा-धीमा नाद, अभिषेक और पूजा के भाव-भीने स्वर सभी में वातावरण को पवित्र बनाने की सामर्थ्य छिपी है। सवाल यह है कि कौन कितना पा पाता है। कौन मंदिर में प्रवेश पाकर अपने आत्म प्रवेश का द्वार खोल पाता है।

मंदिर में विराजे भगवान की वीतराग छवि को देखकर अपने रागद्वेष के बंधन को क्षणभर के लिए छिन्न-भिन्न कर देना और अहंकार को गलाकर अपने आत्म-स्वरूप में लीन होने के लिए स्वयं को भगवान के चरणों में समर्पित करते जाना ही "जिन मंदिर" की उपलब्धि है।

अपन मंदिर चलें। पहले नहा धो लें। साफ सुथरे और सादे कपड़े पहन लें। असल में पवित्रता, सादगी और सीधापन, मंदिर जाने से पहले कुछ हद तक हममें आ जानी चाहिये। दर्शन तभी संभव है और मंदिर पहुंचने से पहले कोई और काम अपन न करें। निष्काम होने निकले

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं, तो सब कामों से मुक्त होना जरूरी है। सारा रास्ता भगवान के दर्शन की प्यास के साथ गुजरे, उनके गीत गाते हुए गुजरे। ऐसा लगे मानो आज अपने किस अत्यंत प्रिय अभिन्न सखा से मिलने जा रहे हैं। अपना सब कुछ समर्पित करने जा रहे हैं। हाथ श्रेष्ठ चावलों से भरे हैं और हृदय गहरे समर्पण से भरा है। मंदिर के द्वार पहुंच कर अपन पहले पैर धो लें, मन का व्यर्थ बोझ उतारकर रख दें। और अनुभव करें कि अनाहत गूंजती दिव्य ध्वनि से व्याप्त श्री भगवान के समवशरण में प्रवेश के क्षण आ गये हैं। बाहर दालान में लगे घंटे की धीमी-धीमी ध्वनि सुनकर मन शान्त पवित्र हो गया है। मानों बाहर का सारा कोलाहल यही छूट गया है। अब तो प्राणों में एक ही आवाज गूंज रही है - ओम् जय जय जय, नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु —

रोम-रोम आनंद से भरकर सिहर उठा है। श्री भगवान को सम्मुख पाकर हम श्रद्धा से झुकते चले जा रहे हैं। जमीन से माथा टेककर यह पहला प्रणाम निवेदित करें। फिर संभलकर खड़े होकर श्री भगवान की वीतराग छवि को अपलक देखते-देखते एक तान होकर अंतस् वीणा पर जो स्वर गूंजे उन्हें ही शब्दों का रूप देते चले जायें। वाणी से आपो-आप भगवान का स्तवन फूट पड़े। हम पुनः उनके श्री चरणों में माथा टेककर अहं को विसर्जित करने के लिए दूसरा प्रणाम निवेदित करें। अपने साथ लाये चावलों से भरी अंजुलि खोलकर अपना सर्वस्व समर्पित कर दें। ये चावल प्रतीक हैं कि हमारा जीवन भी इन्हीं की तरह उज्जवल, अखंड और आवरण से रहित हो सके। हम जन्म-मरण से मुक्त हो सकें। अब पुनः संभलकर खड़े होकर देह के प्रति ममत्व त्यागकर हम नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें और भगवान के चरणों में झुककर तीसरा प्रणाम निवेदित करें।

दर्शन की यह समग्र प्रक्रिया भावात्मक है। शेष वेदिकाओं पर भी ऐसे ही तीन भावात्मक प्रणाम निवेदित करें। यथासंभव, हर वेदिका पर कम से कम मन-वचन-काय तीनों को प्रभुमय करते हुए उनके गुणों की प्राप्ति के लिए एक प्रणाम जरुर निवेदित करें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिन दर्शन हमारी समग्र चेतना को रुपान्तरित करने का अनोखा रसायन है। भाव-दशा को निर्मल बनाने का कीमिया है।

जिन-पूजा :

जिन-अभिषेक और जिनपूजा, मंदिर की आध्यात्मिक प्रयोगशाला के दो जीवन्त प्रयोग है। भगवान की भव्य प्रतिमा को निमित्त बनाकर उनके जलाभिषेक से स्वयं को परमपद में अभिषिक्त करना अभिषेक का प्रमुख उद्देश्य है। पूजा जिन-अभिषेक पूर्वक ही संपन्न होती है। ऐसा हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा श्रावक को उपदेश दिया गया है।

पूजा के प्रारंभ में किन्हीं भी तीर्थकर की प्रतिमा के सामने पीले चावलों द्वारा भगवान के स्वरुप को दृष्टि के समक्ष लाने का प्रयास करना आव्हान् है। उनके स्वरूप को हृदय में विराजना स्थापना है और हृदय में विराजे भगवान के स्वरुप के साथ एकाकार होना सन्निधिकरण है।

द्रव्य पूजा का अर्थ सिर्फ इतना नहीं है कि अष्ट द्रव्य अर्पित कर दिये और न ही भाव-पूजा का यह अर्थ है कि पुस्तक में लिखी पूजा को पढ़ लिया। पूजा तो गहरी आत्मीयता के क्षण हैं। वीतरागता से अनुराग और गहरी तल्लीनता के साथ श्रेष्ठ द्रव्यों को समर्पित करना व अपने अहंकार और ममत्व भाव को विसर्जित करते जाना ही सच्ची पूजा है।

साधुजन निष्परिग्रही हैं इसलिए उनके द्वारा की जाने वाली पूजा/भक्ति में बाह्य द्रव्य का आलम्बन नहीं होता लेकिन परिग्रही गृहस्थ के लिए परिग्रह के प्रति ममत्व-भाव के परित्याग के प्रतीक रूप बाह्य श्रेष्ठ अष्ट द्रव्य विसर्जन अनिवार्य है।

पूजा हमारी आन्तरिक पवित्रता के लिए है। इसलिए पूजा के क्षणों में और पूजा के उपरान्त सारे दिन पवित्रता बनी रहे, ऐसी कोशिश हमारी होनी चाहिए। पूजा और अभिषेक जिनत्व के अत्यन्त सामीप्य का एक अवसर है। इसलिए निरन्तर इन्द्रिय और मन को जीतने का प्रयास करना और नित्य के समीप पहुंचना हमारा कर्त्तव्य है।

पूजा, भगवान की सेवा है जिसका लक्ष्य आत्मा की प्राप्ति है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसलिए आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने पूजा को वैयावृत्य में शामिल किया है।

पूजा, अतिथि का स्वागत है। इसलिए आचार्य रविषेण स्वामी ने इसे अतिथिसंविभाग के अंतर्गत रखा है।

पूजा, गहरी तल्लीनता और आत्मोपलब्धि में कारण बनती है। इसलिए उपासकाध्ययन में आचार्य ने इसे सामयिक व्रत में रखा है।

पूजा, ध्यान भी है। तभी तो भावसंग्रह में आचार्य ने इसे पदस्थ ध्यान में शामिल किया है।

पूजा, आत्मान्वेषण की प्रक्रिया है। इसे स्वाध्याय भी कहा है। जिन पूजा से लाभान्वित होने में हमें कसर नहीं रखनी चाहिये। पूरा लाभ लेने की भरसक कोशिश करनी चाहिए।

पूजा के आठ द्रव्य अहं के विसर्जन और हमारे आत्म विकास की भावना के प्रतीक हैं। मानिये, ये अपनी तरफ आने के आठ कदम हैं।

भगवान के श्री चरणों में जल अर्पित करके हमें जन्म-मरण से मुक्त होने की भावना रखनी चाहिये। जल को ज्ञान का प्रतीक माना गया है और अज्ञानता को जन्म मरण का कारण माना है। इसलिये ज्ञान रुपी जल हमें जन्म-मरण से मुक्त कराने में सहायक बनता है।

साथ ही जल हमें यह संदेश देता है कि हम उसकी तरह सभी के साथ घुलमिल कर जीना सीखें। जल की तरह तरल, सरल और निर्मल होना भी सीखें।

चन्दन अर्पित करते हुए हमें भावना रखनी चाहिये कि हमारा भवआताप मिटे। चंदन शीतलता का प्रतीक है और भव-भव की तपन का कारण हमारी आत्मदर्शन से विमुखता है। इसलिए आत्मदर्शन में सहायक भगवान के दर्शन और उनकी वाणी रूपी शीतल चन्दन के द्वारा हम अपना भव-आताप मिटाने का प्रयास करें।

चंदन हमें यह संदेश भी देता है कि हम उसकी तरह सभी के प्रति शीतलता और सौहाद्र से भरकर जियें। सभी की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानकर सभी को सहानुभूति दें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्षत का अर्पण हम अखंड अविनाशी सुख पाने की भावना से करें। चॉवल या अक्षत की अखंडता और उज्ज्वलता हमारेजीवन में अविनश्वर और उज्ज्वल सुख का अहसास कराये।

हम कर्म जनित, दुखमिश्रित और नश्वर सांसारिक सुख पाकर गाफिल न हों। समत्व रखें। जीवन और जगत को उसकी समग्रता में देखें और जियें। यही संदेश हम चॉवल अक्षत से लें।

पुष्प अर्पित करते समय हमें काम-वासना से मुक्त होने की भावना रखनी चाहिये। असल में, पुष्प को काम-वासना का प्रतीक माना गया है। उसे कामशर भी कहा गया है। वह हमें मोहित करता है। इसलिए काम, क्रोध और मोह पर विजय पाने वाले आप्तकाम भगवान जिनेन्द्र के श्री चरणों में पुष्प चढ़ाना स्वयं को मोह मुक्त करने का प्रयास है।

पुष्प हमें यह संदेश भी देता है कि उसका जीवन दो दिन का है, फिर उसे मुरझा जाना है, टूटकर गिर जाना है। हमारा जीवन भी दो दिन का ही है। फिर यह देह टूटकर गिर जायेगी। यदि दो दिन के जीवन को शरीरगत क्षणिक काम वासनाओं में गवॉ देंगे तो मुरझाने और टूटकर गिरने के सिवाय हमारे हाथ में कुछ नहीं आयेगा। इसलिये समय रहते स्पर्श, रस, गंध और रंग की सभी वासनाओं से मुक्त होने का प्रयास करें और स्वभाव में रमने की कोशिश करें।

नैवेद्य अर्पित करते हुए हमें यह भावना रखनी चाहिये कि हमारी भव-भव की भूख मिट जाये। जीवन के लिए अन्न आवश्यक है। अन्न को लोक व्यवहार में प्राण भी माना गया है। वह अन्न/नैवेद्य क्षणभर के लिये भूख मिटाता भी है पर कोई शाश्वत समाधान नहीं मिल पाता। तृष्णा की पूर्ति संभव भी नहीं है। इसलिए यह नैवेद्य भगवान के चरणों में अर्पित करके उनकी भक्ति से हम अपनी भव-भव की भूख मिटाने का भाव करते हैं।

नैवेद्य से यह संदेश भी हम लें कि खाद्य पदार्थों के प्रति आसक्ति कम करना और उसे योग्य पात्र को दे देना ही श्रेयस्कर है। हम अपने पास-पड़ोस में आहार के अभाव में पीड़ित सभी प्राणियों को करुणापूर्वक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समय-समय पर आहार सामग्री देते रहें।

दीप अर्पित करते समय हमारी भावना मोह के सघन अंधकार से निकलकर आत्म-प्रकाश में पहुंचने की हो। दीप प्रतीक है, प्रकाश का। वह बाह्य स्थूल पदार्थों को प्रकाशित करता है। इसे हम अपने आन्तरिक सूक्ष्म जगत को पाने के लिये माध्यम बनाये। कैवल्य ज्योति पाने का प्रयास करें।

दीप स्वपर प्रकाशक है। हम उससे स्वयं को स्वपर प्रकाशी बनाने का संदेश लें। जहाँ भी रहें वहाँ रोशनी बिखेरें। हमारे इस शरीर रूपी माटी के दीये में प्राणी मात्र के प्रति स्नेह कभी कम न हो और भगवान के नाम की लौं निरन्तर जलती रहे। हम एक ऐसे अद्वितीय दीप को पाने की भावना रखें जो बिना बाती, तेल और धुएं के भी सारे जगत् को प्रकाशित करता है, जिसे प्रलय की पवन भी बुझा नहीं पाती।

धूप अर्पित करते हुए हमारी भावना अपने समस्त कर्मों को नष्ट करने की हो। जैसे अग्नि में धूप जलकर नष्ट होती जाती है और हवाओं में खुशबू भरती जाती है ऐसे ही तप की अग्नि में हमारे सारे कर्म जलते जाये और आत्म-सुरभि सब ओर फैलती जाये।

जलती हुई धूप से हम एक संदेश और लें कि धूप की सुगंध जैसे अमीर-गरीब या छोटे-बड़े का भेद नहीं करती और सभी के पास समान भाव से पहुँची है, ऐसे ही हम भी अपने जीवन में भेदभाव छोड़कर सर्वप्रेम और सर्वमैत्री की सुगंध फैलाते रहें।

फल अर्पित करें इस भावना से कि हमें मोक्षफल प्राप्त हो। हमें जानना चाहिये कि संसार में सिवाय कर्म फल भोगने के हम कुछ और नहीं कर पा रहे हैं। यह हमारी कमजोरी है। अपने अनंतबल को हम प्रकट करें और मोक्षफल पायें। मानें कि मोक्षफल पाये बिना जीवन निष्फल है।

साथ ही फल चढ़ाकर एक संदेश और हम लें कि सांसारिक फल की आकांक्षा व्यर्थ है क्योंकि वह कर्माश्रित है। यदि हमने अच्छा काम किया है तो अच्छा फल हमारे चाहे बिना ही मिलेगा और बुरा काम किया है तो चाहकर भी अच्छा फल नहीं मिलेगा। तब हम जो भी करें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अच्छा ही करें और अनासक्त भाव से कर्तव्यमान कर करें। कर्तव्य के अहंकार से मुक्त रहें।

अष्ट द्रव्यों की समष्टि ही अर्घ्य है। अर्घ्य का अर्थ मूल्यवान भी होता है। तब अर्घ्य अर्पित करके हमारी भावना अनर्घ्य यानी अमूल्य को पाने की रहे। आत्मोपलब्धि ही अमूल्य है वही हमारा प्राप्तव्य है। उसे ही पाने के लिए हमारे प्रयास हों।

अर्घ्य से यह संदेश भी हमें लेना चाहिये कि यहां जिन चीजों को हमने मूल्य दिया है, वास्तव में वे सभी शाश्वत और मूल्यवान नहीं है। सब कुछ पा लेने के बाद भी जिसे बिना पाये सब व्यर्थ हो जाता है और जिसे एक बार पा लेने के बाद कुछ और पाना शेष नहीं रह जाता, ऐसी अमूल्य निधि हमारी परमात्मदशा ही है। हमारी विनम्र कोशिश स्वयं को भगवान के चरणों में समर्पित करके अविनश्वर परमात्म-पद पाने की होनी चाहिये।

'भक्ति-पाठों के अन्त में "ण्हाणेण" पाठ से यह ध्वनित होता है कि अभिषेक पूर्वक पूजा होकर पूजा के अंत में भी जैसा कि पूजा-विधान के अंत में किया करते हैं, अभिषेक किया जाता है। "तिलोयपण्णत्ती" आदि प्राचीन महान ग्रन्थों से भी सिद्ध होता है कि गंगा के कुंड के नीचे ऋषभ देव की प्रतिमा है जिस पर सदैव जलाभिषेक होता रहता है।"

— पं. नाथूराम जी शास्त्री

विवेक

पात्र से प्रार्थना हो, पर अतिरेक नहीं
इस समय सब कुछ भूल सकते हैं, पर विवेक नहीं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जयवन्त-जिनालय

जय, जय, जय, जयवन्त जिनालय, नाश रहित हैं शाश्वत हैं।
जिनमें जिन महिमा से मण्डित, जैन बिम्ब हैं भास्वत हैं।।
सुरपति के मुकुटों की मणियाँ, झिलमिल झिलमिल करतीं हैं।
जिनबिम्बों के चरण कमल को धोतीं हैं मन हरती हैं।।1।।

सदा सदा से सहज रूप से, शुचितम प्राकृत छवि वाले।
रहें जिनालय धरती पर ये, श्रमणों की संस्कृति धारे।।
तीनों संध्याओं में इनको, तन से, मन से : वचनों से।
नमन करूँ, धोऊँ अघ रज को, छूटूँ भव वन भ्रमणों से।।2।।

जयवन्त-जिनवाणी

जय जय देव तुम्हारे मुख से, निःसृत शीतल जो वाणी।
जग जन मन के मल को धोती, अतः कहाती जिनवाणी।।
जयवन्तो माँ ! जग में तब तक, जब तक सूरज चांद रहे।
शीश नवाते कर्म हरो माँ ! अब तक हम विषयान्ध रहे।।3।।

जयवन्त-गुरुवर

जय, जय, जय, जयवन्त गुरुवर, दृढ़व्रत के जो आगर हैं।
मृदुभाषी ऋजु-विशाल हृदयी, प्रशान्त रस के सागर हैं।।
उज्ज्वलतम आदर्श है जिनका, निर्णय जिनके अटल रहें।
नमन नमन है पूर्ण लक्ष्य को, पाने हेतु अचल रहे।।4।।

दोहा

सारे सागर क्षार है, मम गुरु मधुर अपार ।
नमूँ विद्यासागर गहूँ, भव सागर कर पार ।।
तरणि विद्यासागर गुरो ! तारो मुझे ऋषीष ।
करुणाकर करुणा करो, कर से दो आशीष ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनेन्द्र स्तवन

वृषभनाथ स्तवन

पर से बोधित नहीं हुए पर' स्वयं आप ही बोधित हो।
समकित-संपत्ति ज्ञान नेत्र पा. जग में जन हित शोभित हो।।
विमोह-तम को हरते तुम प्रभु, निज-गुण-गण से विलसित हो।
जिस विध शाशि तम हरता शुचितम, किरणावलि ले विकसित हो।।1।।

जोवन इच्छुक प्रजाजनों को, जीवन जीना सिखा दिया।
असि, मषि कृषि आदिक कर्मों को, प्रजापाल हो दिखा दिया।।
तत्त्व ज्ञान से भरित हुए फिर, बुध जन में तुम प्रमुख हुए।
सु-पति को भी अलभ्य सुख था *विषय* -सौख्य से विमुख हुए।।2।।

सागर तक फैली धरती को, मन-वच-तन से त्याग दिया।
सुनन्द-नन्दा वनिता तजकर(आतम में अनुराग किया।।
आतम-जेता मुमुक्षु बनकर, परीषहों को सहन किया।
इक्ष्वाकु-कुल- आदिम प्रभुवर, अविचल मुनिपन वहन किया।।3।।

समाधि-मय आंत प्रखर अनल को, निज उर में जब जनम दिया।
दोष-मूल अघ घाति कर्म को, निर्दय होकर भस्म किया।।
शिव-सुख वांछक भविजन को फिर, परम तत्त्व का बोध दिया।
परम-ब्रह्म-मय-अमृत पान कर तुमने निज घर शोध लिया।।4।।

विश्व-विज्ञ हो विश्व-सुलोचन, बुध जन से नित वंदित हो।
पूरण-विद्या भय तन धारक, बने निरंजन नंदित हो।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीते छुट-पुट वादी-शासन, अनेकान्त के शासक हो।
नाभि-नन्द हे! वृषभ जिनेश्वर मम-मन-मल के नाशक हो।।5।।

दोहा

आदिम तीर्थंकर प्रभो, आदिनाथ मुनिनाथ!
आधि व्याधि अद्य मद मिटे, तुम पद में मम माथ।।1।।
वृष का होता अर्थ है, दयामयी शुभ धर्म।
वृष से तुम भरपूर हो, वृष से मिटते कर्म।।2।।
दीनों के दुर्दिन मिटे, तम दिनकर को देख।
सोया जीवन जागता, मिटता अघ अविवेक।।3।।
शरण, चरण हैं आपके तारण-तरण जहाज।
भव दधि तट तक ले चलो. करूणाकर जिनराज।।4।।

"उपासना कोई परिधान नहीं है, जिसे सुबह शाम आरती के समय पहन लिया जाए और फिर तहकर अलमारी में रख दिया जाए मंदिर में जाकर मनुष्य प्रहलाद से भी अधिक भक्त बन जाए और दुकान दफ्तर घर या कार्यक्षेत्र में आकर हिरण्यकश्यप से अधिक निर्दय। नृशंस बन जाए, क्या इसे भक्ति और उपासना कहा जाएगा? उपासना जीवन का वह संस्कार है, जिससे जीवन शैली में परिष्कार होता है। और सोच में बदलाव आता है, जहाँ उपासना के नाम पर स्वार्थ चलता है, वहाँ उपासना जहर का काम करती है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अजितनाथ-स्तवन

बन्धु-वर्ग तो खेल-कूद में भी विजयी तब मस्त रहा।
अजेय-बनकर अमेय बल पा मुदित मुखी बन स्वस्थ रहा।
यह सब प्रभाव मात्र आपका दिवि से आ जब जन्म लिया।
"अजित"-नाम तब सार्थक रख तब परिजन सार्थक जन्म किया।।1।।

अजेय शासन के शासक थे अनेकान्त के पोषक थे।
भविजन हित-सत पथदर्शक थे अजित नाथ! जग-तोषक थे।।
वांछित-शिव-सुख, मंगल पाने मुमुक्षु जन अविराम यहाँ।
आज! अभी भी लेते जिन का परम सुपावन नाम महा।।2।।

भवि-जन का सब पाप मिटे बस यही भाव ले उदित हुए।
मुनि नायक प्रभु समुचित बल ले घाति-घात कर मुदित हुए।।
मेघ-घटा बिन नभ-मंडल में दिनकर जिस विध पूर्ण उगा।
कमल-दलों को खुला-खिलाता, अन्धकार को पूर्ण भगा।।3।।

चन्दन-सम शीतल जल से जो भरा लबालब लहराता।
तपन ताप से तपा मत्त गज उस सर में ज्यों सुख पाता।।
धर्म-तीर्थ तब परम-श्रेष्ठ शुचि जिसमें अवगाहन करते।
काम-दाह से दग्ध दुखी जन पल में सुख पावन वरते।।4।।

शत्रु मित्र में समता धरकर परम ब्रह्म में रमण किया।
आत्म-ज्ञान-मय सुधा-पान कर कषाय-मल का वमन किया।।
आतम-जेता अजित-नाथ हो चेतन-श्री का वरण किया।
जिन-पद-संपद-प्रदान कर दो तुम-पद में "यह" नमन किया।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

हार-जीत के हो परे, हो अपने में आप।
विहार करते, अजित हो, यथा नाम गुण छाप।।

पुण्य पुंज हो पर नहीं, पुण्य फलों में लीन।
पर पर पामर भ्रमित हो, पल-पल पर-आधीन।।

जित इन्द्रिय जित मद बनि जितभव विजित कषाय।
अजितनाथ को नित नमूँ, अर्जित दुरित पलाय।।

कोंपल पल-पल कों पले, वन में ऋतु-पति आय।
पुलकित मम जीवन-लता, मन में जिनपद पाय।।

संभवनाथ-स्तवन

ऐहिक सुख-तृष्णामय रोगों से जो पीड़ित जग जन हैं।
उन्हें निरोगी पूर्ण बनाने वैद्य रहे शंभव जिन हैं।।
प्रति-फल की पर वाँछा कुछ नहिं बिना-स्वार्थ परहित रत हैं।
वैद्य लोग ज्यों रोग मिटाते दया-भाव से परिणत हैं।।1।।

अहंकार-मय विभाव भावों मिथ्या-मल से रंजित है।
क्षणिक रहा है त्राण-हीन है जगत रहा सुख वंचित है।।
जनन-मनन से जरा रोग से पीड़ित दुःखित विकल अहा!
उसे किया जिन निरंजना-मय शान्ति पिला कर सबल महा।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बिजली-सम पलजीवी चंचल इन्द्रिय-सुख है तनिक रहा।
तृष्णा-मय-मारी के पोषण का कारण है क्षणिक रहा।।
तृष्णा की वह वृद्धि, निरंतर उपजाती है ताप निरा।
ताप जगत को पीड़ित करता जिन कहते तज पाप जरा।।3।।

बंध-मोक्ष क्या उनका कारण सुफल मोक्ष का कौन रहा?
बद्ध जीव औ मुक्त जीव सब जग में रहते कौन कहाँ?
ये सब वर्णन देव! तुम्हारे स्याद्-वाद मत में पाते।
एकान्ती-मत में ना, पाते शिव-पथ-नेता तुम तातैं।।4।।

पुण्य वर्धनी तुम स्तुति करने इन्द्र विज्ञ असमर्थ रहा।
किन्तु अज्ञ में स्तोत्र कार्य में उद्यत हूँ ना अर्थ रहा।
तदपि भक्तिवश तुम-पद-पंकज-स्तुति, अलि बन अनिवार्य किया।
शिव-सुख की कुछ गंध सुँघा दो आर्य देव! शुभ कार्य-किया।।5।।

दोहा

भव-भव भव वन भ्रमित हो, भ्रमता आज।
शंभव जिनभव शिव मिले, पूर्ण हुआ मम काज।।

क्षण-क्षण मिटते द्रव्य हैं, पर्यय-वश अविराम।
चिर से हैं, चिर ये रहें, स्वभाव-वश अभिराम।।

परमारथ का कथन यूँ, मथन किया स्वयमेव।
यतिपन पालें यतन से, नियमित यदि हो देव।।

तुम पद-पँकज से प्रभो, झर-झर झरी पराग।
जब तक शिव सुख ना मिले, पीऊँ षट्पद जाग।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अभिनन्दननाथ-स्तवन

क्षमा-सखी युत दया-वधू में सतत निरत हो नन्दन हो।
गुण-गण से अति परिवर्धित हो इसीलिए अभिनन्दन हो।।
"लक्ष" बना कर समाधि भर का समाधि पाने यमी बने।
बाहर-भीतर नग्न बने प्रभु ग्रन्थ तजे सब दमी बने।।1।।

निरे अचेतन तन-मन-धन हैं वचन बंधु-जन तनुज रहें।
हम इनके ये रहें हमारे इस विध जग के मनुज कहें।।
मोह-भूत के वशीभूत हो अस्थिर हो स्थिर समझे हैं।
तत्त्व-ज्ञान प्रभु उन्हें बताया उलझे जन-जन सुलझे हैं।।2।।

अशन-पान कर, क्षुधा तृषा से जनित दुःख के वारण से।
तन तन धारक नहिं ध्रुव बनते, क्षणिक विषय सुख पानन से।।
इसीलिए ये विषय सुखादिक किसी तरह नहिं गुणकारी।
इस विध इस जग को समझाया प्रभो आप गुणगणधारी।।3।।

यदपि दास बन विषयों का शठ लोलुपता से पूर रहा।
तदपि नृपादिक भय से परवश दुराचार से दूर रहा।।
इस पर भव में 'दुखद' विषय है इस विध जो जन यदि जाने।
किस विध विषयन में फिर रमते यही कहा प्रभु, बुध माने।।4।।

विषयों की वह विषय-वासना ताप बढ़ाती क्षण-क्षण है।
तृष्णा फलतः द्विगुणित, जिस सुख, से तोषित ना जड़ जन हैं।।
सदुपदेश यों देते जिससे निहित-लोक-हित तुम मत में।
अतः शरण हो सुधी जनों के मुनि गण के सब अभिमत में।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

गुण का अभिनन्दन करो, करो कर्म की हानि।
गुरु कहते गुण गौण हो, किस विध सुख हो प्राणि।।

चेतन वश तन शिव बने, शिव बिन तन शव होय।
शिव की पूजा बुध करें, जड़ जन शव पर रोय।।

विषयों को विष लख तजूँ, बनकर विषयातीत।
विषय बना ऋषि ईश को, गाऊँ उनका गीत।।

गुण धारे पर मद नहीं, मृदुतम हो नवनीत।
अभिनन्दन जिन! नित नमूँ मुनि बन मैं भवभीत।।

सुमतिनाथ-स्तवन

स्व पर तत्त्व का सही सुनिर्णय सुयुक्तियों से स्वतः लिया।
सुमति-नाथ मुनि 'सुमति' नाम को सार्थक तुमने अतः किया।।
शेषमतों में क्रिया-कर्म औ कारक कारण की विधियाँ।
चूँकि सही नहिं सभी सर्वथा एकान्तीपन की छवियाँ।।1।।

तुमसे स्वीकृत तत्त्व सही है अनेक भी है एक रहा।
पर्यय वश वह अनेक दिखता द्रव्य अपेक्षा एक रहा।।
एक उपचारी इनमें हो तो दूजा झूठा, इक लय से।
शेष मिटेगा अवाच्य जिससे तत्त्व बनेगा निश्चय से।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्त्व कथंचित् असत्त्व सत ही अपर अपेक्षा चहक रहा।
नभ में यदपि न पुष्प खिला पर, तरु पर खुल-खिल महक रहा।।
तत्त्व-सत्त्व औ असत्त्व बिन यदि, रहा, नहीं सम्मानित है।
तुम मत से प्रभु अन्य सभी मत, स्वीय वचन से बाधित हैं।।3।।

तत्त्व सर्वथा नित्य रहा जो मिटता-उगता नहीं कभी।
तथा क्रिया औ कारक विधियाँ उसमे बनती नहीं कभी।।
जनन असत का नहीं सर्वथा सत भी वह ना विनस रहा।
दीपक, खुद बुझ, सघन तिमिर वन, पुद्गल-पन से विहस रहा।।4।।

नास्तिपना और अस्तिपना है इष्ट कथंचित् यही सही।
वक्ता के कथनानुसार ये मुख्य-गौण हो कभी कहीं।।
तत्त्व-कथन की सही प्रणाली सुमति-नाथ प्रभु तव प्यारी।
स्तुति करती है तव, मम मंदा मति, अमंद हो सुख प्याली।।5।।

दोहा

बचूँ अहित से हित करूँ, पर न लगा हित हाथ।
अहित साथ ना छोड़ता, कष्ट सहूँ दिन-रात।।

बिगड़ी धरती सुधरती, मति से मिलता स्वर्ग।
चारों-गतियाँ बिगड़ती, पा अघ-मति संसर्ग।।

सुमतिनाथ प्रभु सुमति दो, मम मति है अतिमंद।
बोध कली खुल-खिल उठे, महक उठे मकरन्द।।

तुम जिन मेघ मयूर मैं, गरजो बरसो नाथ!।
चिर प्रतीक्षित हूँ खड़ा, ऊपर करके माथ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पद्मप्रभ-स्तवन

शुचिमय तन-चेतन लक्ष्मी से मंडित निज में निवस रहें।
लाल-लाल फल पलाश छवि से अहो-पद्मप्रभ! विलस रहे।।
लोकबन्धु हो भविक-कमल ये तुम दर्शन से खिलते हैं।
जिस विध सर में सरोज दल वे दिनकर को लख खुलते हैं।।1।।
अक्षय सुख-मय लक्ष्मी वर के दिव्य भारती पाय लसे।
पूर्णमुक्ति से पूर्ण प्रभो! तुम त्रयोदशी गुण माँय बसे।।
देव-रचित था समवसरण तव उसमें नहिं, अनुरक्त हुए।
दिव्य देशना त्याग अन्त में सर्वज्ञान युत मुक्त हुए।।2।।

नयन मनोहर किरणावलि छवि आप देह से उछल रही।
बाल भानु की द्युति सम भाती धरती छूने मचल रही।।
नर सुर से जो भरी सभा को ललित लाल अति करा रही।
पद्म राग-मय पर्वत जिस विध स्वीय-पार्श्व को विभामयी।।3।।

सहस्रदल वाले कमलों के मध्य आप चलने वाले।
चरण-कमल से नभ-तल को प्रभु पुलकित अति करने वाले।।
मत्त मदन का मद-मर्दन कर निर्मद जीवन बना लिया।।
विश्वशान्ति के लिए विश्व में विचरण इच्छा बिना किया।।4।।

तुम में हे! ऋषिवर गुण-गण का लहराता वह सिन्धु महा।
इन्द्र विज्ञ तव श्रुति करके भी पी न सका वह बिन्दु अहा!!
अज्ञ, सफल क्या? मैं हो सकता स्तुति करने जो उद्यत हूँ।
बाध्य मुझे भक्ति कराती तुम पद में तब अवनत हूँ।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

निरी छटा ले तुम छटें, तीर्थंकरों में आप।
निवास लक्ष्मी के बने, रहित ताप संताप।।

हीरा-मोती पद्म ना, चाहूँ तुमसे नाथ।
तुम सा तम-तामस मिटा, सुखमय बनूँ प्रभात।।

शुभ्र-सरल तुम, बाल-तव कुटिल कृष्ण-तम-नाग।
तव चिति चित्रित ज्ञेय से, किंतु न उसमें दाग।।

विराग पद्मप्रभु आपके, दोनों पाद-सराग।
रागी मम मन जा वहीं, पीता तभी पराग।।

सुपार्श्वनाथ-स्तवन

निज आतम में चिर स्थिर बसना भविक जनों का स्वार्थ यही।
भाँति-भाँति के क्षणभंगुर सब भोग कभी ये स्वार्थ नहीं।।
तृष्णा का वह अविरल बढ़ना ताप शान्ति के हेतु नहीं।
सुपार्श्व प्रभु का कथन यही है भवसागर का सेतु सही।।1।।

जंगम चालक जभी चलाता, स्थाणु, यंत्र तव चल पाता।
तथा जीव से तन चल पाता, जड़मय तन की यह गाथा।।
दुखद विनाशी रुधिरमांस मय, तन है इस विध बता दिया।
तन की ममता अतः वृथा है, शिव का तुमने पता दिया।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बाह्याभ्यंतर कारण द्वारा बनी हुई कृति जो दिखती।
होनहार सो हो कर रहती रोके वह नहिं रुक सकती।
बाहर कारण सब पाकर भी अहंकार से दुखित हुए।
सब कार्यों में विफल रहे शठ, प्रभु तुम कहते सुखित हुए।।3।।

मात्र मरण से भले भीति हो मोक्ष-धाम वह नहिं मिलता।
शिव की वांछा-भर से शिव नहिं मिलता जीवन नहिं खिलता।
मृत्यु-भीति से काम-चोर से ठगा हुआ जड़ अज्ञानी।
वृथा व्यथा है सहता फिर भी, तुमने कह दी यह वाणी।।4।।

धर्म-रत्न की गवेषणा में निरत जनों के नायक हो।
जननी-सम जड़ जन के हित प्रभु सदुपदेश के दायक हो।।
सकल विश्व के जड़-चेतन मय सकल तत्त्व के ज्ञायक हो।
इसीलिए मैं तव गुण-गण-का गीत गा रहा, गायक हो।।5।।

दोहा

यथा सुधाकर खुद सुधा-बरसाता, बिन स्वार्थ।
धर्मामृत बरसा दिया, मिटा जगत का आर्त।।

दाता देते दान हैं, बदले की ना चाह।
चाह-दाह से दूर हो, बड़े बड़ों की राह।।

अबंध भाते काट के, वसु विध विधि का बंध।
सुपार्श्व प्रभु निज प्रभुपना, पा पाये आनन्द।।

बाँध-बाँध विधि-बन्ध मैं, अन्ध बना मतिमन्द।
ऐसा बल दो अँध को, बन्धन तोड़ूँ द्वन्द्व।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चंद्रप्रभ-जिन-स्तवन

अपर चन्द्र हो अनुपम जग में, जगमग जगमग दमक रहे।
चन्द्रप्रभा सम नयन मनोहर गौरवर्ण से चमक रहे।
जीते निज के कषाय बंधन, बने प्रभु तभी जिनवर हो।
चन्द्रप्रभो ! मम नमन तुम्हें हो, सुरपति नमते ऋषिवर हो।।1।।

परम ध्यानमय दीपक उर में, जला आत्म को जगा दिया।
मोह-तिमिर को मानस तल से पूर्ण-रूप से भगा दिया।।
हे प्रभु! तव तन की श्रीछवि से, बाह्य सघन तम दूर भगा।
दिनकर को लख, तम ज्यों भगता पूरब में द्युति पूर उगा।।2।।

पूरे भीगे कपोल जिनके, मद से गज़ गण मद-धारे।
सिंह गर्जना सुनते-डरते, बनते ज्यों निर्मद सारे।।
निज मत स्थिति से पूर्व मत्त हो, प्रतिवादी त्यों अभिमानी।
स्याद्वाद तव सिंहनाद सुन, बनते वे पानी-पानी।।3।।

तपः साधना अद्भुत करके, हित-उपदेशक आप्त हुए।
परम इष्ट पद को तुम प्रभुवर, त्रिभुवन में जब प्राप्त हुए।।
अनन्त सुख के धाम बने हो, विश्व विज्ञ अविनश्वर हो।
जग-दुख-नाशक शासक के ही, शासक तारक-ईश्वर हो।।4।।

भगवन तुम शशि, भव्य कुमुद ये, खिलते हैं दृग खोल रहे।
राग-रोष मय मेघ तुम्हारे, चेतन में नहिं डोल रहे।।
स्याद्वाद् मय विशद् वचन की मणिमय माला पहने हो।
परमपूत हो-पावन कर दो, मम मन-वश में रहने दो।।5

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

सहन कहाँ तक अब करूँ, मोह मारता डंक।
दे दो इसको शरण ज्यों, माता सुत को अंक।।1।।
कौन पूजता मूल्य क्या, शून्य रहा बिन अंक।
आप अंक हैं शून्य मैं प्राण फूँक दो शंख।।2।।
चन्द्र कलंकित किंतु हो, चन्द्रप्रभु अकलंक।
वह तो शंकित केतु से, शंकर तुम निःशंक।।3।।
रंक बना हूँ मम अतः, मेटो मन का पंक।
जाप जपूँ जिन नाम का, बैठ सदा पर्यंक।।4।।

खोज

अकेला ही तब था, अकेला ही अब हूँ
मिला हूँ अनेकों से, जुदा एक से हूँ
किसे खोजता था मिला कौन मुझको
जहाँ गूंजता था मिला मौन मुझको
किसी को पुकारा निकट आया कोई
किसी को पुकारा रहा दूर वो ही
बहारों को सींचा, न फूल न कली है
कली खोजने में मिली वे कली है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुष्पदंत-स्तवन

विरोध एकान्ती का करता तर्कादिक से सिद्ध सही।
तदतत्-स्वभाव धारक यानी मुख्य-गौण हो कहीं-कहीं।।
सुविधि नाथ प्रभु आत्मज्योति से तत्त्व प्ररूपित सही किया।
तुम मत से विपरीत मतों ने जिसका स्वाद न कभी लिया।।1।।

स्वभाव-वश औ अन्यभाव-वश तत्त्व रहा वह नहीं रहा।
क्योंकि कथंचित् उसी तरह ही प्रतीत होता सही रहा।।
निषेध-विधि में कभी सर्वथा अनन्यपन या अन्यपना।
होते नहिं हैं जिन मत गाता तत्त्व अन्यथा शून्य बना।।2।।

"वही रहा यह" प्रतीत इसविध तत्त्व अतः यह नित्य रहा।
अन्य रूप ही झलक रहा है इसीलिए नहिं नित्य रहा।।
बाहर-भीतर के कारण औ कार्य-योग वश, तत्त्व वही।
नित्यानित्यात्मक संगत है तव मत का यह सत्त्व सही।।3।।

एक द्रव्य वश अनेक गुण वश वाच्य रहा वह वाचक का।
"वन है तरु है" इस विध कहते भाव विदित ज्यों गायक का।।
सर्व धर्म के कथन चाहते गौणपक्ष पर नहिं माने।
एकान्ती मत कहते उनको स्याद्-पद दुखकर, बुध जाने।।4।।

गौण-मुख्य मय अर्थ-युक्त तव दिव्य वाक्य है सुख-कारी।
यदपि तदपि तुम मत से चिढ़ते उनको निश्चित दुखकारी।।
साधु राज है चरण-कमल तव सुर-नर-पति से वंदित हैं।
अतः मुझे भी वन्दनीय हैं सुरभित-सौम्य-सुगंधित हैं।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

सुविध सुविधि के पूर हो, विधि से हो अति दूर।
मम मन से मत दूर हो, विनती हो मंजूर।।

किस वन की मूली रहा मैं, तुम गगन विशाल।
दरिया में खसखस रहा, दरिया मौन निहार।।

फिर किस विध निरखूँ तुम्हें, नयन करुँ विस्फार।
नाचूं गाऊँ ताल दूँ, किस भाषा में ढाल।।

बाल मात्र भी ज्ञान ना, मुझ में मैं मुनि बाल।
बवाल भव का मम मिटे, प्रभु पद में मम भाल।।

शीतलनाथ-स्तवन

ना तो मलयाचल चंदन औ चन्द्र चान्दनी शीतल है।
शीतल गंगा का भी जल नहिं मणिमय माला शीतल है।।
हे मुनिवर तव वचन-किरन में प्रशम भाव-मय नीर भरा।
शीतलतम है, बुधजन जिसका सेवन करते पीर हरा।।1।।

विषय-सौख्य की चाह-दाह से क्लान्त किया था तप्त किया।
निज के मन को ज्ञान-नीर से शान्त किया तुम तृप्त किया।।
वैद्य-राज ज्यों मंत्र-शक्ति से जहर शक्ति को हरता है।
जहर-दाह से मूर्च्छित निज के तन को सुशान्त करता है।।2।।

जीवन की औ काम सौख्य की तृष्णा के जो नौकर हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
जड़ जन दिन भर श्रम कर थक कर रात बिताते सो कर हैं।
शुचि-तम निज आतम में तुम तो निशि-दिन निश्चल जाग रहे।
यही आर्य ! अनिवार्य कार्य तव, प्रमाद रिपु-सम त्याग रहे।।3।।

सुर-सुख की, सुत-धन की, धन की तृष्णा जिनके मन में है।
ऐसे ही कुछ जड़ जन, तापस, बन तप तपते वन में हैं।।
किन्तु, जनन-मृति-जरा मिटाने समधी बन यम धार लिया।
मन वच तन की क्रिया मिटा दी, तुमने भव-दधि पार किया।।4।।

धवलित केवलज्ञान-ज्योति हो जन्म-रहित दुख सर्व हरें।
आप कहाँ ये अन्य कहाँ जड़ अल्प ज्ञान ले गर्व करें।।
शिव-सुख के अभिलाषी बुधजन अतः सदा तव गुण गाते।
शीतल प्रभु मुझ शीतल कर दो तुम्हें भजे मम मन तातैं।।5।।

दोहा

चिन्ता छूती कब तुम्हें, चिंतन से भी दूर!
अधिगम में गहरे गये, अव्यय सुख के पूर।।

युगों-युगों से युग बना, विघन-अघों का गेह।
युग दृष्टा युग में रहें, पर ना अघ से नेह।।

शीतल चंदन है नहीं, शीतल हिम ना नीर।
शीतल जिन! तव मत रहा, शीतल, हरता पीर।।

सुचिर-काल से मैं रहा, मोह-नींद से सुप्त।
मुझे जगा कर, कर कृपा, प्रभो करो परितृप्त।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रेयोनाथ-स्तवन

दोष-रहित, शुभ वचन सुधारो श्रेयन्! जिन! अघ गला दिया।
हित पथ दर्शित कर हित पंथ पर हितैषियों को चला दिया।।
एक अकेले विलसित हो तुम त्रिभुवन में ज्यों उदित हुआ।
मेघ-रहित इस विशाल नभ में रवि लसता, जग मुदित हुआ।।1।।

अस्तिपना जो नास्तिपना मय प्रमाण का वह विषय बना।
अस्ति-नास्तिपन में इक होता गौण एक तो प्रमुख बना।।
प्रमुख बना या, जिसको उसके नियमन का नय हेतु रहा।
दृष्टान्तन का रहा समर्थक जिन दर्शन का केतु रहा।।2।।

प्रासंगिक जो मुख्य कहाता तव मत कहता पुण्य मही।
प्रासंगिक जो नहीं रहा सो गौण भले पर शून्य नहीं।।
मित्र कथंचित् शत्रुमित्र हो किसी अपेक्षा अनुभय हो।
सगुण गुणी अस्तिनास्ति वश वस्तु कार्य में सक्रिय हो।।3।।

समुचित है दृष्टान्त जभी से लोक सिद्ध वह मिल जाता।
वादी-प्रतिवादी का झगड़ा स्वयं शीघ्र तब मिट जाता।।
मतैकान्त का पोषक तव मत में मिलता दृष्टान्त नहीं।
साध्य-हेतु दृष्टान्तन में मत चूँकि श्रेष्ठ नैकान्त सही।।4।।

स्याद्-वाद मय रामबाण से रगरग जिसको छेद दिया।
एकान्ती मत का मस्तक प्रभु पूर्ण रूप से भेद दिया।।
लाभ लिया कैवल्य विभव का मोह-शत्रु का नाश किया।
अतः बने अरहन्त तभी मम मन तुम पद में वास किया।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

राग-द्वेष औ मोह ये, होते कारण तीन।
तीन-लोक में भ्रमित यह, दीन-हीन अघ-लीन।।

निजक्या,परक्या,स्व-परक्या,भला-बुरा बिन-बोध।
जिजीविषा ले खोजता सुख, ढोता तन बोझ।।

अनेकान्त की कान्ति से, हटा तिमिर एकान्त।
नितान्त हर्षित कर दिया, क्लान्त विश्व को शान्त।।

निःश्रेयस् सुखधाम हो, हे जिनवर! श्रेयांस।
तव थुति अविरल मैं करुँ, जब लौं घट में श्वाँस।।

वासुपूज्यनाथ-स्तवन

मंगल कारक गर्भ जन्म मय कल्याणों में पूज्य हुए।
वासुपूज्य प्रभु शत इन्द्रों से तुम पद-पंकज पूज्य हुए।।
हे मुनि-नायक लघु धी मैं हूँ मेरे भी अब पूज्य बने।
पूजा क्या नहिं दीपक से हो रवि की जो द्युति-पुंज तने।।1।।

बीतराग जिन बने तुम्हें अब पूजन से क्या अर्थ रहा?
बैरी कोई रहे न तब फिर निंदक भी अब व्यर्थ रहा।।
फिर भी तब गुण-गण-स्मृति से प्रभु परम लाभ है वह मिलता।
निर्मलतम जीवन है बनता मम मन-मल सब यह घुलता।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
पूजन पूजक पूज्य प्रभो! जिन तब जब करता भव्य यहाँ।
अल्प पाप तब पाता फिर भी पाता पावन मुख्य महा।।
किन्तु पाप वह ताप नहीं है घटना-भर अनिवार्य रही।
सुधा-सिन्धु में विष-कण करता बाधक का कब कार्य कहीं।।3।।

उपादानमय मूल हेतु का बाह्य द्रव्य ले सहकारी।
श्रावक जब तव पूजन करता पाप-पुण्य का अधिकारी।।
किन्तु साधु जब पूजन करते संग-रहित ही जो रहते।
पुण्य-पाप में भाव शुभाशुभ केवल कारण, जिन कहते।।4।।

बाह्याभ्यन्तर हेतु परस्पर यथायोग्य ये मिले सही।
तभी कार्य सब जग के बनते द्रव्य धर्म बस दिखे यही।।
मोक्ष कार्य में यही व्यवस्था पर इससे विपरीत नहीं।
अतः वन्द्य तुम बुध जन से ऋषि-पति हो, कहता गीत सही।।5।।

दोहा

औ न दया बिन धर्म ना, कर्म कटे बिन-धर्म।
धर्म मर्म तुम समझकर, कर लो अपना कर्म।।

वासुपूज्य जिनदेव ने, देकर यूँ उपदेश।
सबको उपकृत कर दिया, शिव में किया प्रवेश।।

वसुविध मंगल द्रव्य ले, जिन पूजो सागार।
पाप-घटे फलतः फले, पावन पुण्य अपार।।

बिना द्रव्य शुचि-भाव से, जिन पूजो मुनि लोग।
बिन निज शुभ-उपयोग के, शुद्ध न हो उपयोग।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विमलनाथ-स्तवन

तत्त्व नित्य या क्षणिक सर्वथा इत्यादिक जो नय गाते।
कलह परस्पर करते मरते सभी परस्पर भय खाते।।
विमल नाथ प्रभु अनेकान्तमय तुम-मत के जो नय मिलते।
बने परस्पर पूरक, हिल-मिल सभी कथंचित् पथ चलते।।1।।

निजी सहायक शेष कारकों को आपेक्षित करते हैं।
एक-एक कर जिस विध कारक कार्य सिद्ध सब करते हैं।।
समानता को विशेषता को लखते हैं क्रमवार भले।
उस विध तव नय गौण-मुख्य हो वक्ता के अनुसार चले।।2।।

ज्ञानमयी हो स्व-पर प्रकाशक प्रमाण जिस विध निश्चित है।
जैनागम में निराबाध वह स्वीकृत है औ समुचित है।।
अभेद-मय औ भेद-ज्ञान में सदा मित्रता शुद्ध रही।
समानता और विशेषता की समष्टि जिन से सिद्ध रही।।3।।

किसी वस्तु की विशेषता का, कथक विशेषण होता है।
विशेषता जिसकी की जाती विशेष्य बस वह होता है।।
किन्तु विशेषण विशेष्य इनमें नित्य निहित सामान्य रहा।
स्यात् पद-वश प्रासंगिक होता मुख्य-गौण तब अन्य रहा।।4।।

स्यात् पद भूषित तव नय बनते सुर सुख शिव सुख-दाता हैं।
जिस विध पारस योग प्राप्त कर लोह स्वर्ण बन भाता है।।
अतः हितैषी सविनय होते तव पद में प्रणिपात रहें।
परम पुण्य का फलतः बुधजन लाभ लुटा दिन-रात रहें।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

काया-कारा में पला, प्रभु तो कारातीत।
चिर से धारा में पड़ा, जिनवर धारातीत।।

कराल काला व्याल-सम, कुटिल चाल का काल।
विष विरहित उसको किया, किया स्वप्न साकार।।

मोह-अमल वश समल बन, निर्बल मैं भयवान।
विमलनाथ तुम अमल हो, सम्बल दो भगवान।।

ज्ञान छोर तुम, में रहा, ना-समझ की छोर।
छोर पकड़कर झट इसे, खींचो अपनी ओर।।

अनन्तनाथ-स्तवन

चिर से जीवित तुम उर में था मोह-भूत जो पाप-मयी।
अमित-दोष का कोष रहा था जिसका तन परिताप मयी।।
उसे जीत कर बने विजेता आत्म तत्त्व के रसिक हुए।
अतः नाम तब अनन्त सार्थक, तव सेवक हम भविक हुए।।1।।

समाधि-मय गुणकारी औषध, का तुमने अनुपान किया।
दुर्निवार संतापक दाहक काम रोग का प्राण लिया।।
रिपु-सम दुखद कषाय-दल का और पूर्णतः नाश किया।
पूर्णज्ञान पर परमजोति से त्रिभुवन को परकाश दिया।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भरी लबालव श्रम के जल से भय-मय लहरें उपजाती।
विषय-वासना-सरिता तुममें चिर से बहती थी माती।।
उसे सुखा दी अपरिग्रहमय तरुण की किरणों से।
मुक्ति-वधू वह हुई प्रभावित इसीलिए तव चरणों से।।3।।

भक्त बना तव निरत भक्ति में भुक्ति मुक्ति सुख वह पाता।
तुम से जो चिढ़ता वह निश्चित प्रत्यय-सम मिट दुख पाता।।
फिर भी निन्दक वंदक तुम को सम है समता-धाम बने।
तव परिणति प्रभु विचित्र कितनी निज रस में अविराम सने।।4।।

तुम ऐसे हो तुम वैसे हो मम-लघु धी का कुछ कहना।
केवल प्रलाप-भर है मुनिवर! भक्ति-भाव में बस बहना।।
तव महिमा का पार नहीं पर अल्प मात्र भी तारण है।
अमृत-सिन्धु का स्पर्श तुल्य बस शान्ति सौख्य का कारण है।।5।।

दोहा

आदि रहित सब द्रव्य हैं, ना हो इनका अन्त।
गिनती इनकी अन्त से, रहित अनन्त अनन्त।।

कर्त्ता इनका पर नहीं, ये न किसी के कर्म।
सन्त बने अरहन्त हो, जाना पदार्थ-धर्म।।

अनन्त गुण पा कर दिया, अनन्त भव का अन्त।
अनन्त सार्थक नाम तव, अनन्त जिन जयवन्त।।

अनन्त सुख पाने सदा, भव से हो भयवन्त।
अन्तिम क्षण तक मैं तुम्हें, स्मरुँ स्मरें सब संत।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्मनाथ-स्तवन

वीतराग-मय धर्मतीर्थ को किया प्रसारित त्रिभुवन में।
धर्म नाम तव सार्थक कहते गणधर गुरु जो मुनिगण में।।
सघन कर्म के वन को तपमय तेज अनल से जला दिया।
शंकर बन कर सुखकर शिव-सुख पाकर जग को जगा दिया।।1।।

भद्र भव्य सुर-नरपति गण तन तुग पद में अति मोहित हैं।
मुनिगण-नायक गणधर में प्रभु आप घिरे हैं, शोभित हैं।।
जैसा नभ में पूर्ण कला ले शान्त चन्द्रमा निखरा हो।
जिसके चारों ओर विहसता तारक-दल भी बिखरा हो।।2।।

छत्रादिक से सजा हुआ जिस समवशरण में निवस रहे।
विरत किन्तु निज तन से भी हो निरीह सबसे विलस रहे।
नर, सुर, किन्नर भव्य जनों को शिव-पथ दर्शित करा रहे।
प्रति-फल की कुछ वांछा नहिं पर हमको हर्षित करा रहे।।3।।

तन की मन की और वचन की चेष्टाएँ तव होती हैं।
किन्तु बिना इच्छा के केवल सहज भाव से होती हैं।।
थोथी यद्वा-तद्वा भी नहि सही ज्ञान से सहित सभी।
धीर! नीर-निधि-समतव परिणति, अचिंत्य-लख बुध चकित सभी।।4।।

मानवता से ऊपर उठ कर ऊपर उन्नत चढ़े हुए।
सुर, सुर-पालक देवों में भी पूज्य हुए हो बड़े हुए।।
इसीलिए देवाधिदेव हो परम इष्ट जिन! नाथ हुए।
हम पर करुणा कर दो शिव-सुख, तुम पद में नत-माथ हुए।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

जिससे बिछुड़े जुड़ सकें, रुदन रुके मुस्कान।
तन-गत-चेतन दिख सके, वही धर्म सुखखान।।

विरागता में राग हो, राग-नाग-विषत्याग।
अमृत-पान चिर कर सकें, धर्म यही झट जाग।।

दया धर्म वर धर्म है, अदया-भाव अधर्म।
अधर्म तज, प्रभु धर्म ने, समझाया पुनि धर्म।।

धर्मनाथ को नित नमूँ, सधे शीघ्र शिव, शर्म।
धर्म-मर्म को लख सकूँ, मिटे मलिन मम कर्म।।

शान्तिनाथ-स्तवन

प्रजा सुरक्षित कर रिपुओं से, निजी राज्य अविभाज्य किया।
सुचिर काल तक प्रतापशाली, अजेय राजा राज्य किया।।
स्वयं आप पुनि मुनि वन वन में, पापों का अतिशमन किया।
शांतिनाथ जिन! दया-धाम हो, शान्ति-रमा से रमण किया।।1।।

पुण्य-पुरूष चक्री बन तुमने, चक्र दिखा कर डरा दिये।
छहों खण्ड के नराधिपों को, पूर्ण रूप से हरा दिये।।
समाधि मय निज दिव्य चक्र पुनि, मोह शत्रु पर चला दिया।
दुर्नय-दुर्जय दुष्ट क्रूर को, मिट्टी में बस मिला दिया।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजाओं के राजा बन कर, राजसभा में राजित थे।
लघु राजाओं के सुख-साधन, तुम पर ही निर्धारित थे।।
किंतु पुनः जब निजाधीन हो, आर्हत पद को प्राप्त हुए।
अगणित अमरासुर पतिगण में,हुए सुशोभित-आप्त हुए।।3।।

नरेन्द्र जब थे नरपति दल ने, तब चरणों में शरण लिया।
सदय बने जब मुनिवर तुम को, दया धर्म ने नमन किया।।
पूज्य बने जिन तव पद युग में, सुरदल आ प्रणिपात हुआ।
ध्यानी बनते, कर्म विनसता(हाथ जोड़, नत माथ हुआ।।4।।

निजी दोष सब पूर्ण मिटाकर, प्रथम प्रशम बन शान्त हुए।
शान्ति दिलाने शरणागत को, सुचिर काल से क्लान्त हुए।।
शान्तिनाथ जिन! शांति विधायक, शांत मुझे अब आप करो।
शरण-चरण में मुझे दिलाकर, भव-भव का मम ताप हरो।।5।।

दोहा

सकलज्ञान से सकल को, जान रहे जगदीश।
विकल रहे जड़ देह से, विमल नमूँ-नतशीश।।1।।
कामदेव हो काम से-रखते कुछ ना काम।
काम रहे ना कामना, तभी बनें सब काम।।2।।
बिना कहे कुछ आपने, प्रथम किया कर्त्तव्य।
त्रिभुवन पूजित आप्त हो, प्राप्त किया प्राप्तव्य।।3।।
शांति नाथ हो शांत कर, सातासाता सान्त।
केवल-केवल ज्योतिमय, क्लान्ति मिटी सब ध्वांत।।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुन्थुनाथ-स्तवन

चक्री बन शासित नरपों को प्रथम किया यश सुख पाने।
तीर्थंकर बन धर्म-चक्र, फिर चला दिया निज-घर जाने।।
जरा जनन मृति रोग मिटाने सदय स्वजीवन बना लिया।
कुन्थु कृमी आदिक जीवों पर, कुन्थु जिनेश्वर दया किया।।1।।

स्वभाव से ही तृष्णा-ज्वाला सदा धधकती वह जलती।
भोग्य वस्तुएँ भले भोग लो तृष्णा बुझती नहिं बढ़ती।।
विषय-सौख्य तो निमित्त केवल, हर सकते! तन-ताप भले।
विमुख हुए हैं अंतः विषय से, मुनि बन, शिव-पथ आप चले।।2।।

कष्ट-साध्य बहु बाह्य तपों से तन को मन को जला दिया।
आभ्यंतर तप उद्दीपित हो यही प्रयोजन बना लिया।।
आर्त ध्यान को, रौद्र ध्यान को, पूर्ण ध्यान से हटा दिया।
धर्म ध्यान में, शुक्ल ध्यान में, क्रमशः निज को बिठा दिया।।3।।

रत्नत्रयी मय होम-कुण्ड को योग अनल से तेज किया।
होमा जिसमें घाति कर्म को यम-पुर रिपु को भेज दिया।।
अतुल वीर्य पा सकल ज्ञेय के प्रतिपादक आगम-कर्त्ता।
विलस रहे प्रभु मेघ-सहित नभ में जिस विध रवि तम-हर्ता।।5।।

विद्या-धन का निधान दुर्लभ मुनिवर! तुम में अहा खुला।
ब्रह्मा महेश आदिक को पर जिसका कण भी कहाँ मिला।।
अमिट-अमित हो स्तुत्य बने हो जन्म-रहित जिन-देव! तभी।
निज हित-इच्छुक अतः सुधी ये तुम्हें भजे स्वयमेव सभी।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

ध्यान अग्नि से नष्ट कर, प्रथम पाप परिताप।
कुन्थुनाथ पुरुषार्थ से, बने न अपने आप।।

उपादान की योग्यता, घट में ढलती सार।
कुम्भकार का हाथ हो, निमित्त का उपकार।।

दीन दयाल प्रभु रहें, करुणा के अवतार।
नाथ अनाथों के रहे, तार सको तो तार।।

ऐसी मुझ पै हो कृपा, मम मन मुझ में आय।
जिस विध पल में लवण है, जल में घुल मिल जाय।।

वर्तमान का पुरुषार्थ अतीत और अनागत दोनों को संभाल कर रखता है। भविष्य की चिन्ता में वर्तमान को अंधकारमय बना दिया, तो भविष्य कभी प्रकाशमान नहीं हो सकता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अरहनाथ-स्तवन

किसी पुरुष के अल्प गुणों का बढ़ा-चढ़ा कर यश गाना।
जग में बुधजन कविजन कहते स्तुति का वह है बस वाना।।
पूज्य बने हो ईश बने हो अगणित गुण के धाम बने।
ऐसी स्थिति में आप कहो फिर कैसे स्तुति का काम बने।।1।।

यदपि मुनीश्वर की स्तुति करना रवि को दीपक दिखलाना।
तदपि भक्ति-वश मचल रहा मन कुछ कहने को अनजाना।।
तथा अल्प भी जो तव यश भविक यहाँ गुण-गान करें।
शुचितम बनता, क्यों ना हम फिर तव थुति-रस का पान करें।।2।।

चौदह मनियाँ निधियाँ नव भी चक्री तुम थे तुम्हें मिली।
हाथी छोड़े कोटि, नारियाँ कुछ कम लाखों तुम्हें वरी।।
मुमुक्षुपन की किन्तु किरण जो तुम में जगमग जभी जगी।
सार्वभौम पदवी भी तुमको जीरण तृण सम सभी लगी।।3।।

सविनय द्वय नयनोंसे तव मुख छवि को जब अनिमेष लखा।
किन्तु तृप्त वह हुआ नहीं पर लख-लख कर अमरेश थका।।
सहस्र लोचन खोल लिये फिर निजी ऋद्धि से काम लिया।
चकित हुआ तब अंग-अंग का प्रभु दर्शन अभिराम किया।।4।।

मोहरूप रिपु-भूप, पाप-का-बाप, ताप का कारक है।
कषाय-मय सेना का चालक, चेतन निधि का हारक है।।
समकित-चारित-भेदज्ञान मय कर में खर तर-बार लिया।
किया वार निज 'मोह-शत्रु पर धीर आपने, मार दिया।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीन लोक को अपने बल पर जीत विजेता बना हुआ।
काम समझ यों लोक ईश मैं व्यर्थ गर्व से तना हुआ।।
धीर वीर जिन किन्तु आप पर प्रभाव उसका नहीं पड़ा।
लज्जित होकर शिशु-सा आकर तव चरणों में तभी पड़ा।।6।।

इस भव में भी पर भव में भी दुस्सह दुख की है जननी।
तृष्णा-रूपी नदी भयंकर यह नरकों की वैतरणी।।
इसका पाना पार कठिन है कई तैरते हार गये।
वीतराग-मय ज्ञान-नाव में बैठ किन्तु प्रभु पार गये।।7।।

सदा काल से काल जगत को रुला रहा था सता रहा।
जन्म-रोग को मित्र बना कर जीवन अपना बिता रहा।।
महाकाल बिकराल किन्तु प्रभु काल आपने विकल किया।
कुटिल चाल को छोड़ काल ने सरल चाल में बदल दिया।।8।।

शस्त्रों, वस्त्रों, पुत्र, कलत्रों, आभरणों से रहित रहा।
विराग विद्या दया दमन से पूर्ण रूप से सहित रहा।।
इस विध जो तव रूप मनोहर मौन रूप से बोल रहा।
धीर! रहित हो सकल दोष से तब जीवन अनमोल रहा।।9।।

तव तन की अति प्रखर ज्योतिमा फैल रही चहुँ ओर सही।
फलतः बाहिर सघन तिमिर सब भगा, हुआ हो भोर कहीं।।
इसी तरह निज शुद्धातम के परम विभा से नाश किया।
मोह-मयी अतिघनी निशा का, निज-धर शिव में वास किया।।10।।

सकल विश्व का जानन हारा तुममें केवलज्ञान हुआ।
समवशरण आदिक अनुपम तन अतिशय आविर्मान हुआ।।
पुण्य-पाक मय इस अतिशय को भविक जनों ने निरखा हो।
तव पद में नत क्यों ना होवे दोष गुणन को परखा हो।।11।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिसकी भाषा, उस भाषा में उसको समझाती वाणी।
अमृतमयी है जिनवाणी है ज्ञानी कहते कल्याणी।।
समवशरण में फैल सभी के कर्ण तृप्त भी है करती।
सुधा जगत में जिस विध, जन-जन को सुख दे सब दुख हरती।।12।।

अनेकान्त तव दृष्टि रही है सत्य तथ्य बुध-मीत रही।
तथ्य-हीन एकान्त दृष्टि है औरों की विपरीत रही।।
एकान्ती का जो कुछ कहना असत्य भी है उचित नहीं।।
और रहा निज मत का घातक इसीलिए वह मुदित नहीं।।13।।

पर मत की कमियों को लखने नेत्र खोलकर जाग रहे।
निज-कमियाँ लख भी नहि लखते जैसे सोते नाग (हाथी) रहे।
निज मत थापित पर मत बाधित करने में भी निर्बल है।
तापस वे नहिं समझ सकेंगे तव मत जो अति निर्मल है।।14।।

एकान्ती जन दोष-बीज ही सदा निरन्तर बोते हैं।
निज मत घातक दोष मिटाने सक्षम नहिं वे होते हैं।।
अनेकान्त तब मत से चिढ़ते आत्महनक हैं बने हुए।
अवक्तव्य ही "तत्त्व सर्वथा" जड़ जन कहते तने हुए।।15।।

अवक्तव्य वक्तव्य नित्य या अनित्य ही यह वस्तु रही।
सदसत् या है एक रही या अनेक अथवा वस्तु रही।।
कहें सर्वथा यों नय करते वस्तु-तत्त्व को दूषित हैं।
पोषित करते, किन्तु आपके स्याद् पद से नय भूषित हैं।।16।।

प्रमाण द्वारा ज्ञात विषय की सदा अपेक्षा रखता है।
किन्तु सर्वथा नियम" रखे बिन वस्तु-भाव को चखता है।।
ऐसा स्याद् पद पर मत का नहिं तव मत का शृंगार रहा।
अतः "सर्वथा पद" ही परमत निजमत को संहार रहा।।17।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण नय साधन से साधित अनेकान्त-मय तव मत में।
अनेकान्त भी अनेकान्त है जिसका सेवक अवनत मैं।।
पूर्ण वस्तु को विषय बनाते प्रमाण-वश नैकान्त बने।
वस्तु-धर्म हो एक विवक्षित, नय-वश तब एकान्त तने।।18।।

निराबाध और निरुपम शासन के शासक गुण-धारक हो।
सुखद-योग-गुण-पालन का पथ दिखलाते अघ मारक हो।।
इन्द्रिय-विजयी धर्म-तीर्थ के, हे अर! जिन तुम नायक हो।
तुम बिन, भविजन हितपथ दर्शक, अन्य कौन? सुखदायक हो।।19।।

आगम का भी अल्प ज्ञान है पूर्ण ज्ञान वह मिला नहीं।
मंद बुद्धि मम, विशद नहीं है भक्ति-भाव-भर मिला यहीं।।
मानस आगम-बल से फिर भी जो कुछ तव गुणगान किया।
पाप-शमन का हेतु बनेगा वरद! यही अनुमान लिया।।20।।

दोहा

चक्री हो पर चक्र के, चक्कर में ना आय।
मुमुक्षुपन जब जागता, बुभुक्षु-पन भग जाय।।

भोगों का कब अन्त है, रोग भोग से होय।
शोक रोग में हो अतः, काल योग का रोय।।

नाम मात्र भी नहिं रखो, नाम-काम से काम।
ललाम आतम में करो, विराम आठों याम।।

नाम धरो 'अर' नाम तव, अतः स्मरुँ अविराम।
अनाम बन शिवधाम में, काम बनूँ कृत-काम।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मल्लिनाथ-स्तवन

बने महा ऋषि जब तुम, तुममें सुसुप्त जागृत योग हुआ।
लोकालोकालोकित करता अतुलनीय आलोक हुआ।।
इसीलिए बस सादर आकर अमराकर नर-जगत सभी।
जोड़ करों को हुआ प्रणत तव, पद में हूँ मुनि जगत अभी।।1।।

तब तन आभा तप्त स्वर्ण-सी तन की चारों ओर सही।
परिमण्डल की रचना करती यह शोभा नहिं और कहीं।।
वस्तु-तत्त्व को कहने आतुर स्याद्-पद वाली तव वाणी।
दोनों मुनिजन को हर्षाती जिनकी शरणा सुखदानी।।2।।

मन मानी तज प्रतिवादी जन तव सम्मुख हो गतमानी।
वाद करें ना कुतर्क करते जब प्रभु पूरण हो ज्ञानी।।
तथा आपके शुभ दर्शन से हरी-भरी हो भी लसती।
खिली कमलिनी मृदुतम-सी यह धरा सुन्दरा भी हंसती।।3।।

शान्त कान्ति से शोभ रहे हैं पूर्ण चन्द्रमा जिनवर हैं।
शिष्य-साधु चहुँ-ओर घिरे हैं गृह-बन गणधर मुनिवर हैं।।
तीर्थ आप का ताप मिटाता अनुपम सुख का हेतु रहा।
दुखित भव्य भव पार कर सके भव-सागर का सेतु रहा।।4।।

शुक्ल ध्यान मय तपश्चरण के दीप्त अनल से जला जला।
राख किया कटु पाप कर्म को तभी तुम्हें शिव किला मिला।।
शल्य-रहित कृत-कृत्य बने हो मल्लिनाथ जिन पुंगव हो।
चरणों में दो शरण मुझे अब भव-भव पुनि ना संभव हो।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

क्षार क्षार भर है भरा, रहित सार संसार।
मोह उदय से लग रहा, संरस सार संसार।।

बने दिगम्बर प्रभु तभी, अन्तरंग बहिरंग।
गहरी-गहरी हो नदी, उठती नहीं तरंग।।

मोह मल्ल को मार कर, मल्लिनाथ जिनदेव।
अक्षय बनकर पा लिया, अक्षय सुख स्वयमेव।।

बाल ब्रह्मचारी विभो, बाल सभी विराग।
किसी वस्तु से राग ना, तुम पद से मम राग।।

मुनिसुव्रतनाथ-स्तवन

मुनि बन मुनि-पथ चलते मुनिपन में दृढ़ हो मुनिनाथ हुए।
मुनिसुव्रत प्रभु पाप-रहित हो निज में रत दिन-रात हुए।।
मुनियों की उस भरी सभा में अनुपम द्युति से शोभ रहे।
तारक गण के ठीक बीच ज्यों शोभित शीतल सोम रहे।।1।।

द्वादश विध खर तप कर तुमने देह-मोह सब भुला दिया।
काम रोग को अहंकार को पूर्ण रूप से जला दिया।।
मोर-कण्ठ-सम सघन नीलिमा फलतः तव तन में फूटी।
पूर्णचन्द्र के परितः फैली मण्डल-द्युति पड़ती झूठी।।2।।
चन्द्र-चाँदनी-सम धवलित शुचि रुधिर भरा है तव तन में।
परम सुगंधित निर्मल तन है ऐसा तन ना त्रिभुवन में।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
केवल सुख-कर नहीं किन्तु तव तन मन वच की परिणतियाँ।
विस्मय जग को सदा करातीं जिन से मिटती चहुँ गतियाँ।।3।।

युगों-युगों से जड़चेतन ये जग के पदार्थ सारे हैं।
ध्रौव्य-जनन-मय तथा नाशमय लक्षण यथार्थ धारे हैं।।
इस विध तव वाणी यह कहती, सकल विश्व के ज्ञायक हैं।
शिव पथ शासन कर्त्ताओं में कुशल आप ही शासक हैं।।4।।

निरुपम चौथे शुक्ल ध्यान मय संबल निज में जगा लिया।
अष्टकर्म-मल पाप-किट्ट को जला-जला कर मिटा दिया।।
भवातीत उस मोक्ष-सौख्य का लाभ आपने उठा लिया।
करो नाश अब मम भव का भी, मन में तव पद बिठा लिया।।5।।

दोहा

निज में यति ही नियति है, ध्येय "पुरुष" पुरुषार्थ।
नियति और पुरुषार्थ का, सुन लो अर्थ यथार्थ।।

लौकिक सुख पाने कभी, श्रमण बनो मत भ्रात!।
मिले धान्य जब कृषि करे, घास आप मिल जात।।

मुनि बन मुनिपन में निरत, हो मुनि यति बिन स्वार्थ।
मुनि-व्रत का उपदेश दे, हमको किया कृतार्थ।।

यही भावना मम रही, मुनिव्रत पाल यथार्थ।
मैं भी मुनिसुव्रत बनूँ, पावन पाय पदार्थ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नमिनाथ-स्तवन

स्तुत्य रहे या नहीं रहे, फल उसे मिले या नहीं मिले।
स्तुति जब करता सज्जन मन में पुण्य-भाव की कली खिले।।
निजाधीन औ सुलभ मोक्षपथ जग में इस विध बनता हो।
पूज्य ईश नमि जिन फिर क्यों ना तव थुति रत बुध जनता हो।।1।।

परम ब्रह्म रत हो तोड़ा भव-बंधन प्रभु कृत-काम बने।
इसीलिए जिन सुधीजनों के बोध-धाम शिव-धाम बने।।
ज्ञान-जोति अति प्रखर किरण ले उदित हुई फलतः तुम में।
पर-मत जुगुनू सम कुंदित हैं तेज उदित हो रवि नभ में।।2।।

अस्ति नास्ति औ उभय रूप भी अवक्तव्य भी तत्त्व रहा।
अवक्तव्य भी तीन रूप यों सप्त भंगमय तत्त्व रहा।।
आपस में आपेक्षित बहुविध धर्मों से जो भरित रहा।
गौण-मुख्य कर बहुनय-वश वह लोक ईश से कथित रहा।।3।।

अणु-भर भी यदि षडारम्भ हो वहाँ दया वह नहीं रहे।
जीव-दया सो परम-ब्रह्म है जग में बुधजन यही कहें।।
अतः दया की प्राप्ति हेतु प्रभु करुण भाव से पूर रहें।
उभय संग तज बने दिगंबर विकृत वेष से दूर रहे।।4।।

भूषण वसनादिक से रीता नग्न काय तव यों गाता।
जीता तुमने काम-बली को जित इन्द्रिय हो, हो धाता।।
तीक्ष्ण शस्त्र बिन निज उर में थित अदय क्रोध का नाश किया।
निर्मोही हो अतः शरण दो शान्ति-सदन में वास किया।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

मात्र नग्नता को नहीं, माना प्रभु शिव-पंथ।
बिना नग्नता भी नहीं, पावो पद अरहन्त।।

प्रथम हटे छिलका तभी, लाली हटती भ्रात!।
पाक कार्य फिर सफल हो, लो तव मुख में भात।।

अनेकान्त का दास हो, अनेकान्त की सेव।
करूँ गहूँ मैं शीघ्र ही, अनेक गुण स्वयमेव।।

अनाथ मैं जगनाथ हो, नमीनाथ दो साथ।
तव पद में दिन-रात हूँ, हाथ जोड़ नत-माथ।।

नेमिनाथ-स्तवन

ऋद्धि-सिद्धि के धारक, ऋषि हो, प्राप्त किया है निज धन को।
शुक्ल ध्यान मय तेज अनल से जला दिया विधि-इंधन को।।
खिले-खुले तव नील कमल-सम, युगल-सुलोचन विकसित हैं।
सकल ज्ञान से सकल निरखते भगवन् जग में विलसित हैं।।1।।

विनय-दमादिक पाप-रहित-पथ के दर्शक तीर्थंकर हो।
लोक-तिलक हरिवंश मुकुट हो, संकट के प्रलयंकर हो।।
हुए शील के अपार सागर, भवसागर से पार हुए।
अजरामर हो अरिष्ट नेमी जिनवर! जग में सार हुए।।2।।

झिलमिल-झिलमिल मणियों से जो जड़ित मुकुट को चढ़ा रहे।
तव चरणों में अवनत सुरपति और मंजुता बढ़ा रहे।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोमल-कोमल लाल-लाल तव युगल पाद-तल विमल लसे।
तालाबों में खुले-खिले-ज्यों लाल दलों से कमल लसे।।3।।

शरद्-काल के पूर्ण चन्द्र की शुभ्र चाँदनी-सी लसती।
पूज्य-पाद की नखावली ये जिनमें जा मम मति बसती।।
थुति करते नित तव पद में नत प्रभु दर्शन की आस लगी।
बुध-ऋषि, जिन को निज आतम सुख की चिर से अतिप्यास लगी।।4।।

तेज-भानु-सा चक्र-रत्न से जिनके कंधे शोभित हैं।
घिरे हुए हैं स्वजन बंधुओं से जो पर में मोहित हैं।।
सघन-मेघ-सम नील वर्ण का जिन का तन जगनामी हैं।
भ्रात चचेरे कृष्ण-राज तव तीन खण्ड के स्वामी हैं।।5।।

स्वजन-भक्ति से मुदित रहे हैं जन-जन के जो सुखकर हैं।
धर्म-रसिक हैं विनय-रसिक हैं इस विध चक्री हलधर हैं।।
भक्ति-भाव से प्रेरित होकर नेमिनाथ तव! चरणन में।
दोनों आकर बार-बार नत होते हर्षित तन-मन में।।6।। (युग्म)

सौराष्ट्रन में, वृषभ-कंध-सम उन्नत पर्वत अमर रहें।
खेचर महिलाओं से सेवित जिसके शोभित शिखर रहें।।
बादल-दल-से जिसके तट भी सदा घिरे ही रहते हैं।
जहाँ इन्द्र ने तव गुण लक्षण लिखे, जिन्हें बुध कहते हैं।।7।।

तव गुण लक्षण धारण करता अतः तीर्थ वह महा बना।
ऊर्जयन्त फिर ख्यात हुआ है पुराण कहते महामना।।
सुचिर काल से आज अभी भी जिसका वन्दन करते हैं।
ऋषि-गण भी अति प्रसन्न होते सफल स्वजीवन करते हैं।।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बाहर से भी भीतर से भी ना तो साधक बाधक हो।
इन्द्रिय गण हो यद्यपि तुममें तदपि मात्र प्रभुज्ञायक हो।।
एक साथ जिननाथ, हाथ की रेखा सम सब त्रिभुवन को-
जान रहे हो देख रहे हो विगत-अनागत कण-कण को।।9।।

इसीलिए यति मुनिगण से प्रभु-पद युग-पूजित सुखदाता।
अद्भुत से अद्भुत तम आगम-संगत चारित तव साता।।
इस विध तव अतिशय का चिन्तन करके मन में मुदित हुआ।
जिन-पद में अति निरत हुआ हूँ आज भाग्य शुभ उदित हुआ।।10।।

दोहा

राज तजा, राजुल तजी, श्याम तजा बलिराम।
नाम-धाम-धन-मन तजा, ग्राम तजा संग्राम।।

मुनि बन वन में तप सजा, मन पर लगा लगाम।
ललाम परमातम भजा, निज में किया विराम।।

नील-गगन में अधर हो, शोभित निज में लीन।
नील-कमल आसीन हो, नीलम से अति नील।।

शील-झील में तैरते, नेमि जिनेश सलील।
शील डोर मुझ बाँध दो, डोर करो मत ढील।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पार्श्वनाथ स्तवन

जल वर्षाते घने बादले, काले काले डोल रहे।
झंझा चलती बिज़ली तड़की, घुमड़-घुमड़ कर बोल रहे।।
पूर्व वैर-वश कमठ देव हो, इस विध तुमको कष्ट दिया।।
किन्तु ध्यान में अविचल प्रभु हो, घाति कर्म को नष्ट किया।

द्युति-मय बिजली-सम पीला, निज फण का मण्डप बना लिया।
नाग इन्द्र तव कष्ट मिटाने, तुम पर समुचित तना दिया।।
दृश्य मनोहर तव वह ऐसा, विस्मय कारी एक बना।
संध्या में पर्वत को ढकता समेत-बिजली मेघ घना।।2।।

आत्म ध्यान मय कर में खर तर, खड्ग आपने धार लिया।
मोहरूप निज दुर्जय रिपु को, पल भर में बस मार दिया।।
अचिन्त्य-अद्भुत आर्हत् पद को, फलतः पाया अघहारी।
तीन लोक में पूजनीय जो,' अतिशयकारी अतिभारी।।3।।

मनमाने कुछ तापस ऐसे, तप करते थे वनवासी।
पाप रहित तुम को लख-इच्छुक(तुम सम बनने अविनाशी।।
हम सब का श्रम विफल रहा यों, समझ सभी वे विकल हुए।
शम यम दम मय सदुपदेश सुन, तब चरणन में सफल हुए।।4।।

समीचीन विद्या तप के प्रभु, रहे प्रणेता वरदानी।
उग्र वंश मय विशाल नभ के दिव्य सूर्य पूरण ज्ञानी।।
कुपथ निराकृत कर भ्रमितों को, पथिक सुपथ के बना दिये।
पार्श्वनाथ मम पास वास वस, करो, देर अब बिना किये।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

रिपुता की सीमा रही, गहन किया उपसर्ग।
समता की सीमा यही, ग्रहण किया अपवर्ग।।1।।
क्या-क्यों किस विध कब कहें, आत्म ध्यान की बात।
पल में मिटती चिर बसी, मोह अमा की रात।।2।।
खास-दास की आस बस, श्वास श्वास कर बास।
पार्श्व करो मत दास को, उदासता का दास।।3।।
ना तो सुर-सुख चाहता, शिव सुख की नाचाह।
तव थुति सरवर में सदा, होवे मम अवगाह।।4।।

नित चलता रहा

मै था तो चला, पहुँचा भी वहाँ
पर तुम न मिले, नित चलता रहा।।
जीवन की डगर सूनी थी मगर
हँसकर भी चला, गाकर भी चला
पहुँचा भी वहाँ, पर तुम न मिले-नित चलता रहा।। 1 ।।

आकाश मिला, धरती भी मिली
गौरव भी मिला, जीवन भी मिला
पहुँचा भी वहाँ पर तुम न मिले।। 2 ।।

जप तप भी किया सन्यास लिया
विन्यास किया परिहास हुआ
बहुतों से मिले पर तुम न मिले।
नित चलता रहा-पर तुम न मिले।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर-स्तवन

तव गुण-गण की फैल रही है विमल कीर्ति वह त्रिभुवन में।
तभी हो रहे शोभित ऐसे वीर देव बुध जन-जन में।।
कुन्द पुष्प की शुक्ल कान्ति-सम कान्ति धाम शशि हो भाता।
घिरा हुआ हो जिससे उडुदल गीत-गगन में हो गाता।।1।।

सत युग में था कलियुग में भी तव शासन जयवन्त रहा।
भव्यजनों के भव का नाशक मम भव का भी अन्त रहा।।
दोष चाबु को निरस्त करते पर मत खण्डन करते हैं।
निज-प्रतिभा से अतः गणी ये जिनमत मण्डन करते हैं।।2।।

प्रत्यक्षादिक से ना बाधित अनेकान्त मत तत्व भाता।
स्याद्-वाद सब वाद-विवादों का नाशक मुनिवर! साता।।
प्रत्यक्षादिक से हैं बाधित स्याद्वाद से दूर रहे।
एकान्ती मत इसीलिए सब दोष धूल से पूर रहे।।3।।

दुष्ट दुराशय धारक जन से पूजित जिनवर रहे कदा?
किन्तु सुजन से सुरासुरों से पूजित वंदित रहे सदा।।
तीन लोक के चराचरों के परमोत्तम हितकारक हैं।
पूर्ण ज्ञान से भासमान् शिव को पाया अघहारक हैं।।4।।

समवशरण थित भव्यजनों को रुचते मन को लोभ रहे।
सामुद्रिक औ आत्मिक गुण से हे प्रभुवर अति शोभ रहे।।
चमचम चमके निजी कान्ति से ललित मनोहर उस शशि को।
जीत लिया तब काय कान्ति ने प्रणाम मम हो जिन ऋषि को।।5।।

मुमुक्ष जन के मनवांछित फलदायक! नायक! जिन तुम हो।
तत्त्व-प्ररूपक तब आगम तो श्रेष्ठ रहा अति उत्तम हो।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
बाहर-भीतर श्री से युत हो माया को निःशेष किया।
श्रेष्ठ श्रेष्ठतम कठिन कठिनतम यम-दम का उपदेश दिया।।6।।

मोह-शमन के पथ के रक्षक अदया तज कर सदय हुए।
किया जगत में गमन अबाधित सभय सभीजन, अभय हुए।।
ऐसा लगते तब, गज जैसा मद-धारा, मद बरसाता।
बाधक गिरि की गिरा कटिनियाँ अरुक अनाहत बस जाता।।7।।
एकान्ती मत-मतान्तरों में वचन यदपि श्रुति-मधुर सभी।
किन्तु मिले ना सुगण कभी भी नहीं सकल-गुण प्रचुर कभी।।
तव मत "समन्तभद्र" देव हैं सकल गुणों से पूरण हैं।
विविध नयों की भक्ति-भूख को शीघ्र जगाता चूरण है।।8।।

दोहा

क्षीर रहो प्रभु नीर मैं, विनती करूँ अखीर।
नीर मिला लो क्षीर में, और बना दो क्षीर।।

अबीर हो, तुम वीर भी, धरते ज्ञान-शरीर।
सौरभ मुझ में भी भरो, सुरभित करो समीर।।

नीर निधी से धीर हो, वीर बने गंभीर।
पूर्ण तैर कर पा लिया, भवसागर का तीर।।

अधीर हूँ मुझ धीर दो, सहन करूँ सब पीर।
चीर-चीर कर चिर लखूँ, अन्तर की तस्वीर।।

भूल क्षम्य हो!

लेखक कवि मैं हूँ नहीं, मुझ में कुछ नहिं ज्ञान।
त्रुटियाँ होवें यदि यहाँ, शोध पढ़ें धीमान्।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मंगलकामना

विना-भीति विचरूँ सदा वन में ज्यों मृगराज।
ध्यान धरूँ परमात्म का निश्चल हो गिरिराज।।1।।

सागर सम गंभीर मैं बनूँ चन्द्र-सम शान्त।
गगन-तुल्य स्वाश्रित रहूँ, हरूँ दीप-सम ध्वान्त।।2।।

रवि सम पर-उपकार मैं करूँ समझ कर्त्तव्य।
रखूँ न मन में मान-मद, सुन्दर हो भवितव्य।।3।।

चिर संचित सब कर्म को राख करूँ बन आग।
तप्त आत्म को शान्त भी करूँ बनूँ गतराग।।4।।

सदा संग बिन पवन सम विचरूँ मैं निस्संग।
मंत्र जपूँ निज तन्त्र का नष्ट शीघ्र हो अंग।।5।।

तन मन को तप से तपा स्वर्ण बनूँ छविमान।
भक्त बनूँ भगवान को, भजूँ बनूँ भगवान।।6।।

द्रव्य हेय जड़मय तजूँ ध्येय बना निज द्रव्य।
कीलित कर निज चित्त को पाऊँ शिव-सुख दिव्य।।7।।
भद्र बनूँ बस भद्रता जीवन का शृंगार।
द्रव्य दृष्टि में निहित है सुख का वह संचार।।8।।

तामस बस प्रतिलोम हो मुझमें चिर बस जाय।
है यह हार्दिक भावना मोह सभी नश जाय।।9।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु-स्मृति

तरणि "ज्ञानसागर" गुरो!, तारो मुझे ऋषीश।
करुणाकर! करुणा करो, कर से दो आशीष।।

स्थान एवं समय-परिचय

भव सागर से भीत हैं सागर के सागार।
प्रथम बार पहुँचा यहाँ ससंघ मैं अनगार।।1।।

द्रव्य-गगन-गति-गंध की वीर जयन्ती आज।
पूर्ण किया इस ग्रन्थ को ध्येय! बनूँ जिनराज।।2।।

× × ×

निरंजन शतक

आचार्य विद्यासागर जी कृत

सन्तों नमस्कृत सुरों बुध मानवों से,
ये हैं जिनेश्वर नमूं मन वाक्तनों से।
पश्चात् करूँ स्तुति निरंजन की निराली,
मेरा प्रयोजन यही कि मिटे भवाली।।1।।

स्वामी! अनन्त-गुण-धाम बने हुए हो,
शोभायमान निज की द्युति से हुए हो।
मृत्युंजयी सकल-विज्ञ विभावनाशी,
वदूँ तुम्हें, जिन बनूँ सकलावभाशी (षी)।।2।।

सच्चा निजी पद निरापद सम्पदा है,
तो दूसरा पद घृणास्पद आपदा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे ! भव्यकंजरवि ! यों तुमने बताया,
शुद्धात्म से प्रभव वैभवभाव पाया।।3।।

जो चाहता शिव सुखास्पद सम्पदा है,
वो पूजता तव पदाम्बुज सर्वदा है।
पाना जिसे कि धन है अयि 'वीर' देवा!
क्या निर्धनी धनिक की करता न सेवा?।।4।।

सत् तेज से मदन को तुमने जलाया,
अन्वर्थ नाम फलरूप "महेश" पाया।
नीराग हो अमति सन्मति विज्ञ प्यारे,
स्वामी मदीय मन को तुम ही सहारे।।5।।

हे ! देव दो नयन के मिस से तुम्हारे,
हैं वस्तु को समझने नय मुख्य प्यारे।
यों जान, मान, हम लें उनका सहारा,
पावें अवश्य भवसागर का किनारा।।6।।

उत्पाद धौव्य व्यय भाव सुधारता हूँ,
चैतन्यरूप वसुधातल पालता हूँ।
पाते प्रवेश मुझमें तुम हो इसी से,
स्वामी ! यहाँ अमित सागर में शशी से।।7।।

जो आपमें निरत है सुख लाभ लेने,
आते न पास उसके विधि कष्ट देने।
क्या सिंह के निकट भी गज झुण्ड जाता?
जाके उसे भय दिखाकर क्या सताता?।।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे! शुद्ध! बुद्ध! मुनिपालक! बोधधारी!
है कौन सक्षम कहे महिमा तुम्हारी?
ऐसा स्वयं कह रही तुम भारती है,
शास्त्रज्ञ पूज्य गणनायक भी व्रती हैं।।9।।

है आपने स्वतन की ममता मिटादी,
सच्चेतना सहज से निज में बिठादी।
लो! देह में इसलिये कनकाभ जागी,
मोहान्धकार विघटा, निज ज्योति जागी।।10।।

श्रीपाद ये कमल-कोमल लोक में हैं,
ये ही यहाँ शरण पंचम काल में हैं।
है भव्य कंज खिलता, इन दर्श पाता,
पूजूँ अतः हृदय में इन को बिठाता।।11।।

लोहा बने कनक पारस संग पाके,
मैं शुद्ध किन्तु तमसा तुम संग पाके।
वो तो रहा जड़, रहे तुम चेतना हो,
कैसा तुम्हें जड़ तुला पर तोलना हो?।।12।।

सानन्द भव्य तुम में लवलीन होता,
पाता स्वधाम सुख का, गुणधाम होता।
औ देह त्याग कर आत्मिक वीर्य पाता,
संसार में फिर कभी नहिं लौट आता।।13।।

काले घने भ्रमर से शिर में तुम्हारे,
ये केश हैं नहि विभो! जिन देव प्यारे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ध्यानाग्नि से स्वयम् को तुमने जलाया,
लो ! सान्द्र धूम्र मिस बाहर राग आया।।14।।

लो! आपके सुभग-सौम्य-शरीर द्वारा,
दोषी शशी अयशधाम नितान्त हारा।
वो आपके चरण की नख के बहाने,
सेवा तभी कर रहा यश कान्ति पाने।।15।।

लो आपकी सुखकरी कविता विभा से,
मोहान्धकार मिटता अविलम्बता से।
ज्योतिर्मयी अरुण है जब जाग जाता,
कैसे कहूँ कि तम है कब भाग जाता?।।16।।

सौंदर्य पान कर भी मुख का तुम्हारे,
प्यासा रहा मन तभी, तुम यों पुकारे।
पीयूष पी निज, तृषा यदि है बुझाना,
बेटा! तुझे सहज शाश्वत शांति पाना।।17।।

मूंगे समा अधर पे स्मित सौम्य रेखा,
है प्रेम से कह रही मुझ को सुरेखा।
आनन्द वार्धि तुम में लहरा रहा है,
पूजूँ तुम्हें, बन दिगम्बर, भा रहा है।।18।।

नक्षत्र है गगन के इक कोन में ज्यों,
आकाश है दिख रहा तुम बोध में त्यों।
ऐसी अलौकिक विभा तुम ज्ञान की है,
मन्दातिमन्द पड़ती द्युति भानु की है।।19।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है एक साथ तुममें यह विश्व सारा,
उत्पन्न हो मिट रहा ध्रुव भाव धारा।
कल्लोल के सम सरोवर में न स्वामी!
पै ज्ञेय ज्ञायकतया, शिवपंथगामी।।20।।

मैं रागत्याग तुझमें अनुराग लाके,
होता सुखी कि जितना लघु ज्ञान पाके।
तेरी बृहस्पति सुभक्ति करें, तथापि,
हो स्वर्ग में नहिं सुखी उतना कदापि।।21।।

ज्यों ही मदीय मन है तव स्पर्श पाता,
त्यों ही त्वदीय सम भासुर हो सुहाता।
रागी विराग बनता तव संघ में है।
लो ! नीर, दूध बनता गिर दूध में है।।22।।

मानूँ तुम्हें तुम शशी तम में भरी हैं,
सच्ची सुधा गुणमयी मन को हरी है।
ऐसा न हो, मम मनोमणि से भला यों,
सम्यक्त्वरुप झरना, झर है रहा क्यों ?।।23।।

सम्मोह से भ्रमित हो जग पाप पाता,
पै आपका मन नहीं अघ ताप पाता।
लोहा स्वभाव तजता जब जंग खाता,
हो पंक में कनक पै सब को सुहाता।।24।।

हो केवली तुम बली शुचि शान्त शाला,
ऐसा तुम्हें कब लखे अघ दृष्टि वाला।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हो पीलिया नयन रोग जिसे हमेशा,
पीला शशी नियम से दिखता जिनेशा।।25।।

ऐसी कृपा यह हुई मुझपे तुम्हारी,
आस्था जगी कि तुममें मम निर्विकारी।
संसार भोग फलतः रुचते नहीं हैं,
प्रत्यक्ष मात्र तुम हो जड़ गौण ही है।।26।।

स्वामी! निवास करते मुझमें सुजागा,
आत्मानुराग फलतः पर राग भागा।
लो दूध में जब कि माणिक ही गिरेगा,
क्या लाल लाल तब दूध नहीं बनेगा?।।27।।

वैराग्य से तुम सुखी भज के अहिंसा,
होता दुखी जगत है कर राग हिंसा।
सत् साधना सहज साध्य सदा दिलाती,
दुःसाधना दुखमयी विष ही पिलाती।।28।।

श्रद्धा समेत तुम में रममान होता,
वो ओज तेज तुम सा स्वयमेव ढोता।
काया हि कंचन बने कि अचेतना हो,
आश्चर्य क्या? द्युतिमयी यदि चेतना हो।।29।।

जैसा कि वृक्ष फल फूल लदा सुहाता,
माथा, धरा जननि के पद में झुकाता।
ऐसे लगे कि गुण भार लिए हुए हो,
चैतन्यरूप-जननी पद में झुके हो।।30।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छत्रादि स्वर्णमय वैभव पा लिए हो,
स्वामी! न किन्तु उनसे चिपके हुए हो।
तेरी अपूर्व गरिमा गणनायकों से,
जाती कही न फिर क्या? हम बालकों से।।31।।

विज्ञानरूपरमणी तुममें शिवाली,
जैसी लसी अमित अव्यय कांतिवाली।
वैसी नहीं शशिकला शशि में, निराली,
अत्यन्त चूँकि कुटिला व्यय-शील-वाली।।32।।

देखा विभामय विभो मुख आपका हैं,
ऐसा मुझे सुख मिला नहीं नाप का है।
जैसा यहां गरजता लख मेघ को है,
पाता मयूर सुख भूलंत खेद को है।।33।।

सर्वज्ञ हो इसलिए विभु हो कहाते,
निस्संग हो इसलिए सुख चैन पाते।
मैं सर्व संग तजके तुम संग से हूँ,
आचार्य आत्म सुख लीन अनंग से हूँ।।34।।

आकाश में उदित हो रवि विश्वतापी,
संतप्त त्रस्त करता जग को प्रतापी।
पै आप कोटि रवि तेज स्वभाव पाये,
बैठे मदीय उर में न मुझे जलाये।।35।।

वे कामधेनु सुरपादप स्वर्ग में ही,
सीमा लिए दुख घुले सुख दे, विदेही!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पै आपका स्तवन शाश्वत मोक्ष-दाता,
ऐसा वसन्त तिलका यह छन्द गाता।36।।

जो आपकी स्तुति सरोवर में घुली है,
मेरी खरी श्रमणता शुचि हो धुली है।
तो साधु स्तुत्य मम क्यों न सुचेतना हो?
औ शीघ्र क्यों न कल-केवल-केतना हो?।37।।

तल्लीननित्य निज में तुम हो खुशी से,
नीरादि से परम शीतल हो इसी से।
पा अग्नि योग जल है जलता जलाता,
कर्माग्नि से तुम नहीं यह साधु गाथा।38।।

लो आपकी रमणि एक गुणावली है,
दूजी सती विषद कीर्तिमयी भली है।
पै एक तो रम रही नित आप में है,
कैसा विरोध यह? एक दिगंत में है।39।।

देवाधिदेव मुनिवन्द्य कुकाम वैरी,
पाती प्रवेश तुम में मति हर्ष मेरी।
जैसी नदी अमित सागर में समाती,
होती सुखी मिलन से दुख भूल जाती।40।।

उत्फुल्ल नीरज खिले तुम नेत्र प्यारे,
हैं शोभते करुण केशर पूर्ण धारें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरा वहीं पर अतः मन स्थान पाता,
जैसा सरोज पर जा अलि बैठ जाता।141।।

हैं आप दीनजन रक्षक, साधु माने,
दावा प्रचण्ड विधि कानन को जलाने।
पंचेंद्रि-मत्त-गज-अंकुश हैं सुहाते,
हैं मेघ विश्वमदताप-तृषा बुझाते।142।।

चारों गती मिट गयी तुम ईश! शम्भू,
हो ज्ञान पूर निजगम्य अतः स्वयम्भू,
ध्यानाग्नि दीप्त मम हो तुम वात हो तो,
संसार नष्ट मम हो तुम हाथ हो तो।143।।

हो आपको नमन तो सघना अघाली,
पाती विनाश पल में दुख शील वाली।
फैला पयोद दल हो नभ में भले ही,
थोड़ा चले पवन तो बिखरे उड़े ही।144।।

श्री पाद मानस सरोवर आपका है,
होते सुशोभित जहाँ नख मौक्तिका हैं।
स्वामी! तभी मनस हंस मदीय जाता,
प्रायः वहीं विचरता चुग मोति खाता।145।।

लो! आपके चरण में भवभीत मेरा,
विश्रान्त है अभय पा मन है अकेला।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माँ का उदारतम अंक अवश्य होता,
निःशंक हो शरण पा शिशु चूँकि सोता।।46।।

हो वर्धमान गतमान प्रमाणधारी,
क्यों ना सुखी तुम बनो जब निर्विकारी।
स्वात्मस्थ हो अभय हो मन अक्षजेता,
हो दुःख से बहुत दूर निजात्मवेत्ता।।47।।

सन्मार्ग पे विचरता मुनि हो अकेला,
स्वामी ! हुआ बहुत काल व्यतीत मेरा।
मेरे थके पग अभी कितना विहारा,
बोलो कि दूर कितना तुम धाम प्यारा।।48।।

स्वामी अपूर्व रवि हो द्युति धाम प्यारे,
ये तेज हीन रवि सम्मुख हो तुम्हारे,
मानो नहीं स्वयम को रवि हे विरागी!
क्यों अग्नि है मम तपो मणि में सुजागी?।।49।।

हे ईश धीश मुझमें बल बोधि डालो!
कारुण्य धाम करुणा मुझमें दिखालो।
देहात्म में बस विभाजन तो करूँगा,
शीघ्रातिशीघ्र सुख भाजन तो बनूँगा।।50।।

विज्ञान से शमित की रति की निशा है,
पाया प्रकाश तुमने निज की दशा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तो भी निवास करते मुझमें विरागी!
आलोक धाम तुम हो, तम मैं, सरागी।।51।।

शुद्धात्म में तुम सुनिश्चय से बसे हो,
जो जानते जगत को व्यवहार से हो।
होती सदा सहजवृत्ति सुधी जनों की,
इच्छामयी विकृत वृत्ति कुधी जनों की।।52।।

संसार को निरखते न यथार्थ में है।
लो आप केवल निजीय पदार्थ में हैं।
संसार ही झलकता दृग में तथा हैं,
नाना पदार्थ दल दर्पण में यथा हैं।।53।।

स्वादी तुम्हीं समयसार स्वसम्पदा के,
आदी कुधी सम नहीं जड़ सम्पदा के।
औचित्य है भ्रमर जीवन उच्च जीता,
मक्खी समा मल न, पुष्प पराग पीता।।54।।

है वस्तुतः जड़ अचेतन ही तुम्हारी,
वाणी तथापि जग पूज्य प्रमाण प्यारी।
है एक हेतु इसमें तुमने निहारा,
विज्ञान के बल अलोक त्रिलोक सारा।।55।।

सम्यक्त्व आदिक निजी बल मोक्षदाता,
वे ही अपूर्ण जब लौं सुर सौख्यधाता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

औचित्य वस्त्र बनता निज तन्तुओं से,
ऐसा कहा कि तुमने मित सत् पदों से।।56।।

होता विलीन भवदीय उपासना में,
तो भूलता सहज ही सुख यांचना मैं।
जो डूबता जलधि में मणि ढूँढ़ लाने,
क्या मांगता जलधि से मणि दे! सयाने!।।57।।

औचित्य! है प्रथम अम्बर को हटाया,
पश्चात् दिगम्बर विभो! मन को बनाया।
रे! धान का प्रथम तो छिलका उतारो,
लाली उतार, फिर भात पका, उड़ालो।।58।।

शंका न मृत्यु भय ने सबको हराया,
संसार ने तब परिग्रह को सजाया।
हे सेव्य! हे अभय! सेवक मैं विरागी,
मैं भी बनूँ अभय जो सब ग्रन्थत्यागी।।59।।

जो देह नेह मद को तजना कहाता!
स्वामी! अतीन्द्रिय वही सुख है सुहाता।
तेरे सुशान्त मुख को लख हो रहा है,
ऐसा विबोध, मन का मल धो रहा है।।60।।

गंभीर सागर नहीं शशि दर्श पाता,
गांभीर्य त्याग तट बाहर भाग आता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गंभीर आप रहते निज में इसी से,
होते प्रभावित नहीं जग में किसी से।।61।।

है चाहता अबुध ही तुम पास आना,
धारे बिना नियम संयम शील बाना।
धीमान कौन वह है! श्रम देख रोये,
चाहे यहाँ सुफल क्या बिन बीज बोये।।62।।

शुद्धात्म में रुचि बिना शिवसाधना है,
रे निर्विवाद यह आत्मविराधना है।
हो आत्मघात शिर से गिरि फोड़ने से,
तेरा यही मत इसे सुख मानने से।।63।।

ना आत्म तृप्ति उदयागत पुण्य में है,
वो शांति की लहर ना शशिबिम्ब में है।
जो आपके चरण का कर स्पर्श पाया,
आनन्द ईदृश कहीं अब लौं न पाया।।64।।

स्वामी! निजानुभवरूप समाधि द्वारा,
पाया, मिटी-भव-भवाब्धि, भवाब्धि पारा।
ये धैर्य धार बुध साधु समाधि साधें,
साधें अतः सहज को निज को अबाधें।।65।।

है वज्र, कर्म-धरणी-धर को गिराता,
दावा बना कुमत कानन को जलाता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसा रहा सुखद शासन शुद्ध तेरा,
पाथेय पंथ बन जाये सहाय मेरा।66।।

हो तेज भानु भवसागर को सुखाने,
गंगा तुम्हीं तृषित की कुतृषा बुझाने।
हो जाल इंद्रियमयी मछली मिटाने,
मैं भी तुम्हें, सुबुध भी, इस भाँति मानें।67।।

मेरी मती स्तुति सरोवर में रहेगी,
होगी मदाग्नि मुझमें, रह क्या करेगी।
पीयूष सिन्धु भर में विषबिन्दु क्या है?
अस्तित्व हो पर प्रभाव दबाव क्या है?।68।।

स्याद्वादरूप मत में, मत अन्य खारे,
ज्यों ही मिले मधुर हो बन जाएं प्यारे।
मात्रानुसार यदि भोजन में मिलाओ,
खारा भले लवण हो अति स्वाद पाओ।69।।

ले आपकी प्रथम मैं स्तुति का सहारा,
पश्चात् नितांत निज में करता विहारा।
ज्यों बीच बीच निज पंख विहंग फैला,
फैला विहार करता नभ में अकेला।70।।

मिथ्यात्व से भ्रमित चित्त सही नहीं है,
तेरे उसे वचन ये रुचते नहीं हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्री मिला पय उसे रुचता कहाँ है?
जो दीन पीड़ित दुखी ज्वर से अहा! है।71।।

लालित्य पूर्ण कविता लिख के तुम्हारी,
होते अनेक कवि हैं कवि नामधारी।
मैं भी सुकाव्य लिख के कवि तो हुआ हूँ,
आश्चर्य तो यह निजानुभवी हुआ हूँ।72।।

श्रद्धासमेत तुमको यदि जानता है,
शुद्धात्म को वह अवश्य पिछानता है।
धूवाँ दिखा अनल का अनुमान होता,
है तर्क शास्त्र पढ़ते दृढ़ बोध होता।73।।

मोहादि कर्म मल को तुमने मिटाया,
स्वामी स्वकीय पद शाश्वत सौख्य पाया।
लेता सहार मुनि हो अब मैं तुम्हारा,
तोता जहाज तज कुत्र उड़े बिचारा?।74।।

त्यों आपके स्तवन की किरणावली है,
पाती प्रवेश मुझमें सुखदा भली है।
ज्यों ज्योति पुंज रवि की प्रखरा प्रभाली,
हो रंध्र में सदन के घुसती निराली।75।।

कामारिरूप तुम में मन को लगाता,
है वस्तुतः मुनि मनोभव को मिटाता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हो जाय नाश जब कारण का तथापि,
क्या कार्य का जनम हो जग में कदापि ?।76।।

स्वामी तुम्हें न जिसने रुचि से निहारा,
देता उसे न "दृग" दर्शन है तुम्हारा।
जो अन्ध है, विमल दर्पण क्या करेगा,
क्या नेत्र देकर कृतार्थ उसे करेगा ?।77।।

वाणी सुधा सदृश सज्जन संगति से,
तेरी बने कलुष दुर्जन-संगती से।
औचित्य मेघ जल है गिरता नदी में,
तो स्वाद्य पेय बनता, विष हो अही में।78।।

जैसा सुशान्त रस वो मम आत्म से है,
धारा प्रवाह झरता इस काव्य से है।
वैसा कहाँ झर रहा शशि बिम्ब से है,
पूजें तुम्हें तदपि दूर सुवृत्त से है।79।।

संसार के विविध वैभव भोग पाने,
पूजें तुम्हें बस कुधी जड़, ना सयाने।
ले स्वर्ण का हल, कृषी करता कराता,
वो मूर्ख ही कृषक है जग में कहाता।80।।

है मोह नष्ट तुममें फिर अन्न से क्या ?
त्यागा असंयम, सुसंयम भार से क्या ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मारा कुमार तुमने फिर वस्त्र से क्या?
हैं पूज्य ही बन गये, पर पूज्य से क्या?।।81।।

मेरा जभी मन बना शिवपंथगामी,
संसार भोग उसको रुचते न स्वामी।
धीमान कौन वह है घृत छोड़ देगा,
क्या! मान के परम नीरस छाछ लेगा।।82।।

मेरी भली विकृति पै मति चेतना है,
चैतन्य से उदित है जिन-देशना है।
कल्लोल के बिन सरोवर तो मिलेगा,
कल्लोल वो बिनं सरोवर क्या मिलेगा?।।83।।

लो! आपके स्तवन से बहु निर्जरा हो,
स्वामी! तथापि विधिबंधन भी जरा हो।
अच्छी दुकान चलती धन खूब देती,
तो भी किराय कम से कम क्या न लेती?।।84।।

वो आपकी सकल वस्तु प्रकाशिनी है,
नासा, प्रमाणमय, विभ्रम-नाशिनी है।
नासाग्र पे इसलिए तुम साम्यदृष्टि,
आसीन है सतत शाश्वत शांति सृष्टि।।85।।

हैं आप नम्र गुरु चूंकि भरे गुणों से,
हैं पूज्य "राम" निज में रमते युगों से।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पी, पी, पराग निजबोधन की सुखी हैं,
नीराग हैं पुरुष हैं, प्रकृती तजी हैं।।86।।

हो धीर वीर तुम चूँकि निजात्म जेता,
मारा कुमार तुमने "शिव" साधु नेता।
सर्वज्ञ हो इसलिए तुम सर्वव्यापी,
बैठे मदीय मन में अणु हो तथापि।।87।।

साता नहीं उदय में जब हो असाता,
मैं आपके भजन में बस डूब जाता।
है चन्द्र को निरखता सघनी निशा में,
जैसा चकोर रुचि से न कभी दिवा में।।88।।

धाता तुम्हीं अभय दे जग को जिलाते,
नेता तुम्हीं सहज सत्पथ भी दिखाते।
मृत्युंजयी बन गये भगवान् कहाते,
सौभाग्य है, कि मम मन्दिर में सुहाते।।89।।

ऐसी मुझे दिख रही तुम भाल पे है,
जो बाल की लटकती लट गाल पे है।
तालाब में कमल पे अलि भा रहा हो,
संगीत ही गुणगुणा कर गा रहा हो।।90।।

काले घने कुटिल चिक्कण केश प्यारे,
ऐसे मुझे दिख रहे शिर के तुम्हारे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैसे कहीं मलयचन्दन वृक्ष से ही,
हो कृष्ण नाग लिपटे अयि दिव्य देही!।।91।।

चाहूँ न राज सुख मैं सुरसम्पदा भी,
चाहूँ न मान यश देह नहीं कदापि।
हे ईश गर्दभ समा तन भार ढोना,
कैसे मिटे, कब मिटे, मुझको कहो ना।।92।।

मेरी सुसुप्त उस केवल की दशा में,
ये आपकी सहज तैर रहीं दशायें।
यों आपका कह रहा श्रुत सत्य प्यारा,
मैंने उसे सुन गुणा रुचि संग धारा।।93।।

संसार से विरत हूं तुम ज्योति में हूं,
निस्तेज कर्म मुझमें जब होश में हूं।
बैठा रहे निकट नाग कराल काला,
टूटा हुआ, कि जिसका विषदन्त भाला।।94।

विज्ञान से अति सुखी बुध वीतरागी,
अज्ञान से नित दुखी मद-मत्त, रागी।
ऐसा सदा कह रहा मत आपका है,
धर्मात्म का सहचरी, रिपु पाप का है।।95।।

हो आज सीमित भले मम ज्ञान धारा,
होगी असीम तुम आश्रय पा अपारा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रारम्भ में सरित हो पतली भले ही,
पै अन्त में अमित सागर में ढले ही।।96।।

लो आपके सुखमयी पदपंकजों में,
श्रद्धासमेत नत हूं तब लौं विभो मैं।
विज्ञानरूप रमणी मम सामने आ,
ना नाच गान करती जब लौं न नेहा।।97।।

स्वामी तुम्हें निरख सादर नेत्र दोनों,
आरूढ़ मोक्षपथ हो मम पैर दोनों।
ले ईश नाम रसना, शिर तो नती से,
यों अंग-अंग हरषे तुम संगती से।।98।।

हो मृत्यु से रहित "अक्षर" हो कहाते,
हो शुद्ध जीव "जड अक्षर" हो न तातैं।
तो भी तुम्हें न बिन अक्षर जान पाया,
स्वामी अतः स्तवन अक्षर से रचाया।।99।।

चाहूँ कभी न दिवि को अयि वीर स्वामी,
पीऊं सुधारस स्वकीय बनूँ न कामी।
पा "ज्ञानसागर" सुमंथन से सुविद्या,
विद्यादिसागर बनूँ तज दूँ अविद्या।।100।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भूल क्षम्य हो

लेखक कवि मैं हूँ नहीं मुझमें कुछ नहिं ज्ञान
त्रुटियाँ हो यदि यहाँ शोध पढ़ें धीमान।।1।।

स्थान समय परिचय

आत्म साधना कुछ बढ़ी कुण्डलगिरि पै हर्ष
श्रीधर केवलिचरण का सविनय कर संस्पर्श।।2।।
गुप्ति गगन गतिसंग की अमा अषाढ़ी आज
लिखा गया यह ग्रन्थ है भुक्ति-मुक्ति के काज।।3।।

(इति शुभं भूयात्)

निजानुभव शतक

आचार्य श्री विद्यासागर जी कृत

जो जानते सकल लोक तथा अलोक,
ना मान-यान परिरूढ़ सदा अशोक।
ऐसे महेश, वृषभेश, प्रभो! जिनेश,
रक्षा करें मम, मुझे सुख दें विशेष।।1।।

थे ज्ञानसागर गुरू मम प्राण प्यारे,
थे पूज्य साधु गण से बुध मुख्य न्यारे,
शास्त्रानुसार चलते, मुझको चलाते,
वंदूँ उन्हें विनय से शिर को झुकाते।।2।।

वाणी जिनेन्द्र-कथिता दुखहारिणी है,
संत्रस्त भव्य जन को सुखदायिनी है।
तेरा करूँ स्तवन मैं अयि अम्बदेवी!
तो शीघ्र ही बन सकूँ निज आत्मसेवी।।3।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्बोधनार्थ निज को कुछ मैं लिखूँगा,
शुद्धोपयोग जिससे द्रुत पा सकूँगा।
सन्ताप, पाप सपने, अपने तजूँगा,
तो वीतरागमय भाव सदा भजूँगा।।4।।

है जीव का अमिट जो उपयोग रूप,
होता वही त्रिविध है, जड़ से अनूप।
शुद्धोपयोग जब हो भव का वियोग,
दे स्वर्ग, मोक्ष क्रम बार शुभोपयोग।।5।।

देता अतीव दुख है अशुभोपयोग,
ऐसा सदीव कहते बुध सन्त लोग।
सारे सुधी अशुभ को तज योग धारे,
पावे पवित्र पद को शिव को पधारे।।6।।

मिथ्यात्व रूप वह है अशुभोपयोग,
सम्यक्त्व रूप यह सत्य शुभोपयोग।
संसार हो प्रथम से सहसा अनन्त,
दूजा परीत कर दे अयि देव सन्त!।।7।।

संसार क्षार जल में वह है गिराता,
शुद्धोपयोग पय को यह है पिलाता।
रे! काल कूट इक है दुख दे नितान्त,
तो एक औषध समा सुख दे प्रशान्त।।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देही बने अशुभ से, भव में गुलाम,
विश्राम ही न मिलता, न मिले स्वधाम।
तो भी न मूढ़ यह भूल सुधारता है,
मोही न गूढ़ निज तत्व विचारता है।।9।।

साधू सुधी धरम को उर धार ध्याता,
पाता पता परम का बनता विधाता।
अज्ञात जो सुचिर था वह ज्ञात होता,
जीता निजीय सुख को दुख सर्व खोता।।10।।

जो अन्य का परिचयी, निज का नहीं है,
होता सुखी न वह चूँकि परिग्रही है।
जो बार-बार पर को लख फूलता है,
संसार में भटकता वह भूलता है।।11।।

जो-जो सुखार्थ जड़ को जब हैं जुटाते,
पाते नहीं सुख कभी दुख ही उठाते।
क्या कूट भूस तृण को हम धान्य पाते,
अक्षुण्ण कार्य करते थक मात्र जाते।।12।।

विज्ञान को सहज ही निज में जगाना,
रे! हाट जाकर उसे न खरीद लाना।
तू चाहता यदि उसे अति शीघ्र पाना,
आना नहीं, भटकना न कहीं न जाना।।13।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीमा न है सहज की, वह है अनन्त,
ऐसे जिनेन्द्र कहते अरहन्त सन्त।
है ज्ञानगम्य, अतिरम्य, न शब्दगम्य,
तेजोमयी, अतुलनीय तथा अदम्य।।14।।

आकाश सदृश विशाल, विशुद्ध सत्ता,
योगी उसे निरखते वह बुद्धिमत्ता।
सत्यं शिवं परम सुन्दर भी वही है,
अन्यत्र छोड़ उसको सुख ही नहीं है।।15।।

लक्ष्मी मिले, मिलन हो, मम हो विवाह,
मूढ़ात्म को विषय की दिन-रैन चाह।
साधू न किन्तु पर में सुख को बताते,
क्या नीर के मथन से नवनीत पाते?।।16।।

तादात्म्य मान निज कर जड़ देह साथ,
हा! हा! कदापि कर तू मत आत्मघात।
क्यों तू मुधा अमृत से निज पाद धोता,
धिक्कार व्यर्थ विष पीकर प्राण खोता।।17।।

साक्षात्कार प्रभु से जब लों न होता,
संसारि जीव तब लों भव बीच रोता।
पट्टी सु साफ करता नहीं घाव धोता,
कैसे सुख मिले, दुख-बीज बोता।।18।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वाधीनता, सरलता, समता, स्वभाव,
तो दीनता, कुटिलता, ममता, विभाव।
जो भी विभाव धरता, तजता स्वभाव,
तो डूबती उपल नाव नहीं बचाव।।19।।

तेरे लिए भव असम्भव भव्य! भावी,
होता न मोह तुझ पे यदि तीव्र हावी।
है मोह-भाव भव में सबको भ्रमाता,
निर्मोह भाव गह जीव बने प्रमाता।।20।।

जो जानते निज निरंजन ज्ञान को हैं,
औ आत्मलीन रहते, तज मान को हैं।
हो प्राप्त क्यों न उनको सुर-सिद्धियाँ भी,
जावें जहाँ सुख मिले, मिलता वहाँ भी।।21।।

जो राग-द्वेष करते, धर नग्न भेष,
पाते जिनेश! वृषभेश! न सौख्य लेश।
ना मोक्ष मात्र कच-लुंचन-कर्म से हो,
साधु नहीं वसन-मुंचन मात्र से हो।।22।।

आनन्द-आत्म-रस का मुनि नित्य लेता,
होता वही अति सुखी, जिन शास्त्रवेत्ता।
तो रोष-तोष तजता, बनताऽरि-जेता,
क्रीड़ा करे सतत मुक्ति-रमा-समेता।।23।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरी खरी शरण है, सम शुद्ध आत्मा,
होते सुशीघ्र जिससे वसु कर्म खात्मा।
जो सत्य है, सहज है, निज है, सुधा है,
तृष्णा नहीं, न जिसको लगती क्षुधा है।।24।।

आकाश में कठिन पत्थर फेंक देना,
जैसा निजीय कर से शिर फोड़ लेना।
वैसा सदैव करता निज आत्मघात,
जो एकता समझता जड़ देह साथ।।25।।

नादान, दीन, मतिहीन, कुशील, मोही!
क्यों "सार है" कह रहा, जड़ देह को ही।।
तू काँच में रम रहा, तज दिव्य हीरा!!
क्यों घास तू चर रहा, तज मिष्ट सीरा।।26।।

होती यदि सहज ही, निज की प्रतीति,
सारी तदा विनशती, रति, ईति, भीति।
हे जागती, उछलती, निज नीति रीति,
तो छूटती न रहती, जड़ देह-प्रीति।।27।।

ज्योत्स्ना जगे, तम टले, नव चेतना है,
विज्ञान-सूरज छटा तब देखना है।
देखे जहाँ परम पावन है प्रकाश,
उल्लास, हास, सहसा लसता विलास।।28।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोही सदैव पर में सुख ढूँढ़ता है,
जो झूलता विषय में नित फूलता है।
पाता अतः नियम से मृग भाँति क्लांति,
स्वामी! नहीं देख टले, मिलती न शान्ति।।29।।

ज्ञानी कभी न रखता पर की अपेक्षा,
शुद्धात्मलीन रहता, सबकी उपेक्षा।
माला गले शिव-रमा फिर क्यों न डाले?
या पास क्यों न उसको सहसा बुला ले।।30।।

करुण्य-भाव उर लाकर धार बोधी,
क्यों तू बना सुचिर से निजधर्म-द्रोही।
विश्वास तू धरम में कर, श्रेष्ठ सो ही,
विश्राम ले, अब जरा, तज मोह मोही।।31।।

ना बाल, लाल, न ललाम, न नील काला,
तू तो निराल, कल, निर्मल शील वाला।
तू शीघ्र बोधमय ज्योति शिखा जला ले,
अज्ञात को निरख ले, शिव सौख्य पाले।।32।।

रे मूढ़! तू जनमता, मरता, अकेला,
कोई न साथ चलता, गुरु भी न चेला।
है स्वार्थ पूर्ण यह निश्चय एक मेला,
जाते सभी विछुड़ के जब अन्त बेला।।33।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैं कौन हूँ? किधर से अब आ रहा हूँ।
जाना कहाँ? इधर से जब जा रहा हूँ।
ऐसा विचार यदितू करता न प्राणी,
कैसे तुझे फिर मिले वह मुक्ति-रानी?।34।।

चक्री बने सुर बने तुम सार्वभौम,
पै अन्त में फल मिला, सुख का विलोम।
तो अग्नि में सहज शीतलता कहाँ है?
जो उष्णता धधकती रहती वहाँ है।35।।

सत्ता नहीं जनमती उसका न नाश,
पर्याय का जनन केवल और ह्रास।
पर्याय है लहर, वारिधि सत्य-सत्ता
ऐसा सदैव कहते, गुरु देव वक्ता।36।।

पर्याय को क्षणिक को लख मूढ़ रोता,
सामान्य को निरखता, बुध तुष्ट होता।
विज्ञान की विकलता दुख क्यों न देगी?
तृष्णा न क्षार जल से मिटती, बढ़ेगी!!।37।।

दीवार है अमित औ अविरुद्ध द्वार,
क्यों हो प्रवेश निज में जब है विकार
कैसे सुने जब कि अन्दर मुक्ति-नार,
जो आप बाहर खड़े करते पुकार।38।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थायी निजीय सुख है, वह है असीम,
तो सौख्य ऐन्द्रियज है, दुख है, ससीम।
तू अन्तरंग, बहिरंग, निसंग होता,
तो शीघ्र दुःख टलता सुख सत्य जोता।139।।

देखो! नदी प्रथम है निज को मिटाती,
खोती तभी, अमित सागर रूप पाती।
व्यक्तित्व को, अहम् को, मद को मिटा दे,
तू भी स्व को सहज में, प्रभु में मिला दे।140।।

ये नाम, काम, धन-धाम, सभी विकार,
तू शीघ्र त्याग इनको, बन निर्विकार।
साकार हो फिर सभी तव जो विचार,
साक्षात्कार प्रभु से, निज में विहार।141।।

निस्सार जान तजते, बुध लोक भोग,
होते सुखी नियम से उर धार योग।
नीरोगता जब मिले, रहता न रोग,
होता सुयोग सुख का, दुख का वियोग।142।।

अत्यन्त हर्ष सुख में, दुख में विषाद,
क्यों तू सदैव करता अति दीन-नाद।
लेता निजीय रस का तब लौं न स्वाद,
संसार में भटक तू जब लौं प्रमाद।143।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ना सम्पदा न विपदा रहती सदा है,
दोनों अहो! प्रवहमान, मृषा, मुधा है।
स्थायी नहीं क्षणिक जो मिटती उषा है,
काली वहीं तदुपरान्त घनी निशा है।।44।।

खाना खिला, जल पिला, तन को सुलाता,
तू देह की मलिनता, जल से धुलाता।
चिन्ता नहीं पर तुझे निज की अभी भी,
कैसे तुझे सुख मिले, न मिले कभी भी।।45।।

स्वादिष्ट है अशन तू इसको खिलाता,
घी दूध औ सरस पेय तथा पिलाता।
तो भी सदा तृषित पीड़ित मात्र भूखा,
रे मूढ़! कार्य तव है कितना अनूखा।।46।।

आत्मा रहा, रह रहा, चिर ओ रहेगा,
कोई कदापि उसको न मिटा सकेगा।
विश्वास ईदृश न हो अयि भव्य लोगो!!
सारे अरे! सुचिर दुस्सह दुःख भोगो।।47।।

है आँख का विषय पुदगल-पिंड मात्र,
ऐसा मुनीश कहते, यह सत्य शास्त्र।
आत्मा अमूर्त नित है, वह ज्ञानगम्य,
चैतन्य-स्रोत सुख-धाम न चक्षुगम्य।।48।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्या हो गया समझ में मुझ को न आता,
क्यों बार-बार मन बाहर दौड़ जाता।
स्वाध्याय, ध्यान करके मन रोध पाता,
पै श्वान सा मन सदा मल शोध लाता ।।49।।

होता सुखी स्व-पर बोध बिना न जीव,
रोता सदीव, दुख को सहता अतीव।
स्वामी! प्रणाम मम हो उसको अनन्त,
पीड़ा मिटे, बल मिले जिससे ज्वलन्त।।50।।

धोखा दिया स्वयं को अब लौं अवश्य,
जाना गया न हमसे निज का रहस्य।
ऐसी दशा जब रही सबकी हमारी,
तो क्यों हमें वह वरे-वर मुक्ति-नारी।।51।।

तू कौन है? विदित है? कुछ है पता भी,
क्यों मौन है? स्मरण है निज की कथा भी?
तू जानता न निज को, न सुखी बनेगा,
संसार दुःख सहता, भ्रमता फिरेगा।।52।।

तू बार-बार मरता, तन धार धार,
पीड़ा अतः सह रहा, उसका न पार।
जो भोग-लीन रहता, तज आत्म ध्यान,
होता नहीं वह सुखी अय भव्य! जान।।53।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विज्ञान मूल यह है, सुख वैभवों का,
होता विनाश वह दुख कई भवों का।
भानू उगे, तम टले, उजला प्रभात,
उल्लास, हास, सहसा सुख एक साथ।।54।।

आधार सत्य सुख का जब आत्मा है,
तू क्यों भला भ्रमित हो पर में रमा है।
ज्ञानी कभी न तुझसे पर में रमेंगे,
साधू कभी न भव कानन में भ्रमेंगे।।55।।

शुद्धात्म का न यदि संस्तव तू करेगा,
आनन्द का न झरना तुझ में झरेगा।
संसार में जनम ले कब लौं मरेगा,
तू देह का वहन तो कब लौं करेगा।।56।।

जो भी यहाँ जगत में कुछ दृश्यमान,
स्थायी नहीं वह सभी क्षण नश्यमान।
क्या जान, मान मन! तू करताऽतिमान,
क्यों तू वृथा नित व्यथा सहता महान।।57।।

ना नारकी न नर वानर मैं न नारी,
हूँ निर्विकार पर निर्मल बोधधारी।
आदर्श सादृश विशुद्ध स्वभाव मेरा,
मेरा नहीं जड़मयी यह देह डेरा।।58।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरी खरी, सुखकरी रमणी क्षमा है,
शोभावती, भगवती जननी प्रमा है।
मैं बार-बार निज को करता प्रणाम,
आनन्द नित्य फिर तो दुख का न नाम।।59।।

ब्रह्मा, महेश, शिव मैं, मम नाम "राम"
मेरा विराम मुझ में, मुझमें न काम।
ऐसा विवेक मुझको अधुना हुआ है,
सौभाग्य से सहज द्वार अहो! खुला है।।60।।

माता, पिता, सुत, सुता, वनिता व भ्राता,
मेरे न ये, न मम है इन संग नाता।
मैं एक हूँ पृथक् हूँ सबसे सदा से,
मैं शुद्ध हूँ भरित-बोधमयी सुधा से।।61।।

दारा नहीं शरण है, मनमोहिनी है,
देती अतीव दुख है, भव वर्धिनी है।
संसार-कानन जहाँ वह सर्पिणी है,
मायाविनी अशुचि है, कलिकारिणी है।।62।।

काले घने जलद के दल डोलते हैं,
जो व्योम में "गड़गड़ाहट" बोलते हैं।
पै मौन मेरु सम वे ऋषि लोग सारे,
शुद्धात्म चिन्तन करें, निज को निहारें।।63।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्षा घनी, मूसल-धार, अपार नीर,
योगी खड़े स्थिर, दिगम्बर है शरीर।
आश्चर्य पै न उनके मुख पै विकार,
पीड़ा, व्यथा, दुख नहीं समता अपार।।64।।

जो बीच, बीच बिजली, पल आयुवाली,
ज्योतिर्मयी चमकती, मिटती प्रणाली।
विस्तार है तिमिर का वन में तथापि,
आलोक को निरखते मुनि वे अपापी।।65।।

तीव्रातितीव्र चलती अति शीत-वाय,
तो झांय-झांय करते तरु सांय-सायं।
लाते न किन्तु मुनि वे मन में कषाय,
पाते अतः सुख सही, बनते अकाय।।66।।

सारी धरा जलमयी नभ मेघमाला,
भानू हुआ उदित हो, पर ना उजाला।
ऐसी भयानक दशा फिर भी स्व-लीन,
वे धन्य हैं, अभय हैं, मुनि जो प्रवीन।।67।।

हेमंत में हितमयी हित से मही है,
दाहात्मिका किरण भास्कर की नहीं है।
तो भी परीषहजयी ऋषिराज सारे,
निर्ग्रन्थ हो करत ध्यान नदी किनारे।।68।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu'Trust/eGangotri

निश्चिन्त हो, निडर, निश्चल हो विनीत,
योगी रहे स्वयं में, यह भव्य रीत।
वे प्रेम से, विनय से, निज-गीत गाते,
चाँचल्य चित्त तब ही, द्रुत जीत पाते।69।।

छाया नहीं विपिन में, गरमी घनी है,
तेजोमयी अरुण की किरणें तनी हैं।
पै योग धार, जड़ काय सुखा रहे हैं,
ज्ञानी तभी, अघ कषाय घटा रहे हैं।70।।

सत्यार्थ देव गुरु आगम की सुसेव,
आलस्य त्याग मुनि वे करते सदैव।
इच्छा नहीं विषय की रखते कदापी,
संभोग लीन रहते, जग मात्र पापी।71।।

अत्यन्त लू चल रही, नभ धूल फैली,
है स्वेद से लतपथी मुनि देह मैली।
है ध्यान लीन सब तापस वे तथापि,
निष्कम्प मेरु सम, ना डरते कदापि।72।।

संतप्त है तपन आतप से शिलाएं,
सूखे हुए सरित हैं सब वाटिकाएं।
देखो! तथापि तपते गिरि पै तपस्वी,
जो पाप, ताप तजते बनते यशस्वी।73।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निन्दा करें, स्तुति करें, तलवार मारें,
या आरती मणिमयी सहसा उतारें।
साधू तथापि मन में समभाव धारें,
बैरी सहोदर जिन्हें इकसार सारे।74।।

जो जानते भव को वन को समान,
वे पूजनीय भजनीय अहो! महान।
दुर्गन्ध से न करते बुध लोग ग्लान,
तो फूलते न सुख में, दुख में न म्लान।75।।

जो आत्मध्यान करते, करते न मान,
मानापमान जिनको सब हैं समान।
प्रत्यक्ष ज्ञान गहते, भव पार जाते,
वे सिद्ध लौट न कभी भव बीच आते।76।।

जो रोष तोष तज के रहते विराग,
और भोग को समझते विष-कृष्ण नाग।
वे ही विभो! विमल केवल बोध पाते,
रागी रहे सब दुखी, उर क्रोध लाते।77।।

हे वीतराग पथ जो न जिसे सुहाता,
निभ्रान्त चोर वह दुष्ट, कुधी कहाता।
जाता अतः नरक में अति दुःख पाता,
कालुष्य-भाव भव में उसको सताता।78।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सच्चा वही धरम है जिसमें न हिंसा,
होगी नहीं वचन से उसकी प्रशंसा।
आधार मात्र उसका यदि भव्य लेता,
संसार पार करता, बनताऽरिजेता।।79।।

कोई पदार्थ जग में न बुरे न अच्छे,
ऐसा सदैव कहते, गुरूदेव सच्चे।
साधू अतः न करते रति, राग, द्वेष,
नीराग-भाव धरते, धरते न क्लेश।।80।।

योगी स्वधाम तज बाहर भूल आता,
सद्ध्यान से स्खलित हो अति कष्ट पाता।
तालाब से निकल बाहर मीन आता,
होता दुखी, तड़पता, मर शीघ्र जाता।।81।।

ज्ञानी कभी मरण से डरते नहीं हैं,
तो चाहते सुचिर जीवन भी नहीं हैं।
वे मानते, मरण-जीवन देह के हैं,
ऐसा निरंतर सुचिन्तन रे! करे हैं।।82।।

दीक्षा लिए बहुत वर्ष हमें हुए हैं,
शास्त्रानुसार हमने तप भी किए हैं।
इत्थं प्रमत्त मुनि हो, मद जो दिखाते,
वे धर्म से सरकते अति दूर जाते।।83।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो आपको समझते सबसे बड़े हैं,
वे धर्म से बहुत दूर अभी खड़े हैं।
मिथ्याभिमान करना सबसे बुरा है,
स्वामी! अतः न मिलता, सुख जो खरा है।।84।।

मानाभिभूत मुनि, आतम को न जाने,
तो वीतराग प्रभु को वह क्या पिछाने।
जो ख्याति, लाभ निज पूजन चाहता है,
ओ! पाप का वहन ही करता वृथा है।।85।।

तू ने किया विगत में कुछ पुण्य-पाप,
जो आ रहा उदय में स्वयमेव आप।
होगा न बन्ध तब लौं जब लौं न राग,
चिन्ता नहीं उदय से, बन वीतराग!!।।86।।

तू बन्ध हेतु उदयागत कर्म को ही,
है मानता यदि, कदापि न मोक्ष होगी।
संसारका विलय हो न विधि-व्यवस्था,
तो कौन-सी फिर तदा तब हो अवस्था।।87।।

आता यदि उदय में वह कर्म साता,
प्रायः स्वदीय मुख पै सुख-दर्प छाता।
सिद्धान्त का इसलिए तुझको न ज्ञान,
तू स्वप्न को समझता असली प्रमाण।।88।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देती नहीं दुख कभी वह जो असाता,
सांता, असात इनमें तव है न नाता।
ना जानते समझते, जड़ तो रहे हैं,
संवेदना न उनमें, उससे परे है।।89।।

तू धर्म धर्म कहता, उसका न मर्म-
है जानता, फिर मिले, किस भांति शर्म।
क्या धर्म है? विदित है न तुझे अभी भी,
तो क्यों मिले शिव तुझे, न मिले कभी भी।।90।।

सद्बोध-भानु जब लों उगता नहीं है,
आशा-निशा न नशती, तब लों वही है।
ज्ञानी अतः निरखते, सब को सही हैं,
होते नहीं स्खलित वे गिरते नहीं हैं।।91।।

हो जाय, राग यदि आतम का स्वभाव,
ना मोक्ष तत्व रहता सुख का अभाव।
तो विश्व का वितथ हो पुरुषार्थ सारा,
क्यों आयगा फिर प्रभो! भव का किनारा।।92।।

ना मूढ़ता, विषमता, खलता दिखाती,
मिथ्यात्व और जब निन्द्य कषाय जाती।
आत्मा अहो! स्वयं को लखता तदा है,
पाता सहर्ष अविनश्वर संपदा है।।93।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ना अंग-संग मम निश्चय नित्य नाता,
ऐसा निरंतर अहो! समदृष्टि गाता।
औचित्य है, जब मिले, वह मुक्ति राह,
तो देह से न ममता कुछ भी न चाह।।94।।

जो भद्र भव्य, भव से भयभीत होता,
वैराग्य भाव तब है स्वमेव ढोता।
संसार सागर असार अपार क्षार,
यों बार-बार करता मन में विचार।।95।।

विद्रोह, मोह, निज देह सनेह छोड़ो,
औ मान के, दमन के सब दाँत तोड़ो।
सम्बन्ध मोक्ष पथ से अनिवार्य जोड़ो,
तो आपको नम न हो मम जो करोड़ों।।96।।

ना आधि-व्याधि मुझमें, न उपाधियाँ हैं,
मेरा न है मरण, ये जड़ पंक्तियाँ हैं।
मैं शुद्ध चेतन-निकेतन हूँ निराला,
आलोक-सागर, अतः समदृष्टि वाला।।97।।

मिथ्या दिशा पकड़ के जब तू चलेगा,
गन्तव्य थान तुझ को न कभी मिलेगा।
कैसे मिले, सुख भले, दुख क्यों टलेगा,
रागाग्नि से जल रहा, चिर और जलेगा।।98।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वात्मानुभूति-सर में करता न स्नान,
कालुष्य-कालिख कभी न धुले सुजान।
क्यों व्यर्थ ही विषय कर्दम में फँसा है,
भाई वहाँ सुख नहीं, वह तो मृषा है।।99।।

निस्सार भोग जब है यश कीर्ति सर्व,
तो क्यों करें सुबुध लोग वृथैव गर्व।
वे निर्विकार बन के, तज के विकार,
निश्चिन्त होकर करें निज में विहार।।100।।

प्रत्येक काल उठता, मिटता पदार्थ,
है ध्रौव्य भी प्रवहमान वही यथार्थ।
योगी उसे समझते लखते सदीव,
आनन्द काऽनुभव वे करते अतीव।।101।।

स्वामी! "निजानुभव" नामक काव्य प्यारा,
कल्याण खान, भव नाशक, श्राव्य न्यारा।
जो भी इसे विनय से पढ़, आत्म ध्यावे,
"विद्यादिसागर" बन के, शिव सौख्य पावे।।102।।

दोहा -

अजमेर के पास है ब्यावर नगर महान्।
धारा वर्षायोग को ध्येय स्व-पर कल्याण।।103।।
नव-नव चउ द्वय वर्ष कि सुगन्ध दशमी आज।
लिखा गया यह ग्रन्थ है निजानन्द के काज।।104।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावना शतक

(सोलह कारण भावना

शोभे प्रभो परम पावन पा पदों को,
योगी करें नमन ये जिनके पदों को।
सौभाग्य मान उनको उर में बिठा लूँ,
साफल्यपूर्ण निज-जीवन को बना लूँ।1।।

गुरु स्तवन

ध्यानाग्नि से मदन को तुमनें जलाया,
पीयूष स्वानुभव का निज को पिलाया।
धारा सुरत्नत्रयहार, अतः कृपालो!
पूजूँ तुम्हें मम गुरो! मद मेट डालो।2।।

शारदा स्तुति

अन्धा विमोहतम में भटका फिरा हूँ,
कैसे प्रकाश बिन संवर भाव पाऊँ।
हे शारदे! विनय से द्वय हाथ जोड़ूँ,
आलोक दे विषय को विष मान छोड़ूँ।3।।

प्रतिज्ञा

सम्मान मैं समय का करता कराता,
हूँ 'भावनाशतक' काव्य अहो ! बनाता।
मेरा प्रयोजन प्रभो! कुछ और ना है,
जीतूँ विभाव भव को बस भावना है।4।।

1 दर्शन विशुद्धि भावना

आदर्श सादृश सुदर्शन शुद्धि प्यारी
पाके जिसे जिन बने स्व-परोपकारी।
ऐसा जिनेश मत है मत भूल रे! तू,
साक्षात् भवाम्बुनिधि के यह भव्य सेतु।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होता विनष्ट जब दर्शनमोह स्वामी,
जाती तथा वह अनन्त कषाय नामी।
पाते इसे जन तभी जिन! जैन जो हैं,
सद्भारती कह रही जनमीत जो हैं।।6।।

जो अंग अंग करुणारस से भरा है,
शोभायमान दृग से वह हो रहा है।
औचित्य है समझ में यदि बात आती,
अत्युज्ज्वला शशिकला निशि में सुहाती।।7।।

हो प्राप्त, स्वर्ग तक पुण्यविधान से भी,
होता न प्राप्त दृग शस्त निदान से भी।
सत् साधना सहज साध्य सदा दिलाती,
लक्ष्मी अहो मृदुल हाथ तभी मिलाती।।8।।

दुर्जेय मोहरिपु को जिनने दबाया,
शुद्धोपयोग मणिहार गले सजाया।
वे साधु बोध बिन भी दृग शुद्धि पाते,
जो बाह्य में निरत हैं दुख ही उठाते।।9।।

आलोक दे सुजन को रवि से जगाती,
है भव्य कंज दल को सहसा खिलाती।
है पापरूप तम को क्षण में मिटाती,
ऐसी सुदर्शन विशुद्धि किसे न भाती?।।10।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२ विनय सम्पन्नता भावना

ना पाप को, विनय को शिर मैं नमाता,
हे वीर! क्योंकि मुझको निज सौख्य भाता।
जो भी गया तपन तापतया सताया,
क्या चाहता अनल को, तज नीर छाया?।।1।।

सेना विहीन नृप ज्यों जय को न पाता,
त्यों हीन जो विनय से शिव को न पाता।
सत् साधना यदि करे दुख भी टलेगा,
संसार में सहज से सुख भी मिलेगा।।2।।

निर्भीक हो विनय आयुध को सुधारा,
हे वीर! मान रिपु को पुनि शीघ्र मारा।
पाया स्वकीय निधि को जिसने यदा है,
क्या माँगता वह कभी जड़ संपदा है।।3।।

वे व्यर्थ का नहिं घमंड कभी दिखाते,
सन्मार्ग को विनय से विनयी दिखाते।
पापी कुधी तक तभी भवतीर पाते,
विद्वान भी हृदय में जिनको बिठाते।।4।।

संसार में विनय के बिन तू चलेगा,
आनन्द भो अमित और मित क्यों मिलेगा।
योगी सुधी तक सदा इसका सहारा,
लेते अतः नमन हो इसको हमारा।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विद्वेष जो विनय से करते कराते,
निर्भान्त वे नहिं भवोदधि तैर पाते।
जाना उन्हें भव-भवान्तर क्यों न होगा,
ना मोक्ष का विभव संभव भव्य होगा।।16।।

३ सुशील भावना

कामाग्नि से जल रहा त्रयलोक सारा,
देखे जहाँ दुख भरा कुछ ना सहारा।
ऐसे जिनेश कहते, जग के विधाता,
जो काम मान मद त्याग बने प्रमाता।।17।।

पूजा गया मुनिगणों यति योगियों से,
त्यों शील, नीलमणि ज्यों जगभोगियों से।
सत् शील में सतत लीन अतः रहूँ मैं,
लो! मोक्ष को निकट ही फलतः लखूँ मैं।।18।।

गंगाम्बु को न हिम को शशि को न चाहूँ,
चाहूँ न चन्दन कभी मन में न लाऊँ
जो शीलझील मन की गरमी मिटाती,
डूबूँ वहाँ सहज शीतलता सुहाती।।19।।

मैं भूत भावि सब साम्प्रत पाप छोड़ूँ,
चारित्र संग झट चंचल चित्त जोड़ूँ।
सौभाग्य मान जिसको मुनि साधु त्यागी,
हैं पूजते नमन भी करते विरागी।।20।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैसे सती जगत में गजचाल हो तो,
शोभे उषा पवन मन्द सुगन्ध हो तो।
संसार शोभित रहे गतिचार होवें,
सर्वज्ञ सिद्ध सब वे गतिचार खोवें।
वैसा सुशीलव्रत संयमयोग से रे!
होते सुशोभित सुधी, न हि भोग से रे!!
सिद्धान्तपारग सभी गुरु यों बताते,
सद्ध्यान में सतत जीवन हैं बिताते।।21।।

निर्भीक मैं बढ़ रहा शिव ओर स्वामी,
आरूढ़ शीलरथ पै अतिशीघ्रगामी।
लो! काल व्याल-विकराल-कुचाल वाला,
है भीति से पड़ गया वह पूर्ण काला।।22।।

होता विनिर्विष रसायन से धतूरा,
है अग्नि से पिघलता झट मोम पूरा।
ज्यों काम देख शिव को दश प्राण खोता,
विज्ञान को निरख त्यों मद नष्ट होता।।23।।

४ निरन्तर ज्ञानोपयोग भावना

संयोग पा मदन मंजुल कान्त का वे,
जैसा नितान्त ललनाजन मोद पावे।
किंवा सुखी कुमुद वारिधि चन्द्र से हो,
वैसा मदीय मन मोदित ज्ञान से हो।।24।।

ज्ञानोपयोग बन तू मम मित्र प्यारा,
ज्यों अग्नि का पवन मित्र बना उदारा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पीड़ा मिटे, सुख मिले, भव-जेल छूटे,
धारा अपूर्व सुख की न कदापि टूटे।।25।।

स्वामी! भले ही शिर पै शशि भी रहा हो,
विज्ञान से विकल शंकर ही रहा हो।
श्रीकृष्ण पाकर इसे कुछ ही दिनों में,
होंगे सुपूज्य यतियों मुनि सज्जनों में।।26।।

ज्ञानोपयोग वर संवर साधता है,
चांचल्यचित्त झट से यह रोकता है।
भाई निजानुभवियों यति नायकों ने,
ऐसा कहा सुन! जिनेन्द्र उपासकों ने।।27।।

जाज्वल्यमान न कदापि चलायमान,
हो ज्ञानदीप कर में यदि विद्यमान।
रूपी दिखे, पर पदार्थ सभी अरूपी
है स्पष्टरूप दिखते जिन चित्स्वरूपी।।28।।

५ संवेग भावना

माला सुमेरुमणि से जिस भाँति भाती,
वाणी गणेश मुख से जिनकी सुहाती।
संवेग से मनुज भी उस भाँति भाता,
जो है सदैव जिनका गुणगीत गाता।।29।।

बोले विहंगम, उषा मन को लुभाती,
शोभावती वह निशा शशि से दिखाती।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हो पूर्ण शान्तरस से कविता कहाती,
शुद्धात्म में मुनि रहे मुनिता सुहाती।B0।।

ज्यों मारता सहज अर्जुन कौरवों को,
संवेग त्यों दुरति कर्म अरातियों को।
दावा यथा सघन कानन को जलाता,
संसाररूप वन को यह भी मिटाता।।
ज्यों नाग नाम सुन मेंढक भाग जाता,
त्यों ही कषाय इसके नहिं पास आता।
ऐसी विशेष महिमा इनकी सुनी रे!
संवेगरूप धन पा बन जा धनी रे!!।B1।।

संवेग है परम सौख्यमयी उषा का,
धाता, परन्तु शशि है दुखदा निशा का।
निर्दोष है यह सदा शशि दोष धाम,
संवेग श्रेष्ठ शशि से लसता ललाम।B2।।

सम्यक्त्वज्योति बल से रवि को हराता,
हे तेज वाडव भवाम्बुधि को सुखाता।
चांचल्यचित्त मृग को यह व्याघ्र खाता,
संवेग आत्मिक महासुख का विधाता।B3।।

संसार से स्वतन से जड़ भोग से वे,
होते निरीह बुध हैं इनको न सेवें।
पीड़ा अतीव इनसे दिन रैन होती,
शीघ्रातिशीघ्र बुझती निजबोध ज्योति।B4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कामाग्नि से जल रहा यदि पूर्ण रागी,
धाता नहीं वह न शंकर है न त्यागी।
तो विश्व का अमित दुःख त्रिशूलधारी,
कैसे मिटाकर, बने स्वपरोपकारी? ।35।।

ले क्षीर स्वाद रसना अति मोद पाती,
पा फूल फूल-सम नासिक फूल जाती।
संतुष्ट ओ तृषित शीतल नीर से हो,
मेरा सुतृप्त मन तो अघत्याग से हो।36।।

संतुष्ट बाल जननीस्तनपान से हो।
फूले लता ललित लो! जलस्नान से हो।
हो तुष्ट आम्रकलिका लख कोकिला वे,
मेरा कषाय तज के मन मोद पावे।37।।

शास्त्रानुसार यदि त्याग नहीं बना है,
लो! दुःख ही न मिटता उससे अहो है।
जो अन्न-सार रस से अति ही भरा है,
भाई कभी न मिटती उससे क्षुधा है।38।।

६ शक्तितस्त्याग भावना

क्या साधु से सुबुध से ऋषि से यमी से,
भाई! प्रशंसित रही समता सभी से।
सौभाग्य है मम घड़ी शुभ आ गई है,
सर्वांग में सुसमता सुसमा गई है।39।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैं वीतरग बन के मन रोकता हूँ,
तो सत्य तथ्य निजरूप विलोकता हूँ।
आलोक हो अरुण ओ जब जन्म लेता,
अज्ञात को नयन भी झट लेख लेता।।40।।

७ सत् तप भावना

शुद्धात्म में स्थिति सही तप ही वही हो,
तो नश्यमान तन में रुचि भी नहीं हो।
ऐसा न हो सुख नहीं दुख ही अतीव,
हैं वीतराग गुरु यों कहते सदीव।।41।।

आतापनादि तप से तन को तपाया,
योगी बना, बिन दया निज को न पाया।
पाया नहीं सुख कभी बहु दुःख पाया,
होता अहिंसक सुखी जिनदेव गाया।।42।।

दीखे परीषहजयी वह देखने में,
है लीन यद्यपि महाव्रत पालने में।
लक्ष्मी उसे तदपि है वरती न स्वामी,
जो मूढ़ है विषय लम्पट भूरिकामी।।43।।

लोहा सुवेष्ठित रहे यदि वस्त्र से जो,
होगा नहीं कनक पारस संग से ओ।
तो संग के सहित जो तप भी करेंगे,
ना आत्म को परम पूत बना सकेंगे।।44।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दावा यथा वनज हो वन को जलाता,
भाई तथा तप सही तन को जलाता।
सम्यक्त्व पूर्ण तप की महिमा यही है,
देवाधिदेव जिन ने जग को कही है।।45।।

आशा निवास जिसमें करती नहीं है,
सम्यक्त्वबोध युत जो तप ही सही है।
ऐसा सदैव कहती प्रभु सन्त वाणी,
तृष्णा मिटे, झटिति पी अति शीत पानी।।46।।

८ साधु समाधि भावना

साधू समाधि करना भव मुक्त होना,
पा कीर्ति पूजन गुणी बन दुःख खोना।
ऐसा जिनेश कहते शिवमार्गनिता,
वेत्ता बने जगत के मन अक्ष जेता।।47।।

ये आधि व्याधि समुपाधि सभी अनादि,
से आ रही, पर मिली न निजी समाधि।
चाहूं समाधि, नहिं नाक नहीं किसी को,
चाहें सभी चतुर चेतन भी इसी को।।48।।

मानी नहीं मुनि समाधि करा सकेगा,
तो वीरदेव निज को वह क्या? लखेगा।
सम्मान मैं न उसका मुनि हो करूँगा,
शुद्धात्म को नित नितान्त अहो स्मरूँगा।।49।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वैराग्य का प्रथम पाठ अहो पढ़ाता,
पश्चात् प्रभो प्रथम देव बने प्रमाता।
मैं भी समाधि सधने बनता विरागी,
ऐसी मदीय मन में वर ज्योति जागी।150।।

लाली लगे करलता अति शोभती है,
शोभे जिनेन्द्रनुति से मम भारती है।
होता परागवश वात सुगन्धवाही,
शोभा तभी मुनि करे मुनि की समाधि।151।।

है भव्यकौमुद शशी जगमें समाधि,
है कामधेनु सुर पादप से अनादि।
कैसे मुझे यह मिले कब तो मिलेगी?
हे वीर देव! कब ज्ञानकली खिलेगी?।152।।

९ वैयावृत्त भावना

राजा प्रजाहित करे पर स्वार्थ त्यागे,
देता प्रकाश रवि है कुछ भी न मांगे।
कर्तव्य मानकर तू कर साधु सेवा,
पाले पुनः परम पावन बोधमेवा।153।।

जो साधु सेवक नहीं उन मानियों को,
चाहूं न मैं, नित भजूं मुनि सज्जनों को।
क्या चाहता कृपण को परिवार प्यारा,
क्या प्यार से कुमुद ने रवि को निहारा।154।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो पूर्ण पूरित दयामय भाव से है,
औ दूर भी विमलमानस मान से है।
सेवा सुसाधु जन की करता यहाँ है,
होता सुखी वह अवश्य जहाँ तहाँ है।।55।।

ये साधु सेवक कहीं मिलते यहाँ हैं,
जो जातरूप धरते जग में अहा है।
प्रत्येक नाग, मणि से कब शोभता है?
प्रत्येक नाग कम मौक्तिक धारता है?।।56।।

जैसा सरोज अलि से सबको सुहाता,
उद्योग से जगत में यश देश पाता।
वैसा विराग मुनि से यह साधु सेवा,
होती सुशोभित अतीव विभो सदैवा।।57।।

मैं काय से वचन से मन से सदैवा,
सौभाग्य मान करता बुध साधु सेवा।
होऊँ अबन्ध भवबन्धन शीघ्र छूटे,
विज्ञान की किरण मानस मध्य फूटे।।58।।

१० अर्हंत भक्ति भावना

बाधा बिना सहज से जिनसे निहारे,
जाते अनागत गतागत भाव सारे।
शुद्धात्म में निरत जो जिनदेव ज्ञानी,
वे विश्व पूज्य जयवन्त रहें अमानी।।59।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हो पूर्ण इन्द्रियजयी जितकाम आप,
पाके अनन्त सुख को तज पापताप।
क्रीड़ा सदैव करते शिवनारि साथ,
जोड़ूं तुम्हें सतत हाथ, अनाथ-नाथ।।60।।

पीयूष पावन पवित्र पयोद धारा,
ज्यों तृप्त भूमि तल को करती सुचारा।
त्यों शान्ति दो दुखित हूँ भवताप से जो,
है प्रार्थना मम विभो! बस आप से यों।।61।।

हो मोह सर्व, तुम हो गरुड़ेन्द्र नामी,
हो मुक्तिपन्थ-अधिनायक, हो अमानी।
स्वामी, निरंजन, न अंजन की निशानी,
पूजूँ तुम्हें बन सकूँ द्रुत दिव्यज्ञानी।।62।।

है आदि में स्वमन को फिर मार मारा,
हे आदिनाथ! तुमने तज भोग सारा।
कामारि हो इसलिये जग में कहाते,
स्वामी! सुशीघ्र मम क्यों न व्यथा मिटाते।।63।।

वे शान्त, सन्त, अरहन्त अनन्त ज्ञाता,
वन्दूँ उन्हें निरभिमान स्वभाव धाता।
होऊँ प्रवीण फलतः पल में प्रमाता,
गाता सुगीत 'जिनका' वह सौख्यपाता।।64।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छा नहीं भवन की रखते कदापि,
आचार्य ये न वन से डरते प्रतापी।
होते विलीन निज में विधि पंक धोते,
पूजो इन्हें समय क्यों तुम व्यर्थ खोते।।65।

शास्त्रानुसार चलते सबको चलाते,
पाते स्वकीय सुखको पर में न जाते,
ये रागरोष तजते सबकी उपेक्षा,
मैं तो अभी कुछ रखूँ उनकी अपेक्षा।।66।।

आचार्यदेव मुझको कुछ बोध देवो,
रक्षा करो शरण में शिशु शीघ्र लेवो।
क्या दिव्य अंजन प्रकाश नहीं दिलाता,
क्या शीघ्र नेत्रगत धूलि नहीं मिटाता?।।67।।

ये योग में अचल मेरु बने हुए हैं,
ले खड्ग कर्मरिपु को दुख दे रहे हैं।
आचार्य तो अमृतपान करा रहे हैं,
ये मेघ हैं, हम मयूर सुखी हुए हैं।।68।।

हो ज्येष्ठ में नित नहीं रवि ओ प्रतापी,
संतप्त पूर्ण करता जग को कुपापी।
आचार्य कोटि शत भास्कर तेज वाले,
देते सदा सुख हमें समदृष्टि वाले।।69।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य को विनय से उर में बिठालूँ,
मैं पूज्यपाद रज को शिर पै चढ़ा लूँ।
हे मित्र! मोक्ष मुझको फलतः मिलेगा,
विश्वास है यह नियोग नहीं टलेगा।70।।

१२ बहुश्रुत भक्ति भावना

ज्ञाता बने समय के निज-गीत, गाते,
तो भी कदापि मद को मन में न लाते।
वे ही अवश्य उवझाय वशी कहाते,
भाई उन्हें स्मरण में तुम क्यों न लाते।71।।

कालुष्यभाव रतिराग मिटा दिया है,
आत्मावलोकन तथा जिनने किया है।
पूजूँ भजूँ नित उन्हें दुख को तजूँगा,
विज्ञान से सहज ही निज को सजूँगा,।72।।

तारा समूह नभ में जब दीख जाता,
दोषी शशी न दिन में निशि में सुहाता।
पै दोष मुक्त उवझाय सदा सुहाते,
ये श्रेष्ठ इष्ट शशि से जिन यों बताते।73।।

स्वाध्याय से चपलता मन की घटा दी,
काषायिकी परिणती जिनने मिटा दी।
पावों सुशीघ्र उवझाय स्वसंपदा वे,
आवें न लौट भव में गुरु यों बतावें।74।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साथी बना कुमुद का शशि पक्षपाती,
भाई सरोज दल का वह है अराती।
पै साम्यधार उवझाय सुखी बनाते,
हैं विश्व को, इसलिये सबको सुहाते।75।।

वे वैद्य लौकिक शरीर इलाज जाने,
ये वैद्यराज भवनाशक हैं सयाने।
हैं वन्द्य, पूज्य, शिवपन्थ हमें बताते,
निःस्वार्थपूर्ण निज जीवन को बिताते।76।।

13 प्रवचन भक्ति भावना

था, है जिनागम, रहे जयवन्त आगे,
पूजो इसे तुम सभी उरबोध जागे।
पावो कदापि फिर ना भवदुःख नाना,
हो मोक्षलाभ, भव में फिर हो न आना।77।।

आता वसन्त वन में वन फूल जाता,
नाना प्रकार रस पी दुख भूल जाता।
पीऊं जिनागम सुधा चिरकाल जीऊँ,
दैवादि शास्त्र मदिरा उसको न पीऊँ।78।।

निष्पक्ष हो श्रमण आगम देखता है,
शुद्धात्म को सहज से वह जानता है।
जाके निवास करना निज धाम में ओ,
संदेह विस्मय नहीं इस काम में हो।79।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आधार ले आये! जिनागम पूर्ण तेरा,
हैं भव्य जीव करते शिव में बसेरा।
मैं भी तुझे इसलिये दिन रैन ध्याऊँ,
धारूँ तुझे हृदय में सुख चैन पाऊं।।80।।

ज्ञाता नहीं समय का दुख ही उठाता,
औ ना कभी विमल केवल ज्ञान पाता।
राजा भले वह बने, निधि क्यों न पाले,
भाई न खोल सकता वह मोक्ष ताले।।81।।

श्रद्धासमेत जिन आगम को निहारें,
जो भी प्रभो! हृदय में समता सुधारे।
वे ही जिनेन्द्र पद का द्रुत लाभ लेते,
संसार का भ्रमण त्याग विराम लेते।।82।।

१४ षट् आवश्यक भक्ति भावना

हो सूत्र में कुसुम सज्जन कण्ठ जाता,
निर्दोष ही कनक आदर नित्य पाता।
जैसी समादरित गाय सुधी जनों से,
वैसी सदैव समता मुनि सज्जनों से।।83।।

वर्षा हुई कृषक तो हल जोत लेगा,
बोया असामयिक बीज नहीं फलेगा।
तू देव वन्दन अकाल अरे! करेगा,
होगा न, मोक्ष तुझको भव में फिरेगा।।84।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजा सशस्त्र रण से जय लूट लाता,
हो दाँत, भोजन करो अति स्वाद आता।
सम्यक् जिनेन्द्रनुति भी सुख को दिलाती,
भाई निजानुभव पेय पिला जिलाती।।85।।

ज्यों वात जो सरित ऊपर हो चलेगा,
हो शीत, शीघ्र सब के मन को हरेगा।
आख्यान अन्त प्रति के बल पा, विधाता,
आत्मा अवश्य बनता सुख पूर्ण पाता।।86।।

प्राची प्रभात जब रागमयी सुहाती,
तो अंगराग लगता वनिता सुहाती।
पै राग से समनुरंजित कायक्लेश,
होता सुशौभित नहीं सुख हो न लेश।।87।।

दुर्वेदना हृदय की क्षण भाग जाती,
संवेदना स्वयम् की झट जाग जाती।
ऐसी प्रतिक्रमण की महिमा निराली,
तू धार शीघ्र इसको वन भाग्यशाली।।88।।

१७ धर्म प्रभावना भावना

भाई सुनो मदन से मन को बचाओ,
संसार के विषय में रुचि भी न लाओ।
पाओ निजानुभव को निज को जगाओ,
सद्धर्म की फिर अपूर्व प्रभावना हो।।89।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संसार के विभव वित्त असार सारे,
सागार भी सतत यों मन में विचारे।
रोगी दुखी क्षुधित पीड़ित जो विचारें,
दे, अन्नपान उनके दुख को निवारें।।90।।

हे वीर देव! तब सेवक धर्म सेवें,
होवें ध्वजा विमल धर्म प्रसार में वे।
सम्यक्त्व बोध व्रत से निजको सजावें
ज्वाला बनें कुमत कानन को जलावें।।91।।

अच्छा लगे तिलक से ललना ललाट,
है साम्य से श्रमणता लगती विराट।
होता सुशोभित सरोवर कंज होते,
सद्भावना वश मनुष्य प्रशस्य होते।।92।।

गंगा प्रदान करती बस शीत पानी,
तो गाय दूध दुहती जग में सयानी।
चाहूं इन्हें न, इनसे न प्रयोजना है,
देती निजामृत जिनेन्द्र प्रभावना है।।93।।

संसार सागर असार अपार खारा,
कोई न धर्म बिन है तुमको सहारा।
नौका यही तरणतारण मोक्षदात्री,
ये जा रहे, कुछ गये उस पार यात्री।।94।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६ वात्सल्य भावना

गो वत्स में परम हार्दिक प्रेम जैसा,
साधर्मि में तुम करो यदि प्रेम वैसा।
शुद्धात्म को सहज से द्रुत पा सकोगे,
औ मोक्ष में अमित काल बिता सकोगे।।95।।

वात्सल्य हो उदित ओ उर में जभी से,
हैं क्रूरभाव मिट ते सहसा तभी से।
भानू उगे गगन भू उजले दिखाते,
क्या आप तामस निशा तब देख पाते?।।96।।

निर्दोष हो अनल से झट लोह पिण्ड,
वात्सल्य से विमल आतम हो अखण्ड।
आलोक से सकल लोक अलोक देखा,
यों वीर ने सदुपदेश दिया सुरेखा।।97।।

वात्सल्य तो जनम से तुम में भरा था,
सौभाग्य था सुकृत का झरना झरा था।
त्रैलोक्य पूज्य जिनदेव तभी हुए हो,
शुद्धात्म में प्रभव वैभव पा लिया हो।।98।।

बन्धुत्व को जलज के प्रति भानु धारा,
मैत्री रखे सुजल में वह दुग्ध धारा।
स्वामी! परन्तु जग के सब प्राणियों में,
वात्सल्य हो, न मम केवल मानवों में।।99।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उन्मत्त होकर कभी मन का न दास,
हो जा उदास सबसे बन वरी दास।
वात्सल्यरूप सर में डुबकी लगाले,
ले ले सुनाम 'जिनका' प्रभु गीत गा ले।।100।।

गुरु-स्मृति

आशीष लाभ यदि मैं तुमसे न पाता,
तो भावनाशतक काव्य लिखा न जाता।
हे ज्ञानसागर गुरो! मुझको संभालो,
विद्यादिसागर बना तुममे मिला लो।।1।।

सुनीति शतक आचार्य श्री विद्यासागर जी

चिन्मय-धन के धनिक रहे हैं शिवसुख के जो जनक बने।
विरागता के सदन जिन्हें हो नमन सदा यह कनक बने।।
लिखी गई यह अल्प ज्ञान से नीतिशतक की रचना है।
रोग शोक ना रहे धरा पर ध्येय पाप से बचना है।।1।।

नया वस्त्र हो मूल्यवान हो मल से यदि वह समल रहा।
प्रथम बार तो छू नहिं सकता जल को, जल हो विमल अहा।।
उपदेशामृत सन्तों से सुन करता आना कानी है।
शास्त्रों का व्यवसाय चल रहा जिसका, बुध को मानी है।।2।।

शिवसुखकारक भवदुखहारक मुनि का मुनिपन विमल घना।
देहाश्रित कुल-जात पात से सुनो! कभी ना समल बना।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यही समझ में सब को आता कृष्ण-वर्ण की गायें हों।
किन्तु दूध क्या? काला होता दूध धवल ही पायें ओ।13।।

यद्यपि वय से वृद्ध हुये हैं संयम से अति ऊब रहे।
विषयरसिक हैं विरति विमुख हैं विषयों में अति डूब रहे।।
उनकी संगति से शुचिचारित मुनियों का वह समल बने।
वृद्ध-साथ हो युवा चले यदि युवा चरण भी विकल बने।14।।

ज्ञानवृद्ध औ तपोवृद्ध यदि पक्षपात से सहित तना।
उभय लोक में सुख से वंचित निज पर का वह अहित बना।।
सज्जन पीते पेय रहा है पावन पय का प्याला है।
छोटी सी भी लवण-डली यदि गिरती, फिर क्या? हाला है।15।।

पाप पंक में फसे हुये हैं, विषय-राग को सुख जाने।
मोह पाश से कसे हुये हैं वीत-राग को दुख माने।।
सत्य रहा यह, कर्म-योग से जिनकों होता रोग यहां।
पथ्य कहां वह रुचता उनको अपथ्य रुचता भोग महा।16।।

मानभूत के वशीभूत हो धनिक दान खुद करते हैं।
मान तथा धन की आशा से ज्ञान-दान बुध करते हैं।।
प्रायः ऐसा प्रभाव प्रचलित कलियुग का है विदित रहे।
वीतराग-मय पूज्य धर्म से इसीलिए ये स्खलित रहे।17।।

काल रूप ले लोभ अनल वह जीवन में जब खिलता है।
सुधी जनों का व्रती जनों का अपनापन ही जलता है।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भीतर में नहिं भले बाह्य में भेष-गात्र वह भार रहो।
निगला गज ने 'कैंथ' निकलता शेष मात्र बस बाहर ओ।।8।।

भव भव में नव तन का कारण यही परिग्रह माना है।
वैर-कलह का जनक रहा है यही परिग्रह बाना है।।
यही परिग्रह राजमार्ग है जिस पर शनि का विचरण हो।।
अतः परिग्रह तजता यह मुनि जिससे इसका सुमरण हो।।9।।

साक्षर होकर जीवन जिसका मोहादिक से शोभित है।
ज्ञान, ज्ञानपन से वंचित है संयम से नहिं शोधित है।।
शूकर के केशों को देखो कहां ललित हैं जटिल कहां?
स्पर्शनीय या दर्शनीय या कोमल-कोमल कुटिल कहां?।।10।।

पास पंक में पतित हुआ हो साधु समागम यदि पाता।
प्रथम पुण्य से भव वैभव पा मुक्ति समागम पुनि पाता।।
मिश्री का यदि सुयोग पाती खट्टी हो वह यदपि दही।
इष्ट मिष्ट श्रीखण्ड बनेगी, मूढ़ चाहता तदपि नहीं।।11।।

जग के जड़ जंगम जीवों का काय व्याधि का मन्दिर है।
दुस्सह दुख का मूल हेतु है चित्त आधि का मन्दिर है।।
साधु जनों का किन्तु काय वह अचलराज है, मन्दर है।
निज-पर सुख का कारण मन है जीवित शिव का मन्दिर है।।12।।

केवल ज्ञानावरणादिक जड़ कर्मों का जब उदय रहा।
पूर्ण ज्ञान का उदय नहीं हो अनन्त सुख का निलय रहा।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशाल नभ मण्डल में जैसा उदित प्रभाकर लोहित हो।
तारक दल वह लुप्त-गुप्त हो शशि भी शीघ्र तिरोहित हो।।13।।

गृहस्थ जब तक गृह में रहता विरागता का श्वास नहीं।
जैसा जीवन अनुभव वैसा सरागता का वास वहीं।।
सूखी लकड़ी जलती जिससे धूम्र नहीं वह उठता है।
गीली लकड़ी मन्द जलेगी धूम्र उठे, दम घुटता है।।14।।

मुनियों को अध्यात्म शास्त्र वह प्रायः परमामृत प्याला।
विषयरसिक हैं गृही जनों का विषम-विषमतम है हाला।।
जीवन-दाता प्राण-प्रदाता नीर मीन को माना है।
औरों को तो मृत्यु रहा है यही योग्यता बाना है।।15।।

तन से रीते शिव जिन जीते उनमें संभव हो भव ना।
स्वभावदर्शन विभावघर्षण तन-धारक में संभव ना।।
कहां दूध से प्रकाश मिलता तथा दूध में गन्ध कहां?
प्रकाश देता तथा महकता घृत से जल का बन्ध कहां?।।16।।

भोग और उपभोगों से तो विरत रहे हो मानी हो।
योग और उपयोगों में जो निरत रहे परमाणी हो।।
नासा पर फिर दृष्टि रही क्यों? ऐसा यदि भगवान नहीं!
मान बिना यह परिणति ना हो मेरा यह अनुमान सही।।17।।

जीव पुण्य का उदय प्राप्तकर नर जीवन को पाकर भी।
सुखद चरित ना दुखद असंयम प्रायः पाले पामर ही।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदार उरवाले पर्वत पर मुड़कर भी नहिं हँसती है।
खारा सागर रहा कृपण है सरिता जिस में फँसती है।।18।।

दृष्टि रहित हो घोर घोरतर तप तपता उस तापस में।
श्रीमन्तों में धीमन्तों में तथा असंयत मानस में।।
अनायास ही होता रहता मद जिससे बहु दोष पले।
निशाकाल में निद्रा जैसी प्रायः आती होश टले।।19।।

लाल तिलक बिन ललना जनका ललाटतल ना ललित रहे।
उद्यम के बिन तथा जगत में देश ख्यात ना दलित रहे।।
परम शान्त रस बिना किसे वह भाती कवि की कविता है।
सम दर्शन के बिना कभी ना भाती मुनि की मुनिता है।।20।।

जीर्ण-शीर्ण तन कान्तिहीन है पर भव भी अब निकट रहा।
मोही का पर विषयों पर ही झपट रहा मन निपट रहा।।
बहुत पुराना इमली का वह रहा वृक्ष अतिवृद्ध रहा।
किन्तु खटाई इमली की नहिं वृद्धा यह अविरुद्ध रहा।।21।।

एक रहा श्रृंगार रसों में रस में डूबे रहते हैं।
तत्वज्ञान से विमुख रहे जो इस विध कुछ कवि कहते है।।
किन्तु सुनो! अध्यात्मश्रृंग तक पहुंचाता रस सार रहा।
परम-शान्त रस कवियों का वह सुखकर है श्रृंगार रहा।।22।।

नारायण प्रतिनारायण औ तीर्थंकर बलदेव धनी।
महा पुरुष के महामना वे कहां गये जिनदेव गणी?।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काल-गाल में वह हुये सब विस्मृत मृत हैं आज नहीं।
हम सम साधारण जन की क्या? कथा रही यह लाज रही।।23।।

गृही बना पर उद्यम बिन हो धन से वंचित यदि रहता।
श्रमण बना श्रामण्य रहित हो धन में रंजित यदि रहता।।
ईख-पुष्प आकाश-पुष्पसम इनका जीवन व्यर्थ रहा।
सही-सही पुरुषार्थ वन्द्य है जिस बिन सब दुखगर्त रहा।।24।।

तत्त्व-बोध को प्राप्त हुये पर धन से यश से यदि रीते।
प्रायः मानव धनी जनों की हां में हां भर कर जीते।।
श्वान चाहता सुखमय जीवन जग में सात्त्विक नामी हो।
पीछे-पीछे पूंछ हिलाता स्वामी के अनुगामी हो।।25।।

मोक्षमार्ग में विचरण करता श्रमण बना है नगन रहा।
किन्तु परिग्रह यदि रखता है अणुभर भी सो विघन रहा।।
पवन वेग से मयूर का वह पुच्छ-भार जब ताड़ित हो।
मयूर समुचित चल ना सकता विचलित पद हो बाधित हो।।26।।

बात संग की कहें कहां तक सुनो! संग तो संग रहा।
संघ-भार भी अन्त समय में संग रहा सुन दंग रहा।।
वस्त्राभरणाभूषण सारे बोझिल हो मणिहार तथा।
वृद्धावस्था में तो कोमल-मलमल भी अतिभार व्यथा।।27।।

सुख चाहें उन शिष्यों के प्रति कठोरतर व्यवहार करें।
कभी-कभी गुरु रुष्ट हुये से वचनों का व्यापार करें।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किन्तु हृदय से सदा सदय हो मार्दवतम हो लघुतम हो।
जैसा श्रीफल कठोर बाहर भीतर उज्जवल मृदुतम हो।।28।।

पापात्मा का आश्रय पाकर सन्त वचन भी पाप बने।
पुण्यात्मा का आश्रय पाकर पुण्य बने भवताप हने।।
नभ से गिरती जल की धारा इक्षु-दण्ड में मधुर सुधा।
कटुक नीम में अहि में विष हो अब तो मन तू सुधर मुधा।।29।।

अहंकार की परिणति से मैं पूर्ण रूप से विरत रहूं।
तथा काय की ममता तजकर समता में नित निरत रहूं।।
यही नियति है बार-बार फिर तन का धारण नहीं बने।
कारण मिटता कार्य मिटेगा प्राण विदारण नहीं बने।।30।।

प्रयास पूरा भले करो तुम पाप पाप से नहिं मिटता।
पाप पुण्य से पल में मिटता पुरुष पूत हो सुख मिलता।।
मल से लथपथ हुआ वस्त्र हो मल से कब वह धुल सकता?
विमल सलिल से धोलो पल में मूल रूप से धुल सकता।।31।।

सब सारों का सार रहा है चेतन निधि को त्याग जिया।
रहा अचेतन दुख का केतन जड़ वैभव में राग किया।।
कौन रहा वह बुद्धिमान हो सारभूत नवनीत तजे।
क्षारभूत रसरीत छाछ में भूल कभी क्या? प्रीत सजे।।32।।

धन के अर्जन संवर्धन औ संरक्षण में लीन रहा।
बार-बार मर दुखी हुआ पर आत्मिक सुख से हीन रहा।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोह मल्ल की महा शक्ति है उसे जगत कब जान रहा।
पूंछ उलझती झाड़ी में है चमरी खोती जान अहा।।3।।

जीवन को, जीवित रख सकती प्रजापाल के बिना प्रजा।
प्रजापाल पर कहां रहे ओ! कहां सुखी हो बिना प्रजा।।
निश्चित ही पर-आश्रित है वह स्वयं भला क्या सिन्धु रहा?
किन्तु बिन्दु निज आश्रित है यह सिन्धु हेतु है बिन्दु रहा।।4।।

भोगी बन कर भोग भोगना भव बन्धन का हेतु रहा।
योगी बन कर योग साधना भव-सागर का सेतु रहा।।
जैसा तुम बोओगे वैसा बीज फलेगा अहो! सखे।
निम्ब वृक्ष पर सरस आम्रफल कभी लगे क्या? कहो सखे!।।5।।

मोह भाव से दूर हुआ है, साधु परिग्रह त्याग रहा।
समता से भरपूर हुआ है उसे कष्ट नहिं जाग रहा।।
चिकनाहट से रहित हुआ है पात पका है पलित हुआ।
सहज रूप से बाधा बिन ही पादप से वह पतित हुआ।।6।।

विषयी का बस विषयराग ही भवदुख का वह कारण है।
भविकजनों का धरम राग ही शिवकारण दुखवारण है।।
सन्ध्या में भी लाली होती प्रभात में भी लाली है।
एक सुलाती एक जगाती कितने अन्तर वाली है।।7।।

वैसा वानर चंचल होता मदिरा पीता पामर है।
बिच्छू ने फिर उसको काटा और हुआ वह पागल है।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उससे भी मानव मन की अति चंचलता मानी जाती।
धन्य रहा वह विजितमना जो जिनवर की वाणी गाती।।38।।

पंचेन्द्रिय के विषयों में जो प्रतीति सुख की होती है।
मोह-भाव की परिणति है वह स्वरीति सुख की खोती है।।
जल का मन्थन करने वाला पाता नहिं नवनीत कभी।
किन्तु फेनका दर्शन पाता मति अति होती विपरीत तभी।।39।।

वीतरागमय जिनवर का वह जिसके मन में स्मरण हुआ।
ज्ञात रहे यह बात, उसी के पाप बाप का मरण हुआ।।
सावन में सरवर सरिता का मलिन रहे वह सलिल भले।
अगस्त का जब उदय हुआ बस! विमल बने जल, कलिल टले।।40।।

किसी पुरुष के दोष कभी भी होश बिना जो किये गये।
अनायास ही सुधी जनों से सुने गये हो लखे गये।।
तन मन वच से कहें न पर को जग में वे जयवन्त रहे।
सदा दया के निलय बने जो शान्तमना हैं सन्त रहे।।41।।

महा भयानक दुस्सह दुःखमय-भवसागर के पार गहें।
स्वभाव तज कर विभाव-भव में जिनवर नहिं अवतार गहें।।
तेल निकलता है तिल से, घृत तथा दूध से वह निकले।
किन्तु तेल तिल में नहिं बदले, नहीं दूध में घृत बदले।।42।।

लुब्ध हुआ है विषयों में अति मुग्ध कुधी वृषरीत रहे।
ज्ञानी की तुम बात पूछते जग से वह विपरीत रहे।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बालक को जब मोदक मिलता खाता खाता नृत्य करे।
किन्तु वृद्ध वह यद्यपि खाता नृत्य करे ना तथ्य अरे।।43।।

नग्न दिगम्बर तन से होना केवल यह पर्याप्त नहीं।
किन्तु विमलता साथ रहे वह मन की, कहते आप्त सही।।
ऐसा यदि ना, श्वान सिंह पशु नग्न सदा हैं सुखित बनें।
किन्तु कहां? वे सुखित बने हैं रहें निरन्तर दुखित घने।।44।।

परम शान्त निज आतम में यदि जा बसने की चाह रही।
भक्ति-भाव से भजो सरलता तजो कुटिलता 'राह यही'।।
कुटिल-चाल से चलता है अहि बाहर में यह उचित रहा।
बिल में प्रवेश जब करता है 'सरल चाल' हो, विदित रहा।।45।।

हो सकता है जलधि तृप्त वह शत-शत सरिता नदियन से।
तथा जहर भी सुधा सरस हो अनल तृप्त हो इन्धन से।।
पंगू भी वह दैवयोग से गिरि चढ़ सकता संभव है।
किन्तु तृप्ति लोभी की धन से कभी न होना सम्भव है।।46।।

रहा मनोबल मुक्ति-मार्ग में साधकतम है गुरुतम है।
तथा वचन बल तरतमता से आवश्यक है कुछ कम है।।
तन बल तो बस रहा सहायक निश्चय के वह साथ सही।
किन्तु सुनो! तू मुक्तिमार्ग में धनबल का कुछ हाथ नहीं।।47।।

पापार्जन तन मन वच से हो पाप तनक ही तन से हो।
विदित रहे यह सब को, तनसे पाप अधिक वाचन से हो।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहूँ कहां तक मन की स्थिति मैं पाप मेरु सम मन से हो।
करें नियंत्रण मन को हम सब धर्म कार्य बस! मन से हो।।48।।

दान धर्म में रत होने से शोभा पाता वह भोगी।
ध्यान कर्म में रत होने से शोभा पाता यह योगी।
पात्र बना है निरीह बनना गुण माना है जिनवर ने।
नरक द्वार है इच्छा-ज्वाला हमें कहा है ऋषिवर ने।।49।।

कृषक कृषी का कार्य करे वह ध्येय धान्य का लाभ रहा।
किन्तु घास का ध्येय रहा तो हास्य पात्र वह आप रहा।।
संग सहित-सागारी हो या संग रहित-अनगारी हो।
भवक्षय करने धर्मनिरत हो शिवसुख के अधिकारी हो।।50।।

यथाशक्ति औ तथाभक्ति से दान पात्र को दे दाता।
फल के प्रति यदि किसी तरह भी मन में लालच नहिं लाता।।
वही रहा है प्रशस्त दाता, बुध-मत हमको बतलाता।
कीर्ति फैलती जग में उसकी सुख पाता शाश्वत साता।।51।।

सही दान बस वही कहाता विनय-भाव से घुला हुआ।
दाता पूजित बुध जन से हो नम्र-भाव में ढला हुआ।।
दुग्ध पान करके भी बालक तुरत वमन वह कर लेता।
मानवती माता के मुख को मुड़कर भी नहिं लख लेता।।52।।

चिन्ताओं से घिरा रहेगा आजीवन दिन रैन वही।
दो दो नारी जिसकी होती गृही जिसे सुख-चैन नहीं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लगभग वैसा गुरु संयत भी चिंतित रहता खेद रहा।
जिसके शिष्यों में आपस में वैर भाव मन-भेद रहा।।53।।

महाव्रतों में महा रहा है मुनियों का व्रत शील रहा।
इन्द्रियविषयों में रसना का विजय मुख्य सुखशील रहा।।
सब दानों में अभय-दान ही श्रेष्ठ रहा वरदान रहा।
सब धर्मों में धर्म-अहिंसा मान्य रहा मन मान रहा।।54।।

प्रशस्त ध्यानों में सुखदाता शुक्ल-ध्यान वह श्रेष्ठ रहा।
प्रधान तप में ध्यान रहा निज-निधि का निधान ज्येष्ठ रहा।।
सभी रसों में मधुर त्याग ही प्रथम रहा बुध श्लाध्य रहा।
विज्ञ कहें बस यही साध्य है मुनियों का आराध्य रहा।।55।।

प्रमाण के अनुचर हो चलते जिन शासन के नय सारे।
भिन्न स्वभावी रहें परस्पर किन्तु लड़ें नहिं दृग-धारे।।
भले नदी के एक कूल को अन्य कूल प्रतिकूल रहे।
किन्तु नदी को कुल दोनों मिल कूल सदा अनुकूल रहे।।56।।

मूढ़ सुनो तुम तन धारण ही दुस्सह दुख का मूल रहा।
सब दुःखों में दुःख वही है मन को जो प्रतिकूल रहा।।
उसमें भी है महा भयानक दुःखं पराभव का होता।
आत्मबोध हो फिर क्या दुख है अभाव भव-भव का होता।।57।।

बाहर से तो छोड़ दिया है धन मणि कंचन सकल अहा।
किन्तु उन्हीं में जाकर जिसका मन रमने को मचल रहा।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शिव सुख उसको मिल नहिं सकता उसे तत्व क्या? खबर नहीं।
सर्प कांचली भले छोड़ता किन्तु छोड़ता जहर नहीं।।58।।

सभी सुखों में आत्मिक सुख की उत्तम है श्रुति गाती है।
सब गतियों में पंचम गति ही उत्तम मानी जाती है।।
सब आभाओं में मणि-आभा मानव मन को भाती है।
सब ज्ञानों में अक्षय केवल-ज्ञान ज्योति सुख लाती है।।59।।

जैसी मति होती है वैसी नियम रूप से गति होती।
जैसी गति होती है वैसी सुनो नियम से मति होती।।
अभाव मति का जब होता है गति का अभाव तब होता।
अभाव मति गति का होने से प्रकटित स्वभाव अब होता।।60।।

जल बिन कब हो जल में उठती लहरें जल के आश्रित हो।
गगन चूमता भवन बना है स्तम्भों पर आधारित हो।।
उत्तमतम गुण ज्ञानादिक भी विनयाश्रित हैं शोभित हैं।
बिना विनय के वृथा सभी गुण इस विध मुनि संबोधित हैं।।61।।

शक्ति-शालिनी सेना की भी राजा से ही शोभा है।
मस्तक पर वर मुकुट शोभता राजा की भी शोभा है।।
नहीं शोभता बिना विनय के गुणगण का जो निलय बना।
इसीलिए बस सुधी जनों से पूजा जाता विनय घना।।62।।

ज्यों ही इन्द्रिय सचेत होती विषयों का सब ग्रहण हुआ।
कषाय जगती क्रोधादिक फिर विधि-बन्धन का वरण हुआ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विधि बन्धन से गति मिलती है गति से काया मिलती है।
काया में फिर नई इन्द्रियां नई खिड़कियां खुलती हैं।।63।।

फिर क्या पूछो वही-वही फिर चलती रहती चिर से है।
परम्परा है बीज वृक्ष से, वृक्ष बीज से फिर से है।।
किन्तु बीज को दग्ध करो तो वृक्ष कहां फिर जीयेगा।
जीती, इन्द्रिय यदि तुने तो शान्ति सुधा चिर पीयेगा।।64।।

जीत इन्द्रियां विजितमना है यम संयम ले संयत है।
आत्म-ध्यान में सहज रूप से वही लीन हो संगत है।।
यथा-शीघ्र ही घुल मिल जाती सुनो दूध में शक्कर है।
जीतो इन्द्रिय इसीलिए तुम विषयों का तो चक्कर है।।65।।

ज्ञान मात्र से मात्र चरित से मात्र भावना के बल से।
सिद्धि नहीं हो, होती शुचितम ध्यान साधना के बल से।।
समुचित है यह बिना तपाये नहीं दूध से घृत मिलता।
अनल योग पा, तप-तप कर ही कनक खरा भास्वत खिलता।।66।।

विशेष औ सामान्य गुणों से सहित वस्तु है शाश्वत है।
प्रभु के दोनों उपयोगों में एक साथ जो भास्वत है।।
फैला-फैला कर पंखों को पक्षी नभ में उड़ता ओ।
किन्तु कभी ना दिखा किसी को एक पंख से उड़ता हो।।67।।

हित हो अथवा अहित रहा हो निज आतम में निहित रहे।
सन्तों के ये वचन रहे हैं तुम सब को भी विदित रहे।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर का इस में हाथ रहा हो निमित्त भर वह कहलाता।
उपादान में फल लगता है सुनो! गीत तुम यह गाता।।68।।

ज्ञेय-मूल्य भी ज्ञान बिना नहिं दुख ही सुख का मूल्य रहा।
बन्ध बिना नहिं मुक्ति रुचेगी निर्धन धन का मूल्य रहा।।
कौन पूछता दाता को बिन पात्र, पथिक बिन पन्था को।
गौण हुये बिन मुख्य कौन हो लोचन-मालिक, अन्धा हो।।69।।

अज्ञ रहा तब मूल्य विज्ञ का बढ़ा अन्यथा वृथा कथा।
शत्रु मित्र की याद दिलाता क्षुधा बिना है अन्न वृथा।।
उचित रहा यह जहां निशा हो तथा दिवस भी रहे जहां।
मूल्य निशाकर तथा दिवाकर का होता बुध कहें यहां।।70।।

अविवाहित हो जीवन जीता व्यभिचारी भी बना हुआ।
गृही विवाहित उससे वर है शुभ आचारी बना हुआ।।
एक पाप को पल पल ढोता दुर्मति से दुर्गति होती।
एक पाप को नियमित धोता धर्म कार्यरत मति होती।।71।।

कृपण सेठ से श्रेष्ठ रहा वह साधारण जीवन जीता।
दयालु दाता पर के दुख का वैरी उद्यम-जल पीता।।
प्रशस्त-दाता किन्तु नहीं जो अनीति-धन का दान करे।
दान बिना भी मान्य रहा वह नीति निपुण गुणवान अरे!।।72।।

श्रद्धा की मम आंखों में प्रभु किसविध आ अवतार लिया।
कणभर होकर मन यह मेरा गुरुतम तुमको धार लिया।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विराग हो तुम अमूर्त भी हो मूर्त रहा यह अन्य रहा।
धन्य रहे हो भगवन् तुम तो किन्तु भक्त भी धन्य रहा।।73।।

महा विचक्षण योग्य शिष्य हो विनयी हो श्रमशील तना।
योग, योग्य गुरु का पा गुरु हो विस्मय क्या समझील बना।
शिल्पी की वह शिल्पकला है जड़ भी चेतन हो जाता।
कठिन-कठिन पाषाण-खण्ड भी विराग केतन हो जाता।।74।।

चमक दमक है जिनके चारों ओर विषय ये परे हुये।
निज मे रमते सदा भ्रमर से बुधजन भ्रम से परे हुये।।
किन्तु हिताहित नहीं जानते पर में रत जड़ मरते है।।
जैसे कफ में मक्खी फसती क्यों न विषय से डरते हैं?।।75।।

भाग्य खुला तो मुख खिलता है प्रायः जग यह मुदित दिखे।
पाप उदय में आता है तब मुख मुंदित हो दुखित दिखे।।
तपन ताप से नभ मण्डल औ धरती जब यह तप जाती।
पली छाव में मृदुल लता जो मूर्च्छित होती अकुलाती।।76।।

चरित-शरण में जब आता है शील-छांव में पलता है।
ज्ञान स्वयं यह विनश्वर शुचि पूर्ण-ज्ञान में ढलता है।।
उचित शाण पर उचित समय तक अनगढ़ हीरा जब चढ़ता।
सुज ों के वह कण्ठहार हो मूल्य चरम तक तब बढ़ता।।77।।

नहीं भूलता उपकारक को कृतज्ञता गुण धरता है।
श्वान सन्त सम कम सोता है निद्रा से अति डरता है।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किन्तु द्वेष रखता है निशिदिन निजी जाति से खेद सही।
खेल खेलता कर्म कहाँ कब किस विधि खुलता भेद नहीं।।78।।

उपादान हो निमित्त हो या गौण मुख्य की शर्त नहीं।
कार्य पूर्ण हो जाने पर फिर कारण से कुछ अर्थ नहीं।।
बढ़ते बढ़ते ऊपर चढ़ते अंतिम मंजिल वह आती।
एक एक कर क्रमशः पीछे सभी सीढ़ियां रह जाती।।79।।

अशुभ-भाव से जनित भयंकर कर्मो का वह नाश करे।
शुभ भावों में वास कर रहे ध्यान सही जिन दास ! अरे!
पवन योग पा उद्दीपित वह होता दावानल वन में।
पूर्ण जलाता राख बनाता पूरण वन को वह क्षण में।।80।।

यद्यपि मनुज़ की मोह भाव से सुप्त चेतना होती है।
विराग पहली दृष्टि दूसरी राग रंगिनी होती है।।
बादल दल से गिरती धारा प्रथम समय में विमला हो।
ज्यों ही धरती को आ छूती धूमिल पंकिलसमला हो।।81।।

ऐसा देखा जाता जग में सभी नहीं श्रीफल खाते।
मनुज तोड़कर खाता हाथी गिरे हुये श्रीफल खाते।।
आशा के तो दास नहीं है। समता धन के धनी बने।
मुक्ता खाता हंस मोक्षफल खाता है मुनि गुणी बने।।82।।

पल-पल में प्रति पदार्थ-दल में अपनी अपनी पर्याये।
नई-नई छवि लेकर उठती मिटती रहती क्षणिकायें।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तरंगमाला तरल छबीली पवन चले तब जल में है।
झिल-मिल, झिल-मिल करती उठती और समाती पल में है।।83।।

नहीं काल में नहीं काल से सुख मिल सकता ज्ञात रहे।
सुख तो निर्मल गुण है अपना आत्म तत्त्व के साथ रहे।।
हित चाहो तो मन वच तन से निज आतम में लीन रहो।
यही प्रथम कर्त्तव्य रहा है भूल कभी मत दीन रहो।।84।।

विज्ञ जनों के सेव्य नहीं है रहा काल यह ध्येय नहीं।
ज्ञेय भले हो नियत रहा हो किन्तु नियम से हेय सही।।
मोक्ष मार्ग में शुचि चेतन ही सेव्य रहा है ध्येय रहा।
अमेय भी है उपेय भी है शान्त सुधासम पेय रहा।।85।।

विषय त्याग से डरते हैं जो मूढ़ रहे वे भूल रहे।
मुक्ति समय पर मिलती इस विध कहते हैं प्रतिकूल रहे।।
मोह-भूत के वशीभूत हो आत्म-बोध से रहित हुये।।
कषाय-वश नर क्या नहिं करता पाप पंक में पतित हुये।।86।।

निजी जाति के प्रति ईर्ष्या नहिं सदा अनुराग धरे।
दिन में तो सम्भोग-कार्य में ना रत हो ना राग करे।।
तदपि कहां है काक समादृत कारण का कुछ पता नहीं।
लगता इसमें रूढ़ि रही हो नीति हमें यह बता रही।।87।।

आम्रादिक तरु सम जो होता सरस फलों से भरा नहीं।
फूल फूलता यद्यपि जिसमें गन्ध नहीं है हरा नहीं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इक्षु दण्ड उदण्ड रहा है किन्तु रहा वह सरस महा।
इसीलिए आ-बाल वृद्ध सब जिसे चाहते हरस रहा।।88।।

तन के आश्रित जितने तप हैं गौण सभी तब होते हैं।
जरा दशा में साधक मुनिजन मौन शमी जब होते हैं।।
जिसे रोग 'मन्दाग्नि' हुआ या जिसने भोजन पाया है।
इष्ट मिष्ट भोजन से अब ना अर्थ रहा प्रभु गाया है।।89।।

उचित नाव के आश्रित जन को शीघ्र नदी का तीर मिले।
छिद्र सहित यदि नाव मिली तो घोर रसातल पीर मिले।।
शासक शासन उचित चलाता सबका वह संताप हरे।
अनुचित सो अभिशाप रहा है आप, पाप परिताप करे।।90।।

बिन करनी कथनी में रत है तापस का भ्रम-भाव रहा।
ज्ञात नहीं अनुभूत नहीं क्या? शुचितम आतम-भाव रहा।।
पित्तकोप से ज्वर पीड़ित या सन्निपात का वह रोगी।
जैसा प्रलाप करता रहता उसे मानते बुध योगी।।91।।

जिस की चर्या 'गो' सम होती पाप कार्य में मौन रहा।
बिन पूछे निर्भीक बोलता धर्म कार्य हो गौण रहा।।
तत्त्वेषण में डूब रहा है लोकेषणा से भीत रहा।
दुर्जन द्वारा दिये गये दुख उपसर्गों को जीत रहा।।92।।

शरणागत के शरण प्रदाता निरीह तरुसम उपकारी।
नियमित उद्यम में रत रहता रवि शशि सम है तमहारी।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिंह वृत्ति का धारक भी है संग रहित है हवा समा।
योगों में तो अचल मेरु है धरा बना है धार क्षमा।।93।।

अहि सम जिसका खुद का घर नहिं सत्य बोलता इक रसना।
जिसके तन मन सर्व-इन्द्रियां स्ववश कूर्म सम, परवश ना।।
देख चुका गन्तव्य स्थान को किन्तु नदी सम भाग रहा।
योगी वह जयवन्त रहे नित भजूं उसे मन जाग रहा।।94।।

विज्ञों का उपयोग चपल यदि निज को निहार नहिं पाते।
अज्ञों की क्या बात रही फिर पर में विहार कर जाते।।
सलिल स्वच्छ हो सरवर का पर मुख उसमें नहिं दिख सकता।
जहां पवन से लहर उठ रहीं वहां नेत्र क्या? टिक सकता?।।95।।

जननी सुत को ताड़ित करती नेत्र सजल हो सुत रोता।
माँ सहलाती, भूल तुरत सब हँसमुख सुत प्रत्युत होता।।
नेत्र रहे प्रतिशोध-भाव बिन अपलक बालक जैसा हो।
महाभाग्य वह यथाजात यति व्रत का पालक वैसा हो।।96।।

शब्दों के तो पात्र रहे हैं जग के सारे शास्त्र महा।
मल का कोई पात्र यहां है तेरा जड़मय गात्र रहा।।
सुख का पावन पात्र रहा तो शुचितम चेतन मात्र रहा।
ऐसा मन में चिंतन कर लो अपात्र सब सर्वत्र रहा।।97।।

जो भी देखी जाती हमसे वही प्रकृति स्त्री कहलाती।
अमूर्त जो है पुरुष रहा वह ऐसी कविता यह गाती।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मूर्त रूप से देखा जाता स्त्री पुरुषों का अभिनय जो।
केवल यह व्यवहार रहा है भीतर निश्चय अतिशय हो।।98।।

बल में बालक हूं किस लायक बोध कहां मुझ में स्वामी।
तब गुणगण की स्तुति करने से पूर्ण बनूं तुम सा नामी।।
गिरि से गिरती सरिता पहली पतली सी ही चलती है।
किन्तु अन्त में रूप बदलती सागर में जा ढलती है।।99।।

रहे नीति के वीर! प्रणेता शिवपथ के जो नेता हो!
नीति प्राप्त हो तुम्हें भजूं मैं सकल-तत्त्व के वेत्ता हो।।
क्यों न निर्धनी करे धनिक की सेवा धन से प्रीति रही।
रीति नीति हम कभी न भूलें गीत गारही नीति यही।।100।।

समय एवं स्थान परिचय

धरम व्योम गति गन्ध की वीरजयन्ती-योग।
मिला पुण्य के योग से मेटे भव-भव रोग।।
सम्मेदाचल तीर्थ के पाद प्रान्त में बैठ।
लिखा ईसरी नगर में काव्य रहा यह श्रेष्ठ।।

नन्दीश्वरभक्तिः

ग्रन्थकार एवं गुरु-स्मरण

सुरासुरों से हैं सदा, पूजित जिनके पाद।
पूज्यपाद को नित नमूँ, पाऊँ परम प्रसाद।।1।।

सारे सागर क्षार हैं, मम गुरु मधुर अपार।
नमूँ ज्ञानसागर, गहूँ, भवसागर का पार।।2।।

(ज्ञानोदय-छन्द)

जय, जय, जय, जयवन्त जिनालय, नाश रहित हैं शाश्वत हैं;
जिन में जिनमहिमा से मण्डित, जैन-बिम्ब हैं भास्वत हैं।
सुरपति के मुकुटों की मणियाँ, झिल-मिल झिल-मिल करती हैं;
जिनबिम्बों के चरण-कमल को, धोती हैं, मन हरती हैं।।1।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सदा सदा से, सहज रूप से, शुचितम, प्राकृत छवि वाले;
रहें जिनालय धरती पर ये, श्रमणों की संस्कृति धारे।
तीनों संध्याओं में इनको, तन से, मन से वचनों से;
नमन करूँ, धोऊँ अघ-रज को, छूटूँ भव वन-भ्रमणों से ।।2।।

भवनवासियों के भवनों में, तथा जिनालय बने हुये;
तेज-कान्ति से दमक रहे हैं, और तेज सब हने हुये।
जिन की संख्या जिन-आगम में, सात-कोटि की मानी है;
साठ-लाख, दस-लाख और दो-लाख बताते ज्ञानी हैं।।3।।

अगणित द्वीपों में अगणित हैं, अगणित गुण गण मण्डित हैं;
व्यंतर देवों से नियमित जो, पूजित संस्तुत वंदित हैं।
त्रिभवुन के सब भविकजनों के, नयन मनोहर सुन प्यारे!
तीन-लोक के नाथ जिनेश्वर-मंदिर हैं शिव-पुर द्वारे।।4।।

सूर्य - चन्द्र - ग्रह - नक्षत्रादिक, तारकदल गगनांगन में;
कौन गिने वह अनगिन हैं ये, अनगिन जिनगृह हैं जिनमें।
जिन के वन्दन प्रतिदिन करते, शिव-सुख के वे अभिलाषी;
दिव्य-देह ले देव-देवियाँ, ज्योतिर्मण्डल - अधिवासी।।5।।

नभ-नभ - स्वर - रस - केशव - सेना - मद हो सोलह - कल्पों में;
आगे पीछे तीन बीच दो, शुभतर कल्पातीतों में।
इस विध शाश्वत ऊर्ध्वलोक में, सुखकर ये जिन-धाम रहें
अहो भाग्य हो नित्य निरन्तर होठों पर जिन नाम रहे।।6।।

अलोक का फैलाव कहाँ तक, लोक कहाँ तक फैला है?
जाने जो जिन हैं जय-भाजन, मिटा उन्हीं का फेरा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कही उन्हीं ने मनुज लोक के, चैत्यालय की गिनती है;
चार शतक अट्ठावन ऊपर, जिन में मन रम बिनती है।।7।।

आतम – मद – सेना – स्वर – केशव – अंग–रंग फिर याम कहे;
ऊर्ध्व – मध्य औ अधोलोक में, यूँ सब मिल जिन–धाम रहे।।8।।

किसी ईश से निर्मित ना हैं, शाश्वत हैं स्वयमेव सदा;
दिव्य – भव्य जिन–मंदिर देखो, छोड़ो मन अहमेव मुधा।
जिनमें आर्हत, प्रतिभा मंडित प्रतिमा न्यारी प्यारी हैं;
सुरासुरों से सुरपतियोंसे, पूजी जाती सारी हैं।।9।।

रुचक – कुण्डलों – कुलाचलों पर, क्रमशः चउ – चउ – तीस रहें,
वक्षारोंगिरि विजयार्द्धों पर, शत, शत – सत्तर ईश कहें।
गिरि – इषुकारों, उत्तर – गिरियों, कुरुओं में चउ, चउ, दश हैं;
तीन – शतक छह – बीस जिनालय, गाते इनके हम यश हैं।।10।।

द्वीप रहा जो अष्टम जिसने, "नन्दीश्वर" वर नाम धरा;
नन्दीश्वर – सागर से पूरण, आप घिरा, अभिराम खरा।
शशि – सम शीतल जिसके अतिशय – यश से बस! दश दिशा खिली;
भूमण्डल ही हुआ प्रभावित, इस ऋषि को भी दिशा मिली।।11।।

(किस किस को ना दिशा मिली?)

इसी द्वीप में चउ दिशियों में, चउ गुरु अंजन गिरिवर हैं;
इक इक अंजनगिरि संबंधित, चउ चउ दधिमुख गिरिवर हैं।
फिर प्रति दधिमुख कोनों में दो–दो रतिकर गिरि चर्चित हैं;
पावन, बावन गिरि पर, बावन – जिनगृह हैं सुर अर्चित हैं।।12।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक वर्ष में तीन बार शुभ, अष्टान्हिक उत्सव आते;
एक प्रथम आषाढ़ मास में, कार्तिक फाल्गुन फिर आते।
इन मासों के शुक्ल पक्ष में, अष्ट दिवस अष्टम तिथि से;
प्रमुख बना सौधर्म इन्द्र को, भूपर उतरे सुर मति से।।13।।

पूज्य द्वीप नन्दीश्वर जाकर, प्रथम जिनालय वन्दन ले.
प्रचुर पुष्प मणिदीप धूप ले, दिव्याक्षत ले चन्दन ले।
अनुपम अद्भुत जिन-प्रतिमा की, जगकल्याणी गुरुपूजा;
भक्ति-भाव से करते हे! मन!, पूजा में खोजा तू जा।।14।।

बिम्बों के अभिषेक कार्यरत हुआ इन्द्र सौधर्म महा;
"दृश्य बना" उसका क्या वर्णन, भाव-भक्ति सो धर्म रहा।
सहयोगी बन उसी कार्य में, शेष इन्द्र जयगान करें;
पूर्ण-चन्द्र-सम निर्मल यश ले, प्रसाद-गुण का पान करें।।15।।

इन्द्रों की इन्द्राणी मंगल,-कलशादिक लेकर सर पे;
समुचित शोभा और बढ़ातीं, गुणवन्ती इस अवसर पे।
छं - छुम छं - छुम नाच नाचतीं, सुर-नदियाँ हैं सस्मित हो;
सुनो! शेष अनिमेष सुरासुर, दृश्य देखते विस्मित हो।।16।।

वैभवशाली सुरपतियों के, भावों का परिणाम रहा;
पूजन का यह सुखद-महोत्सव, दृश्य बना अभिराम रहा।
इसके वर्णन करने में जब, सुनो! बृहस्पति विफल रहा;
मानव में फिर शक्ति कहाँ वह? वर्णन करने मचल रहा।।17।।

जिन - पूजन - अभिषेक पूर्णकर, अक्षत केसर चन्दन से;
बाहर आये देव दिख रहे, रंगे-रंगे से तन-मन से।
तथा दे रहे प्रदक्षिणा हैं, नन्दीश्वर जिनभवनों की;
पूज्य - पर्व को पूर्ण मनाते, स्तुति करते जिन - श्रमणों की।।18।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुनो! वहाँ से मनुज-लोक में, सब मिलकर सुर आते हैं;
जहाँ पाँच शुभ मंदर-गिरि हैं, शाश्वत चिर से भाते हैं।
भद्रशाल, नन्दन, सुमनस औ, पांडुक वन ये चार जहाँ -
प्रति मंदर पर रहे, तथा प्रति - वन में जिनगृह चार महा।।19।।

मन्दर पर भी प्रदक्षिणा दे, करें जिनालय वन्दन हैं;
जिन - पूजन - अभिषेक तथा कर, करें शुभाशय नन्दन हैं।
सुखद पुण्य का वेतन लेकर, जो इस उत्सव का फल है;
जाते निज-निज स्वर्गों को सुर, यहाँ धर्म ही सम्बल है।।20।।

तरह तरह के तोरण द्वारे, दिव्य वेदिका और रहें,
मानस्तम्भों माग-वृक्ष और उपवन चारों और गहें।
तीन-तीन प्राकार बने हैं, विशाल मण्डप ताने हैं;
ध्वजा - पंक्ति का दशक लसे चउ - गोपुर गाते गाने हैं।।21।।

देख सके अभिषेक बैठकर, धाम बने नाटक गृह हैं;
जहाँ सदन संगीत-साध के, क्रीड़ा गृह कौतुक गृह हैं।
सहज बनीं इन कृतियों को लख, शिल्पी होते अविकल्पी;
समझदार भी नहीं समझते, सूझ-बूझ सब हो चुप्पी।22।।

थाली सी हैं गोल वापिका, पुष्कर हैं चउ-कौन रहें;
भरे लबालब जल से इतने, कितने गहरे कौन कहे?।
पूर्ण खिले हैं महक रहे हैं, जिन में बहुविध कमल लसें;
शरद्-काल में जिस विध नभ में, शशि-ग्रह-तारक विपुल लसें।।23।।

झारी - लोटे - घट - कलशादिक, उपकरणों की कमी नहीं;
प्रति जिनगृह में शत-वसु शत-वसु, शाश्वत मिटते कभी नहीं।
वर्णाकृति भी निरी-निरी है, जिन की छवि प्रति-छवि भाती;
जहाँ घंटियाँ झन-झन झन-झन, बजतीं रहतीं ध्वनि आती।।24।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वर्णमयी ये जिन-मंदिर यूँ, युगों-युगों से शोभित हैं;
गंध कुटी में सिंहासन भी, सुन्दर सुन्दर द्योतित हैं।
नाना दुर्लभ वैभव से ये, परिपूरित हैं रचित हुये;
सुनो! कहीं त्रिभुवन के वैभव, जिन-पद में आ प्रणत हुये।।25।।

इन जिन - भवनों में जिन - प्रतिमा, ये हैं पद्मासन वाली;
धनुष पंच - शत प्रमाणवाली, प्रति प्रतिमा, शुभ छवि वाली।
कोटि, कोटि दिनकर आभा तक, मन्द-मन्द पड़ जाती है;
कनक रजत मणि निर्मित सारी, झग-झग झग-झग भाती है।।26।।

दिशा-दिशा में अतिशय शोभा, महा तेज यश धार रहें;
पाप-मात्र के भंजक हैं ये, भव-सागर के पार रहें।
और, और फिर भानुतुल्य इन, जिन - भवनों को नमन करूँ;
स्वरूप इनका कहा न जाता, मात्र मौन हो नमन करूँ।।27।।

धर्म-क्षेत्र ये एक शतक औ, सत्तर हैं षट्-कर्म जहाँ;
धर्म - चक्र - धर - तीर्थकरों से, दर्शित हैं जिन- धर्म यहाँ।
हुये, हो रहे, होंगे उन सब, तीर्थकरों को नमन करूँ;
भाव यही है ज्ञानोदय में, रमण करूँ भव-भ्रमण हरूँ।।28।।

इस अवसर्पिणि में इस भूपर, वृषभ-नाथ अवतार लिया;
भर्ता बन युग का पालन कर, धर्म-तीर्थ का भार लिया।
अन्त-अन्त में अष्टापद पर, तप का उप-संहार किया;
पाप-मुक्त हो मुक्ति सम्पदा प्राप्त किया उपहार, जिया!।।29।।

बारहवें - जिन वासुपूज्य हैं, परम पुण्य के पुञ्ज हुये;
पाँचों कल्याणों में जिनको, सुरपति पूजक, पूज गये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चंपापुर में पूर्ण रूप से, कर्मों पर बहु मार किये;
परमोत्तम पद प्राप्त किये औ, विपदाओं के पार गये।।30।।

प्रमुदित मति बल राम-श्याम से, नेमिनाथ जिन पूजित हैं;
कषाय - रिपु को जीत लिये हैं, प्रशम-भाव से पूरित हैं।
ऊर्जयन्त गिरनार शिखर पर, जाकर योगातीत हुये;
त्रिभुवन के फिर चूड़ामणि हो, मुक्ति वधू के प्रीत हुये।।31।।

वीर' दिगम्बर श्रमण गुणों को, पाल बने पूरण ज्ञानी;
मेघ-नाद सम दिव्य-नाद से, जगा दिया जग, सद्ध्यानी।
'पावापुर', वर सरोवरों के, मध्य तपों में लीन हुये;
विधि-गुण विगलित कर अगणित-गुण, शिव-पद पा स्वाधीन हुये।।32।।

जिसके चारों ओर वनों में, मद वाले गज बहु रहते;
सम्मेदाचल' पूज्य वही है, पूजो इसको गुरु कहते।
शेष रहें 'जिन बीस-तीर्थकर', इसी अचल पर अचल हुये;
अतिशय यश को, शाश्वत सुख को, पाने में वे सफल हुये।।33।।

मूक तथा उपसर्ग अन्तकृत, अनेक विध केवल ज्ञानी;
हुये विगत में यति मुनि गुणधर, कु-सु-मत ज्ञानी विज्ञानी।
गिरि वन तरुओं गुफा कंदरों, सरिता सागर तीरों से;
तप साधन कर मोक्ष पधारें, अनल शिखा मरु टीलों में।।34।।

मोक्ष साध्य के हेतुभूत ये, स्थान रहें पावन-सारे;
सुरपतियों से पूजित हैं सो, इन की रज शिर पर धारें।
तपो भूमि ये, पुण्य क्षेत्र ये, तीर्थ क्षेत्र ये अघहारी;
धर्म-कार्य में लगे हुए हम, सब के हो मंगलकारी।।35।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोष रहित हैं, विजितमना हैं, जग में जितने जिनवर हैं;
जितनी जिनवर की प्रतिमायें, तथा जिनालय मनहर हैं।
समाधि साधित भूमि, जहाँ मुनि-साधक के हो चरण परें;
हेतु बने ये भविक-जनों के, भव-लय में, हम चरण पड़ें।।36।।

उत्तम यशधर जिनपतियों का, स्रोत पढ़े निज-भावों में,
तन से, मन से, और वचन से, तीनों सन्ध्या कालों में।
श्रुत - सागर के पार गये उन, मुनियों से जो संस्तुत हैं,
यथा शीघ्र वह अमित पूर्ण पद, पाता सम्मुख-प्रस्तुत है।।37।।

तीर्थ कृतमतिशयवर्णनम्

मल मूत्रों का कभी न होना, रुधिर क्षीर-सम श्वेत रहे,
सर्वांगों में सामुद्रिकता, और सदा ना स्वेद रहे।
रूप सलोना सुरभित होना, तन-मन में शुभ लक्षणता,
हित-मित-मिश्री मिश्रितवाणी, सुन लो! और विलक्षणता।।38।।

अतुल-वीर्य का सम्बल होना, प्राप्त आद्य संहनन पना,
ज्ञात तुम्हें हो ख्याल रहे हैं, स्वतिशय दश ये गुणनपना।
जन्म-काल से मरण-काल तक, ये दश अतिशय, सुनते हैं,
तीर्थकरों के तन में मिलते, अमितगुणों को गुनते हैं।।39।।

कोश चार शत सुभिक्षिता हो, अधर गगन में गमन सही,
चउ विध कवलाहार नहीं हो, किसी जीव का हनन नहीं।
केवलता या श्रुतकारकता, उपसर्गों का नाम नहीं,
चतुर्मुखी का होना, तन की छाया का भी काम नहीं।।40।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बिना बढ़े वह सुचारता से, नख केशों का रह जाना,
दोनों नयनों के पलकों का, स्पंदन ही चिर मिट जाना।
घाति-कर्म के क्षय के कारण, अर्हन्तों में होते हैं,
ये दश अतिशय इन्हें देख बुध, पल भर सुध-बुध खोते हैं ।।41।।
अर्ध-मागधी भाषा सुख की, सहज समझ में आती है,
समवशरण में सब जीवों में, मैत्री घुल-मिल जाती है।
एक साथ सब ऋतुयें फलती क्रम के सब पथ रुक जाते,
लघुतर गुरुतर बहुतर तरुवर, फूल फलों से झुक जाते।।42।।

दर्पण-सम शुचि रत्नमयी हो, झग-झग करती धरती है,
सुरपति नरपति यतिपतियों के, जन-जन के मन हरती है।
जिनवर का जब विहार होता, पवन सदा अनुकूल बहे,
जन-जन परमानन्द गन्ध में, डूबे दुख-सुख भूल रहे।।43।।

संकटदा विषकंटक कीटों, कंकर तिनकों शूलों से,
रहित बनाता पथ को गुरुतर-उपलों से अतिधूलों से।
योजन तक भूतल को समतल, करता बहता वह साता;
मन्द मन्द मकरन्द गन्ध से, पवन मही को महकाता।।44।।

तुरत इन्द्र की आज्ञा से बस, नभ मण्डल में छा जाते,
सघन-मेघ के कुमार गर्जन करते बिजली चमकाते।
रिम-झिम रिम-झिम गन्धोदक की, वर्षा होती हर्षाती
जिस सौरभ से सब की नासा, सुर-सुर करती दर्शाती।।45।।

आगे-पीछे सात-सात, इक पदतल में तीर्थंकर के,
पंक्ति-बद्ध यों अष्ट - दिशाओं, और उन्हीं के अन्तर में।
पद्म बिछाते सुर माणिक-सम, केशर से जो भरे हुये,
अतुल परस है सुखकर जिनका, स्वर्ण दलों से खिले हुये।।46।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पकी फसल ले शाली आदिक, धरती पर सर धरती है,
सुन लो फलतः रोम-रोम से, रोमांचित सी धरती है।
ऐसी लगती त्रिभुवन - पति के, वैभव को ही निरख रही,
और स्वयं को भाग्यशालिनी, कहती-कहती हरख रही।।47।।

शरद्काल में विमल सलिल से, सरवर जिस विध लसता है,
बादल-दल से रहित हुआ नभ-मण्डल उस विध हँसता है।
दशों दिशायें धूम्र-धूलियाँ, शाम - भाव को तजती हैं,
सहज रूप से निरावरणता, उज्ञवलता को भजती है।।48।।

इन्द्राज्ञा में चलने वाले देव चतुर्विध वे सारे,
भविकजनों को सदा बुलाते, समवशरण में उजियारे।
उच्चस्वरों में दे दे करके, आमंत्रण की ध्वनि "ओ जी।"
"देवों के भी देव यहाँ हैं," शीघ्र पधारो आओ जी।।49।।

जिसने धारे हजार आरे, स्फुरण-शील, मन हरता है,
उज्ञवल मौलिक मणि-किरणों से, झर-झुर झर-झुर करता है,
जिसके आगे तेज भानु भी अपनी आभा खोता है,
आगे - आगे सबसे आगे, धर्म - चक्र वह होता है।।50।।

वैभवशाली होकर भी ये, इन्द्र - लोग सब सीधे हैं,
धर्म-राग से रंगे हुये हैं, भाव-भक्ति में भीगे हैं।
इन्हीं जनों से इस विध अनुपम अतिशय चौदह किये गये,
वसुविध मंगल पात्रादिक भी, समवशरण में लिये गये।।51।।

नील-नील वैडूर्य दीप्त से, जिसकी शाखायें भाती,
लाल-लाल मृदु प्रवाल - आभा जिनमें शोभा औ लाती।
मरकत मणि के पत्र बने हैं, जिसकी छाया शाम घनी,
अशोक तरु यह अहो शोभता, यहाँ शोक की शाम नहीं।।52।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुष्प वृष्टि हो नभ से जिसमें, पुष्प अलौकिक विपुल मिले,
नील-कमल हैं लाल - धवल हैं, कुंद बहुल हैं बकुल खुले।
गन्धदार मन्दार मालती, पारिजात मकरंद झरे,
जिन पर अलिगण "गुन-गुन" गाते, निशिगन्धा अरविन्द खिले।।53।।

जिनकी कटि में कनक करधनी, कलाइयों में कनक कड़े,
हीरक के केयूर हार हैं, पुष्ट कण्ठ में दमक पड़े।
सालंकृत दो यक्ष खड़े जिन - कर्णों में कुण्डल डोले,
चमर ढुराते हौले-हौले, प्रभु की जो जय-जय बोले।।54।।

यहाँ यकायक घटित हुआ जो, कोई सकता बता नहीं
दिवस रात का भला भेद वह, कहाँ गया कुछ पता नहीं।
दूर हुये व्यवधान हजारों - रवियों के वह आप कहीं,
भामण्डल की यह सब महिमा, आँखों को कुछ ताप नहीं।।55।।

प्रबल पवन का घात हुआ जो, विचलित होकर तुरत मथा,
हर-हर, हर-हर सागर करता, हर मन हरता मुदित तथा।
वीणा, मुरली, दुम-दुम दुंदुभि, ताल-ताल करताल तथा,
कोटि-कोटि यों वाद्य बज रहे, समवशरण में सार कथा।।56।।

महादीर्घ वैडूर्य रत्न का, बना दण्ड है, जिस पर है,
तीन चन्द्र-सम तीन-छत्र ये, गुरु-लघु-लघुतम ऊपर है।
तीन भुवन के स्वामीपन की, स्थिति जिससे अति प्रकट रही,
सुन्दरता हैं, मुक्ताफल की, लड़ियाँ जिस पर लटक रहीं।।57।।

जिनवर की गम्भीर भारती, श्रोताओं के दिल हरती,
योजन तक जो सुनी जा रही, अनुगुंजित हो नभ धरती।
जैसे जल से भरे मेघ-दल, नभ-मण्डल में डोल रहे,
ध्वनि में डूबे दिगंतरों में, घुमड़-घुमड़ कर बोल रहे।।58।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रंग-बिरंगी मणि-किरणों से, इन्द्रधनुष की सुषमा ले,
शोभित होता अनुपम जिस पर, ईश विराजे गरिमा ले।
सिहों में वर बहु सिहों ने, निजी पीठ पर लिया जिसे,
स्फटिक - शिला का बना हुआ है, सिंहासन है जिया लसे।।59।।

अतिशय - गुण - चउतीस रहें ये, जिस जीवन में प्राप्त हुये,
प्रातिहार्य का वसुविध वैभव, जिन्हें प्राप्त है, आप्त हुये।
त्रिभुवन के परमेश्वर हैं वे महागुणी भगवन्त रहे,
नमूँ उन्हें, अरहन्त - सन्त हैं, सदा - सदा जयवन्त रहें।।60।।

अञ्चलिका

नन्दीश्वर वर - भक्ति का करके कायोत्सर्ग।
आलोचन उसका करूँ, हे प्रभु! तब संसर्ग।।1।।

नन्दीश्वर के चउ-दिशियों में, चउ गुरु अंजन गिरिवर हैं
इक इक अंजनगिरि सम्बन्धित, चउ चउ दधिमुख गिरिवर हैं।
फिर प्रति दधिमुख कोनों में दो, दो रतिकर गिरि चर्चित हैं,
पावन, बावनगिरि पर बावन, जिनगृह हैं, सुर अर्चित हैं।।2।।

देव चतुर्विध कुटुम्ब ले सब, इसी द्वीप में हैं आते,
कार्तिक-फागुन-आषाढ़ों के, अंतिम वसु-दिन जब आते।
शाश्वत जिनगृह जिन - बिम्बों से, मोहित होते बस! तातैं
तीनों अष्टाह्निक - पर्वों में, यही आठ-दिन बस जाते।।3।।

दिव्य-गन्ध ले, दिव्य-दीप ले, दिव्य-दिव्य ले सुमन तथा
दिव्य चूर्ण ले, दिव्य न्हवन ले, दिव्य-दिव्य ले वसन तथा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्चन, पूजन, वन्दन, करते नियमित करते नमन सभी,
नन्दीश्वर का पर्व मनाकर, करते निजघर गमन तभी।।4।।

मैं भी उन सब जिनालयों का, भरत - खण्ड में रहकर भी,
अर्चन-पूजन-वन्दन करता, प्रणाम करता झुककर ही।
कष्टदूर हो, कर्मचूर हो, बोधिलाभ हो, सद्गति हो,
वीर-मरण हो, जिनपद मुझको, मिले सामने सन्मति ओ।।5।।

रचना काल एवं स्थान परिचय

सतत सतपुड़ा कह रहा, असत त्याग सत-धार।
मुक्तागिरि आ देख लो, दिखता शिरपुर द्वार।।1।।

गगन चूंमते शिखर हैं, रहें एक से एक।
युवा मेघ ही जल भरे, करते हैं अभिषेक।।2।।

रवि के व्रत दो, प्रथम तो - प्रतिदिन उठे प्रभात।
मुक्तागिरि का दर्श ले, फिर यात्रा की बात।।3।।

मुक्तागिरि पर मुक्त मुनि, साढ़े तीन करोड़।
मुक्तागिरि को नित नमूँ, नत - शिर हो कर -जोड़ ।। 4।।

ऋषि - आतम - रस - गन्ध की, श्वेत-पंचमी जेठ।
पूर्ण हुआ अनुवाद है, पढ़ो - सुनो भरपेट।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकीभावका पद्यानुवाद
(मंदाक्रांता छंद)

मेरे द्वारा अमित भव में प्राप्त जो कर्म सारे,
तेरी प्यारी जबकि स्तुति से शीघ्र जाते निवारे।
मेरे को क्या फिर वह न ही वेदना से बचाती?
स्वामी! सद्यः लघु दुरित को क्या नहीं रे भगाती? ।।1।।

वे ही हर्त्ता दुख तिमिर के दिव्य-भानू-जिनेश,
ऐसे सारे गणधर कहे आपको ज्यों दिनेश।
पै है मेरे मुदित मनमें वास तेरा हमेशा,
तो कैसी ओ! फिर हृदयमें रे! रहे पाप दोषा।।2।।

जो कोई भी विमल मन से मन्त्र से स्तोत्र से या,
भव्यात्मा ज्यों भजन करता आपका मोदसे या।
श्रद्धानी के अह? ह उसके देह वल्मीक से त्यों,
सारी नाना वर-विषमयी व्याधियां दौड़ती जो।।3।।

आने से जो अमर पुर से पूर्व ही मेदिनी भी,
स्वामी! तेरे सुकृत बल से हेमता को बरी थी।
पै मेरे तो मन-भवन में वास जो आपका है,
कोढ़ी काया कनक मय हो देव! आश्चर्य क्या है? ।।4।।

तेरे में ही सब विषय संबंधिनी शक्ति भी है,
स्वामी! जो है प्रतिहत नहीं, लोक बन्धू तभी है।
मैं कोढ़ी हूँ चिर हृदय में आप मेरे बसे हैं,
कैसे काया-जनित-मल दुर्गन्ध को हा! सहे हैं।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जन्मों से मैं भ्रमण करता भाग्य से अत्र आया,
कर्मों ने तो भव विपिन में हा! मुझे रो रुलाया।
मैं तो तेरे नय-सरसि में देव! गोता लगाता,
कैसे है औ! फिर अब मुझे दुःख दावा जलाता? ।।6।।

होता तेरे चरण युग सानिध्य से पद्म देख!
लक्ष्मी-धामा, सुरभित तथा हेम जैसा सुरेख।
पै मेरा जो मन तव करे स्पर्श सर्वांगकों का,
तो क्या पाऊं न फिर अब मैं सौख्य मोक्षादिकोंका? ।।7।।

प्याला पीया वच अमृत का आपके भक्ति से है,
जो पाया भी मनुज जब आशीष को आपसे है।
प्रायः स्वामी! अतुल सुख में लीन भी है यहां पै,
कैसे पीड़ा दुरित मय कांटे उसे दे वृथा पै।।8।।

व्योमस्पर्शी मणिमय तथा मान को स्तम्भ भाता,
आंखोंका ज्यों विषय बनता, मान को त्यों नशाता।
आया ऐसा सुबल उसमें आपके संग से है,
स्वामी! देखो वह इसलिए ही खड़ा ठाट से है।।9।।

काया को छू तव जब हवा, जो लता को हिलाती,
सद्यः ही है जन-निचयकी रोग धूली मिटाती।
ध्यानी के तो उर जलज पे आप बैठे यदा है,
पाता है तो वह स्वधन आश्चर्य भी क्या तदा है।।10।।

मेरे सारे भव भव दुखों को विभो जानते हैं,
होती क्लांती सतत जिनकी याद् से हा! मुझे हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विश्वज्ञाता सदय तुमको भक्ति से आज पाया,
हूँ मैं तेरा मम हृदय में ठीक विश्वास लाया।।11।।

स्वामी-जीवंधरवदन से आपके मंत्र को जो,
कुत्ता पाता जबकि सुनके अंत में सौख्य को यों।
माला को ले सतत जपता आपके मंत्र को जो,
आशंका क्या फिर अमर हो इंद्रता को वरे तो ?।।12।।

कोई ज्ञानी वर चरित में लीन भी जो सदा है,
तेरी श्रद्धा यदि न उसमें तो सभी हा वृथा है।
भारी है रे! शिव-सदन के द्वार पे मोह ताला,
कैसे खोले, उस बिन उसे, हो सके जो उजाला।।13।।

तेरा होता यह यदि न वाक्दीप तत्वावभासी,
जो है स्वामी! वरसुखद औ मोक्ष मार्ग प्रकाशी।
छाई फैली शिवपथ जहां मोहरूपी निशा है।
पाते कैसे फिर तब उसे हाय! मिथ्या दिशा है।।14।।

आत्मा की जो द्युति अमित है मोद दात्री तथा है,
मोही को तो वह इह न ही प्राप्य हा! यो व्यथा है।
पै सारे ही लघु समय में आपके भक्त लोग,
वे पाते हैं तब स्तवन से जो उसे धार योग।।15।।

भक्ती गंगा नय-हिमगिरी से समुत्पन्न जो है,
पैरों को छू तब अरुशिवां बोधि में जा मिली है।
मेरा स्वामी! सुमन उसमें स्नान भी तो किया है,
तो काया में विकृति फिर भी क्यों रही देव! हां! है।।16।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ध्याऊं भाऊं जब अचल हो, आपको ध्येय मान,
ऐसी मेरी यह मति तदा आप औ मैं समान।
मिथ्या ही पे मम मति विभो! कर्म का पाक रे है,
तो भी दोषी तव स्तवन से मोक्ष लक्ष्मी वरे है।।17।।

वाणी रूपी जलधि जग में व्याप्त तेरा जहां पे,
सप्ताभंगी लहर-मल-मिथ्यात्व को है हटाते।
ज्ञानी ध्यानी मथकर उसे चित्तमंदार से वे,
सारे ही हैं द्रुत परम पीयूष पी तृप्त होते।।18।।

शृंगारों को वह पहनता जन्म से जो कुरूप,
बैरीयों से परम डरता जो धरे शस्त्र भूप।
अष्टांगों से मदन जब तू और बैरी न तेरे,
तेरे में क्यों कुसुम पट हो शस्त्र तो नाथ! मेरे।।19।।

सेवा होती तव अमर से आपकी क्या प्रशंसा,
सेवा पाती उस अमर की पे प्रशंसा जिनेशा।
धाता, त्राता धगपति तथा मोक्षकांता-सुकांत,
ऐसे गावे तव यश यहां तो प्रशंसा नितांत।।20।।

तेरी वाणी तव चरण तू दूसरों सा न ईश,
तो कैसा हो तव स्तवन में जो हमारा प्रवेश।
तो भी स्वामी! यह स्तुति सदा आपके सेवकों को
होगी प्यारी अभिलषित को और देगी सुखों को।।21।।

रागी द्वेषी जिनवर नहीं., ना किसी की अपेक्षा
मेरे स्वामी? वर सुखद हैं मार्ग तेरा उपेक्षा।
तो भी तेरी वह निकटता कर्महारी यहां है,
ऐसी भारी विषद महिमा दूसरों में कहां है? ।22।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोई तेरा स्तवन करता भाव से है मनुष्य
होता ना हीं शिवपथ उसे वाम स्वामी? अवश्य।
जाते जाते शिव सदन की ओर जो आत्म ध्याता,
मोक्षार्थी तो तव-समय में यो न संदेह लाता।।23।।

जो कोई भी मनुज मन में आपको धार ध्याता,
भव्यात्मा यों अविरल प्रभो? आप में लौं लगाता,
जल्दी से है शिव सदन का श्रेष्ठ जो मार्ग पाता,
श्रेयोमार्गी वह तुम सुनो! पंच कल्याण पाता।।24।।

ज्ञानी योगी स्तुति कर सके ना यदा वे यहां हैं,
तो कैसे मैं तव स्तुति करुं पै तदा रे मुधा है।
तो भी तेरे स्तवन मिष से पूर्ण सम्मान ही है,
आत्मार्थी को विमल सुख का, स्वर्ग का वृक्ष ही है।।25।।

(वसंततिलका छंद)

हैं वादिराज वर-लक्षण पारगामी,
है न्याय-शास्त्र सब में बुध अग्रगामी।
हैं विश्व में नव रसान्वित काव्य धाता,
हैं आपसा न जग भव्य सहाय दाता।।26।।

त्रैलोक्य पूज्य यतिराज सुवादिराज,
आदर्श सादृश सदा वृष-शीश-ताज।
बंदू तुम्हें सहज ही सुखतो मिलेगा,
'विद्यादिसागर' बनूं दुख तो मिटेगा।।27।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भक्तामर स्तोत्र

वसन्ततिलकावृत्तम्।

सर्व विघ्न उपद्रवनाशक

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम्।।1।।

शत्रु तथा शिरपीड़ा नाशक

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्वबोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुरलोक-नाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरै-रुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्।।2।।

(श्री पं0 हेमराजजी रचित भाषा भक्तामर)

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार।
धरम धुरन्धर परमगुरु, नमों आदि अवतार।।

चौपाई

सुरनत-मुकुट रतन छबि करें, अन्तर पाप तिमिर सब हरें।
जिनपद बन्दों मनवचकाय, भवजल पतित-उधरन सहाय।।
श्रुत-पारग इन्द्रादिक देव, जाकी थुति कीनी कर सेव।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रमुकी वरनों गुनमाल।।

अर्थ-जो भक्तिवश झुकते हुए (नमस्कार करते हुए) देवों के मुकुटों की रत्न-कान्ति को दीप्तिमान करते हैं, पाप-अन्धकार को दूर करते हैं, तथा कर्मयुग के प्रारम्भ में संसार समुद्र में भटकने वाली जनता की रक्षा करने वाले हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान के चरणों को प्रणाम करके मैं भी उन आदिनाथ (ऋषभनाथ) भगवान की स्तुति करता हूँ, जिनका स्तवन समस्त शास्त्रों के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानकार, परम बुद्धिमान इन्द्रों ने त्रिलोकवर्ती (तीन लोक के) जीवों का मन मोहित करने वाले बड़े सुन्दर स्तोत्रों से किया है।।1-2।।

सर्वसिद्धदायक

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ,
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम्।
बालं विहाय जल-संस्थित-मिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्।।3।।

विबुध-वंद्यपद! मैं मति-हीन, ह्वे निर्लज्ज थुति मनसा कीन
जल-प्रतिबिम्ब बुद्ध को गहै, शशिमण्डल बालक ही चहै।।

अर्थ-हे विद्वानों द्वारा पूज्य-चरण भगवन्! मैं आपकी स्तुति करने योग्य बुद्धि न रखता हुआ भी लज्जा छोड़कर आपकी स्तुति करने के लिये तत्पर (तैयार) हुआ हूँ। जैसे-पानी में प्रतिबिम्बित (परछाई वाले) चन्द्रमा को बच्चे के सिवाय अन्य कौन बुद्धिमान् मनुष्य पकड़ना चाहता है? (कोई नहीं) ।3।।

जलजन्तु निरोधक

वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतु-मलमम्बु निधिं भुजाभ्याम्।।4।।

गुनसमुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुरगुरु पावें पार।
प्रलय प्रवन उद्धत जलजन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु।।

अर्थ-हे गुणसागर प्रभो! आपके चन्द्र समान उज्जवल गुणों को वृहस्पति के समान बुद्धिमान् विद्वान् भी अपनी बुद्धि से नही कह सकता। जैसे कि प्रलय समय की प्रबल वायु से उद्वेलित, मगरमच्छों से भरे हुए समुद्र को अपनी भुजाओं से कौन पार कर सकता है? यानी-कोई भी नहीं।।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नेत्ररोग निवारक

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगत-शक्ति-रपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्म-वीर्य-मविचार्य मृगी मृगेन्द्रं,
नाऽभ्येति किं निज-शिशोः परि-पालनार्थम्।5।

सो मैं शक्तिहीन थुति करूं, भक्ति भाववश कछु नहिं डरूं।
ज्यों मृगि निज सुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत।।

अर्थ-हे मुनिनाथ भगवन्! फिर भी शक्तिहीन मैं, भक्तिवश आपकी स्तुति करने के लिए तैयार हुआ हूं। जिस तरह सिंह द्वारा पकड़े गये अपने बच्चे को छुड़ाने के लिये बच्चे के मोहवश अपनी अल्पशक्ति का विचार न करके हिरनी सिंह का सामना करने के लिये जा पहुंचती है।5।।

विद्या प्रदायक

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्भक्ति-रेव-मुखरी-कुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका-निकरैक-हेतु।।6।।

मैं शठ सुधी-हँसन को धाम, मुझ तुव भक्ति बुलावै राम।
ज्यों पिक अम्ब-कली परभाव, मधु ऋतु मधुर करै आराव।।

अर्थ--भगवन्! मैं बुद्धिमानों के उपहास करने योग्य अल्पज्ञ हूँ फि भी आपकी भक्ति ही मुझे आपको स्तवन करने को प्रेरित करती है। वसन्त ऋतु में जो कोयल मीठी वाणी बोलती है उसका कारण आम के वृक्षों पर आने वाला मौर (फूल) ही होता है।6।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्व विष व संकट निवारक

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षय-मुपैति शरीर-भाजाम्।
आक्रान्त-लोक-मलिनील-मशेष-माशु,
सूर्यांशु-भिन्न-मिव शार्वर-मन्धकारम्।।7।।

तुम जस जंपत जन छिनमाहिं, जनम जनम के पाप नशाहिं।
ज्यों रवि उगै फटै तत्काल, अलिवत् नील निशा-तम-जाल।।

अर्थ--हे नाथ! आपकी स्तुति करने से जीवों के अनेक भवों के संचित पापकर्म क्षण भर में क्षय हो जाते हैं। जैसे कि प्रातः समय सूर्य की किरणों से भौंरे की तरह काला, जगत में फैला हुआ रात्रि का अन्धकार तत्काल छिन्न भिन्न हो जाता है।7।।

सर्वारिष्ट निवारक

मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियाऽपि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ताफल-द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः।।8।।

तुव प्रभावतैं कहूँ विचार, होसी यह थुति जन-मनहार।
ज्यों जल कमल पत्र पै परै, मुक्ताफलकी द्युति विस्तरै।।

अर्थ--हे नाथ ! आपकी स्तवन की ऐसी महिमा मानकर मैं अल्पबुद्धि भी आपकी स्तुति प्रारम्भ करता हूँ। आपके प्रभाव से यह स्तुति सत्पुरुषों का चित्त आकर्षित करेगी। जैसे कमल के पत्ते पर पड़ी हुई पानी की बूंद मोती सरीखी शोभायमान होती है।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वभय निवारक

आस्तां तव स्तवन-मस्त-समस्त-दोषं,
त्वत्सङ्कथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्र-किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकास-भांजि।।9।।

तुम गुन महिमा हत दुख-दोष, सो तो दूर रहो सुखपोष।
पापविनाशक है तुम नाम, कमल विकासी ज्यों रविधाम।।

अर्थ--हे प्रभो! सर्व दुख दोषनाशिनी आपकी स्तुति की बात ही क्या, केवल आपका नाम लेना भी जगत के पाप नष्ट कर डालता है। जिस तरह सूर्य बहुत दूर रहता हुआ भी प्रकाश करता है तथा कमलों के वन में कमल के फूलों को विकसित कर देता है।।9।।

कूकर विष निवारक

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण-भूतनाथ,
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्त-मभिष्टु-वन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति।।10।।

नहिं अचंभ जो होंहिं तुरंत, तुमसे, तुम गुण वरणत सन्त।
जो अधीन को आप समान, करै न सो निन्दित धनवान।।

अर्थ--हे जगत्-भूषण जगदीश्वर! संसार में जो भक्त पुरुष आपके गुणों का कीर्तन करके आपका स्तवन करते हैं वे आपके समान भगवान् बन जाते हैं, इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं है। क्योंकि वह स्वामी भी किस काम का, जो कि अपने दास को अपने समान न बना सके, सदा दास ही बनाये रखे?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छित-आकर्षक

दृष्टवा भवन्त-मनिमेष-विलोकनीयं,
नान्यत्र तोष-मुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत्।।11।।

इकटक जन तुमको अविलोय, अवरविषे रति करै न सोय।
को करि क्षीरजलधि जल पान, क्षार नीर पीवै मतिमान।।

अर्थ--हे भगवन्! टकटकी लगाकर आपका दर्शन कर लेने पर मनुष्य के नेत्र अन्य किसी को देखने में सन्तुष्ट नहीं होते। जिस तरह चन्द्र समान उज्ज्वल क्षीरसागर का मीठा जल पीकर खारे समुद्र का खारा पानी कौन पीना चाहता है? अर्थात् कोई नहीं।।11।।

हस्तिमद-निवारक

यैः शान्त-राग रुचिभिः परमाणु-भिस्तत्वं,
निर्मापितस्त्रि-भुवनैक-ललाम-भूत।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समान-मपरं न हि रूपमस्ति।।12।।

प्रभु तुम वीतराग गुणलीन, जिन परमाणु देह तुम कीन।
हैं तितने ही ते परमाणु, यातै तुम सम रूप न आनु।।

अर्थ--हे त्रिजगत के अलंकार! जिन शान्तिमय परमाणुओं से आपके शरीर का निर्माण हुआ (बना) संसार में वे परमाणु केवल उतने ही थे, इसी कारण आपके समान शान्त वीरतराग रूप और किसी देव का नहीं दिखाई देता।।12।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चोर भय व अन्यभय निवारक

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरगनेत्र-हारि,
निःशेष-निर्जित-जगत्त्रित-योपमानम्।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम्।।13।।

कहं तुम मुख अनुपम अविकार, सुरनरनागनयन मनहार।
कहां चन्द्र-मण्डल सकलंक, दिन में ढाक पत्र सम रंक।।

अर्थ--हे भगवन्! सुर नर असुर के नेत्रों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले, समस्त जगत में अनुपम, आपके मुख-मण्डल की बराबरी चन्द्रमा कहाँ कर सकता है जिसमें कि काला लांछन लगा हुआ है तथा जो दिन के समय ढाक के पत्ते की तरह कान्तिहीन हो जाता है।।13।।

आधि-व्याधि-नाशक लक्ष्मी-प्रदायक

सम्पूर्ण-मण्डल-शशांक-कला कलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम्।।14।।

पूरन चंद जोति छबिवंत, तुम गुन तीन जगत लंघंत।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार।।

अर्थ--हे भगवन्! पूर्ण चन्द्र समान उज्ज्वल आपके गुण तीन लोकों को भी लाँघ गये हैं। सो ठीक ही है, जो एक त्रिलोकीनाथ के ही आश्रय रहें उनको यथेच्छ विहार करते हुए कौन रोक सकता है? (कोई नहीं)।।14।।

राजसम्मान-सौभाग्यवर्धक

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कल्पान्त-काल-मरुता चलिता-चलेन
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्।।15।।

जो सुरतिय विभ्रम आरम्भ, मन न डिग्यो तुम तो न अचम्भ।
अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु शिखर डगमगै न धीर।।

अर्थ--प्रभो! इसमें क्या आश्चर्य की बात है कि सुन्दरी देवाङ्गनाओं का हाव भाव देख कर भी आपका मन जरा भी विकृत नहीं हुआ। क्योंकि प्रलयकाल की जिस प्रबल वायु से अन्य पर्वत चल विचल हो जाते हैं उस वायु से क्या कभी मन्दराचल (सुमेरु पर्वत) का शिखर भी चलायमान होता है? (कभी नहीं)।।15।।

सर्व-विजय-दायक

निर्धूम-वर्त्ति-रपवर्जित-तैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटी-करोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिता-चलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः।।16।।

धूमरहित वातीगतनेह, परकाशै त्रिभुवन घर एह।
वात-गम्य नाहीं परचण्ड, अपर दीप तुम बलो अखण्ड।।

अर्थ--हे त्रिभुवनदीपक--साधारण दीपक तो तेल और बत्ती से जलता है, धुआँ देता है, थोड़े स्थान में प्रकाश करता है और वायु के झकोरे से बुझ जाता है परन्तु आप ऐसे अनोखे दीपक हैं कि न तो आपको तेल और बत्ती की आवश्यकता होती है, न आपसे काला धुआं निकलता है, और न पर्वतों को भी हिला देने वाली वायु से आपकी ज्येति बुझ सकती है तथा आप तीनों लोकों को अपनी ज्योति से प्रकाशित कर देते हैं।।16।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्व उदर पीड़ा नाशक

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टी-करोषि सहसा युगपज्जगन्ति।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके।।17।।

छिपह न लुपहु राहू की छांहि, जग-परकाशक हो छिन मांहि।
घन-अनवर्त दाह विनिवार, रवि तैं अधिक धरो गुणसार।।

अर्थ--हे मुनिनाथ! आप सूर्य से भी अधिक महिमाशाली हैं क्योंकि आप न तो कभी अस्त होते हैं, न राहु के ग्रहण से आते हैं और न बादल आपका प्रभाव रोक सकते हैं तथा आप अपनी ज्ञान-ज्योति द्वारा एक साथ तीनों लोकों को प्रकाशित करते हैं। (सूर्य तो चार पहर पीछे अस्त हो जाता है, उसको राहु ग्रहण कर लेता है, बादलों से उसका प्रकाश रुक जाता है तथा वह प्रकाश भी सीमित क्षेत्र में करता है)।।17।।

शत्रु सेना स्तम्भक

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं।
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्योतयज्-जगदपूर्व-शशांक-विम्बम्।।18।।

सदा उदित विदलित मनमोह, विघटित मेघ राहु-अवरोह।
तुम मुख कमल अपूरव चन्द, जगत विकाशी जोति अमन्द।।

अर्थ--हे भगवन! महाकान्तिमान आपका मुखकमल अपूर्व अद्भुत चन्द्रमण्डल की तरह शोभित हो जाता है क्योकि वह सदा उदीयमान रहता है (कभी अस्त नहीं होता), मोह अन्धकार को नष्ट करता है, राहु और बादलों से कभी छिपता नहीं है और सम्स्त जगत् को प्रकाशित करता है।।18।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जादू-टोनादि-प्रभाव नाशक

किं शर्वरीषु शशिना ह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्-जलधरैर्जल-भारनम्रैः ।।19।।

निशदिन शशि रविको नहिं काम, तुम मुखचन्द हरै तम धाम,
जो स्वभावतैं उपजे नाज, सजल मेघ तैं कौनहु काज।

अर्थ--हे नाथ! आपके मुखचन्द्र द्वारा जब जनता का मोह-अज्ञान-अन्धकार नष्ट हो गया तो दिन के समय सूर्य और रात्रि के समय चन्द्रमा से कुछ प्रयोजन नहीं रहा। धान्य के पक जाने पर संसार में जल से भरे हुए बादलों की क्या आवश्यकता है? ।।19।।

सन्तान-लक्ष्मी-सौभाग्य-विजय बुद्धिदायक

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु।
तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्वं,
नैव तु काच-शकले किरणा-कुलेऽपि।।20।।

जो सुबोध सोहै तुम मांहि, हरि हर आदिक में सो नाहिं।
जो द्युति महा रतन में होय, कांच खण्ड पावै नहिं सोय।।

अर्थ--हे प्रभो! जैसा पूर्ण ज्ञान आप में विद्यमान है वैसा हरि हर आदि अन्य किसी में नहीं है। जिस तरह की महत्वपूर्ण कान्ति रत्नों में होती है वैसी कान्ति चमकीले कांच के टुकड़े में नहीं मिलती।।20।।

सर्व वशीकरण

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि।।21।।

नाराच छन्द

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया,
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया।
कछू न तोहि देख के जहाँ तुही विशेखिया,
मनोग चित्त चोर और भूल हू न पेखिया।।

अर्थ--हे नाथ! मैं ऐसा समझता हूं कि मैंने हरि हर आदि देवों के दर्शन किए सो अच्छा हुआ, क्योंकि उनके (रागी देवों के) देख लेने पर मेरा मन आप में सन्तुष्ट हो गया। आपके दर्शन कर लेने पर वैसा कुछ न हुआ। क्योंकि फिर कोई भी अन्य देव मेरा मन अपनी ओर आकर्षित न कर सका।।21।।

भूत-पिशाचादि व्यन्तर वाधा निरोधक

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्-
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मिम्
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर-दंशु-जालम्।।22।।

अनेक पुत्रवंतिनी नितम्बिनी सपूत हैं,
न तो समान पुत्र और मात तैं प्रसूत हैं।
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिनै,
दिनेश तेजवन्त एक पूर्व ही दिशा जनै।।

अर्थ--हे देव! संसार में सैकड़ों स्त्रियां सैकड़ों पुत्र पैदा करती हैं परन्तु आपके समान पुत्र को आपकी माता ही उत्पन्न करती है, अन्य कोई माता उत्पन्न नहीं कर सकती। जैसे प्रभापुंज-सूर्य की किरणों को तो सभी दिशायें धारण करती हैं परन्तु उस सूर्य का उदय केवल पूर्व दिशा ही किया करती है।।22।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रेत बाधा निवारक

त्वामा-मनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्ण-ममलं तमसः पुरस्तात्
त्वामेव सम्य-गुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यःशिवःशिव-पदस्य मुनीन्द्र पन्थाः।।23।।

पुरान हो पुमान हो पुनीत पुण्यवान हो,
कहैं मुनीश अन्धकार नाश को सुभान हो।
महंत तोहि जानि के न हो अवश्य काल के,
न और कोई मोहि पंन्थ देय तोहि टाल के।।

अर्थ--हे मुनिनाथ! मुनिगण आपको महान् पुरुष, अन्धकार हारक निर्मल सूर्य कहते हैं। मुनिगण आपकी उपासना करके मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। आपकी उपासना के सिवाय अन्य कोई मोक्ष का सुखदायी मार्ग भी तो नहीं है।।23।।

शिर पीड़ा नाशक

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यं,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनन्त-मनंग केतुम्।
योगीश्वरं विदित-योग-मनेक-मेकं,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः।।24।।

अनन्त नित्य चित्त की अगम्य रम्य आदि हो,
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो।
महेश कामकेतु योग-ईश योग ज्ञान हो,
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध सन्त-मान हो।।

अर्थ--हे स्वामिन्! गणधरादिक आपको अव्यय (अविनाशी), विभु (ज्ञान द्वारा सर्वव्यापक), अचिन्त्य (पूर्णरूप से न जान सकने रूप) असंख्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(जिसके गुण न गिने जा सकें), आद्य (समस्त पूज्य देवों में प्रथम) ब्रह्मा (मोक्ष मार्ग के बनाने वाला), ईश्वर (समस्त आत्मविभूति के स्वामी या तीन लोक के नाथ), अनन्त (जिसका अंत न हो), अनङ्गकेतु (शरीर रहित या अनुपम सुन्दर), योगीश्वर, योग-ज्ञाता (आत्मशुद्धि की विधि जानने वाले), अनेक (गुणों की अपेक्षा), एक (आत्मा की अपेक्षा), ज्ञान रूप और पूर्ण निर्मल कहते हैं।।24।।

नज़र (दृष्टि दोष) नाशक

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधा-
त्वं शंकरोऽसि भुवन-त्रय-शंकरत्वात।
धातासि धीर शिव-मार्ग-विधे-र्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि।।25।।

तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं,
तुही जिनेश शंकरो जगत्रय विधानतैं।
तुही विधात है सहीसुमोख पंथ धारतैं,
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतै।।

अर्थ--हे भगवन्! आप ही 'बुद्ध' हैं क्योंकि आपकी बुद्धि या ज्ञान गणधर आदि विद्वानों तथा इन्द्र आदि से पूजनीय है। आप ही यथार्थ 'शङ्कर' हैं क्योंकि आप अपनी प्रवृत्ति तथा उपदेश से तीनों लोकों में शान्ति कर देतें हैं। हे धीर! आप ही सच्चे 'विधाता' हैं क्योंकि आपने मुक्ति मार्ग का विधान किया है और आप ही सबसे उत्तम होने के कारण 'पुरुषोत्तम' हैं।।25।।

आधा शीशी (सिर दर्द) एवं प्रसूति पीड़ा नाशक

तुभ्यं नम स्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ,
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय।।26।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नमों करूं जिनेश तोहि आपदा-निवार हो,
नमों करूं सुभूरि भूमि-लोक के सिंगार हो।
नमों करूं भवाब्धि-नीर-राशि-शोष हेतु हो,
नमों करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो।।

अर्थ--हे जिनेन्द्रदेव! हे नाथ! तीन लोक के संकटों को दूर करने वाले आपको मैं नमस्कार करता हूं। जगत के निर्मल अनुपम आभूषण स्वरूप आपको मैं प्रणाम करता हूँ। तीन जगत के स्वामी तुम्हें प्रणाम है। और संसार समुद्र के सुखाने वाले आपको नमस्कार है।।26।।

शत्रुकृत--ह्रनि निरोधक

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्तवं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश।
दोषै-रुपात्त-विविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिद-पीक्षितोसि।।27।।

तुम जिन पूरण गुणगण भरे, दोष गर्व करि तुम परिहरे।
और देवगण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय।।

अर्थ--हे मुनीश्वर! इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं कि आप समस्त गुणों से परिपूर्ण हैं। राग द्वेष काम क्रोध मान माया लोभ आदि दोष अन्य देवों का आश्रय पाकर गर्वीले (घमण्डी) हो गये हैं। अतः वे दोष आपके पास कभी स्वप्न में भी नहीं आते। ।।27।।

सर्व कार्य सिद्धि दायक

उच्चैर-शोक-तरु-संश्रित-मुन्मयूख-
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत्-किरणमस्त-तमोवितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति।।28।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तरु अशोक तर किरण उदार, तुम तन शोभित है अविकार।
मेघ-निकट ज्यों तेज फुरंत, दिनकर दिपै तिमिर निहनंत।।

अर्थ--हे भगवन्! ऊँचे अशोक वृक्ष (प्रातिहार्य) के नीचे आपका निर्मल कान्तिमान शरीर बहुत शोभा देता है। जैसे कि अन्धकार नष्ट करके किरण सहित सूर्य-बिम्ब बादलों के पास शोभित होता है।।28।।

नेत्र पीड़ा व बिच्छू विष नाशक

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनका-वदातम्।
विम्बं वियद्-विलस-दंशु-लता-वितानं,
तुंगोदयाद्रि-शिरसीव सहस्र-रश्मेः।।29।।

सिंहासन मणि किरण विचित्र, तापर कंचन वरण पवित्र।
तुम तन शोभित किरण विथार, ज्यों उदयाचल रवि तमहार।।

अर्थ-हीरा, पन्ना, लाल, नीलम, पुखराज आदि अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ित सिंहासन पर आपका सुवर्ण समान शरीर बहुत शोभा पाता है। जैसे उन्नत उदयाचल के शिखर पर फैली हुई अपनी किरणों के साथ सूर्य का बिम्ब शोभित होता है।।29।।

शत्रु स्तम्भक

कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम्।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारि-धार--
मुच्चैस्तटं सुर-गिरेरिव शात-कौम्भम्।।30।।

कुन्द पुहुप सित-चमर ढुरंत, कनक-वरन तुम तन शोभंत।
ज्यों सुमेरु तट निर्मल कांति, झरना झरै नीर उमगांति।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ--हे प्रभो! इन्द्रों द्वारा कुन्द पुष्प के समान सफेद चमर आप पर ढुरते समय आपका तपे हुए सोने के समान शरीर ऐसा शोभायमान होता है जैसे चन्द्र समान निर्मल जल की धारा से सुवर्णमय सुमेरु पर्वत का ऊँचा तट (किनारा) सुशोभित होता है।।30।।

राज्य सम्मान दायक व चर्म रोग नाशक

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांक-कान्त--
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापम्।
मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत्-त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्।।31।।

ऊँचे रहैं सूर-दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपै अगोप।
तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती झालर सों छवि लहैं।

अर्थ--हे ईश! चन्द्रमा समान कान्तिमान, सूर्य की धूप को रोकने वाले, मोतियों की झालर से शोभायमान, आपके ऊपर ऊँचे लगे हुए तीन छत्र आपकी तीन जगत् की प्रभुता को प्रगट करते हुए बहुत शोभा देते हैं।।31।।

संग्रहणी आदि, उदर पीड़ा नाशक

गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्वभाग-
स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति-दक्षः।
सद्धर्म-राज-जय-घोषण-घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि-र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी।।32।।

दुन्दुभि शब्द गहर गंभीर, चहुं दिश होय तुम्हारे धीर।
त्रिभुवन-जन शिव संगम करै, मानूं जय जय रव उच्चरै।

अर्थ--हे परमात्मन्! आकाश में अपनी गम्भीर, तेज, मधुर ध्वनि द्वारा समस्त दिशाओं को शब्दायमान करके, त्रिलोकवर्ती जीवों को शुभ संगम कराने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाला, आपकी जयध्वनि करता हुआ, आपके यश को घोषित करने वाला आपका प्रातिहार्य-रूप दुन्दुभि बाजा बजता है।32।।

सर्व ज्वर नाशक

मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात
सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टिरुद्धा।
गन्धोद-बिन्दु-शुभ-मन्द-मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा।।33।।

मन्द पवन गन्धोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप सुवृष्ट।
देव करैं विकसित दल सार, मानों द्विज पंकति अवतार।।

अर्थ--हे नाथ! सुगन्धित जल बिन्दुओं और मन्द पवन के साथ, मंदार, नमेरु, पारिजात आदि कल्पवृक्षों के पुष्पों की मनोहर वर्षा आपके ऊपर देवों के द्वारा आकाश में ऐसी होती है, मानों पक्षिओं की पंक्ति ही है।33।।

गर्भ रक्षक

शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते,
लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमा-क्षिपन्ती।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम्।।34।।

तुम तन भामण्डल जिनचंद, सब दुतिवन्त करत है मंद।
कोट शंख रवितेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करै अछाय।।

अर्थ--हे भगवन्! आपके शरीर से निकली हुई कान्ति का गोलाकार मण्डल यानी भामण्डल जगत् के सभी प्रकाशमान पदार्थों की कांति को फीका कर देता है। करोड़ों सूर्यों के एकत्रित प्रकाश से भी अधिक प्रकाशमान भामण्डल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

की प्रभा से चांदनी रात भी फीकी हो जाती है।34।। अर्थात् भामण्डल का प्रकाश सूर्य और चन्द्र से भी अधिक होता है।

दुर्भिक्ष चोरी मिरगी आदि निवारक

स्वर्गा-पवर्ग-गममार्ग-विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्-त्रिलोक्याः।
दिव्य-ध्वनि-र्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः।।35।।

स्वर्ग मोक्ष मारग संकेत, परम धरम उपदेशन हेते।
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध, सब भाषा-गर्भित हितसाध।।

अर्थ--हे परमदेव !आपकी दिव्यवाणी स्वर्ग मोक्ष का मार्ग बताने वाली तथा जगत के लिये हितकर सत्धर्म, सात तत्त्व, नौ पदार्थ आदि का यथार्थ विशद कथन करने वाली एवं श्रोताओं की भाषामयी होती है।35।।

सम्पत्ति-दायक

उन्निद्र-हेम-नवपंकजपुञ्ज-कान्ति,
पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखा-भिरामौ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधा परि-कल्पयन्ति।।36।।

विकसित सुवरन कमल-दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं।
तुम पद पदवी जहं धरैं, तहं सुर कमल रचाहिं।

अर्थ--हे जिनेन्द्र! विहार करते समय विकसित सुवर्ण कमल की कान्ति को अपने चरणों के नखों (नाखूनों) की कान्ति से सुन्दर कर देने वाले आपके चरण जहां पड़ते हैं वहां पर देव पहले ही स्वर्णमय कमल बनाते जाते हैं।36।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुर्जन वशीकरण

इत्थं यथा तव विभूति-रभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन विधौ न तथा परस्य।
यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्ध-कारा,
तादृक्कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोपि।।37।।

जैसी महिमा तुम विषैं, और धरें नहिं कोय।
सूरज में जो जोति है, नहिं तारागण होय।।

अर्थ--हे जिनेन्द्र देव! इस प्रकार धर्म उपदेश देते समय अष्ट प्रातिहार्य रूप जैसी विभूति आपकी होती है उस तरह की विभूति अन्य किसी धर्म-उपदेशक के उपदेश करते समय नहीं होती। ठीक है, जैसी अन्धकारनाशिनी प्रभा सूर्य की होती है वैसी चमकते हुए भी तारों की नहीं होती।।37।।

हाथी वशीकरण

श्च्योतन्-मदा-विल-विलोल-कपोल-मूल--
मत्त-भ्रमद्-भमर-नाद-विवृद्ध-कोपम्।
ऐरावताभ-मिभ-मुद्धत-मापतन्तं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदा-श्रितानाम्।।38।।

मद-अवलिप्त-कपोल-मूल अलि कुल झंकारै,
तिन सुन शब्द प्रचण्ड क्रोध उद्धत अति धारै।
काल वरन विकराल कालवत सन्मुख आवै,
ऐरावत सौ प्रबल सकल जन भय उपजावै।।
देखि गयन्द न भय करै, तुम पद महिमा लीन।
विपति-रहित संपति सहित, वरतैं भक्त अदीन।।

अर्थ--हे प्रभो! जिसके कपोल (गाल) से झर रहे मद पर भौंरे गूंज रहे है अतः भौरों की गुञ्जार सुनकर जिसको प्रचण्ड क्रोध आ गया हैं, ऐसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मदोन्मत्त ऐरावत-जैसे हाथी को भी देखकर आपके आश्रित भक्तों को जरा भी भय नहीं होता।।38।।

सिंह भय निवारक

भिन्नेभ-कुम्भ-गल-दुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ताफल-प्रकर-भूषित-भूमिभागः।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणा-धिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते।।39।।

अति मदमत्त गयन्द कुम्भथल नखन विदारै,
मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै।
बांकी दाढ़ विशाल वदन में रसना लोलै,
भीम भयानक रूप देखि जन थरहर डोलै।।
ऐसे मृगपति पद तलैं, जो नर आयो होय।
शरण गहे तुम चरण की, बाधा करै न सोय।।

अर्थ--हे विभो! हाथी के मस्तक को अपने नाखूनों से फाड़कर जिसने रक्त से भीगे गजमुक्ताओं (मोतियों) से पृथ्वी सजा दी है, तथा शिकार करने के लिये तैयार, ऐसा विकराल सिंह अपने पंजों में आये हुए आपके चरणों की शरण लेने वाले मनुष्य पर आक्रमण नहीं करता है।।39।।

अग्नि भय निवारक

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं,
दावानलं ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिंगम्
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख-मापतन्तं,
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्य-शेषम्।।40।।

प्रलय पवन कर उठी आग जो तास पटंतर,
वमैं फुलिंग शिखा-उत्तङ्ग परजलैं निरंतर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जगत समस्त निगल्ल भस्म करहैगी मानों,
तड़तड़ात दव अनल जोर चहुँ दिशा उठानों।।
सो इक छिन में उपशमें, नाम नीर तव लेत।
होय सरोवर परिणमैं, विकसित कमल समेत।।

अर्थ--हे भगवन्! प्रलय-समय जैसी तेज वायु से धधकती हुई वन की अग्नि, जिसमें कि भयानक फुलिंग (चिनगारे) बहुत ऊँचे निकल रहे हों ऐसी भयानक हो कि मानो सारे संसार को भस्म कर डालेगी, उसके सामने आजाने पर हृदय में लिया हुआ आपका नाम रूपी जल तत्काल उसको बुझाकर शान्त कर देता।।40।।

सर्प विष निवारक

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिन-मुत्फण-मापतन्तम्।
आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-शंकस्-,
त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः।।41।।

कोकिल कंठ-समान श्याम तन क्रोध जलंता,
रक्तनयन फंकार मार विषकण उगलंता।
फण को ऊँचौ करै वेग ही सन्मुख धाया,
तव जन होय निशंक देखि फणिपति को आया।।
जो चापे निज पग तलैं, व्यापै विष न लगार।
नाग दमनि तुम नाम की, है जिनके आधार।।

अर्थ--हे विश्वपते! उन्मत्त कोयल के कंठ के समान काला, क्रोध से उद्धत, लाल नेत्र किये, फण को ऊंचा उठाये भयानक सर्प आक्रमण करे तो वह मनुष्य निःशंक (निश्चिन्त) बना रहता है जिसके हृदय में आपके पवित्र नामरूपी सर्प-दमन करने वाली अमोघ औषधि विद्यमान है।।41।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

युद्ध भय निवारक

वल्गत्तुरंग-गज-गर्जित-भीम-नाद-
माजौ बलं बलवतामपि भू-पतीनाम्।
उद्यद्-दिवाकर-मयूख-शिखा-पविद्धं,
त्वत्कीर्त्तनात्-तम इवाशु भिदा-मुपैति।।42।।

जिस रनमाहिं भयानक शब्द कर रहे तुरङ्गम,
धन से गज गरजाहिं मत्त मानो गिरि जंगम।
अत कोलाहल माँहि बात जस नाँहि सुनीजै,
राजन को परचण्ड देखि बल धीरज छीजै।।
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय।।

अर्थ--हे विश्व उद्धारक देव! जहाँ घोड़े भयानक हींस रहे हैं, हाथी चिंघाड़ रहे हैं, (भयानक अस्त्र शस्त्र चल रहे है।) घमासान लड़ाई से उड़ती हुई धूल ने सूर्य का प्रकाश भी छिपा दिया है, ऐसी भयानक युद्धभूमि में आपका स्मरण करने से बलवान् राजाओं की सभी सेना ऐसे फट जाती है जैसे सूर्य उदय होने से अन्धकार फट जाता है।।42।।

युद्ध में रक्षक और विजय दायक

कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह--
वेगावतार-तुरणातुर-योध-भीमे।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षास्--
त्वत्-पाद-पंकज-वना-श्रयिणो लभन्ते।।43।।

मारे जहाँ गयन्द, कुभ हथियार विदारे,
उमगे रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारे।
होय तिरन असमर्थ महाजोधा बलपूरे,
तिस रन में जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरे।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुर्जन अरि कुल जीतके, जय पावैं निकलंक।
तुम पद पंकज मन बसें, ते नर सदा निशंक।।

अर्थ--हे विश्व-विजेता! जिसे युद्ध में भाले वर्छियों के द्वारा छिन्न भिन्न हाथियों के शरीर से निकले हुए रुधिर के प्रवाह को पार करने में बड़े बड़े सूरवीर योद्धा भी व्याकुल हो जाते हैं, ऐसे भयानक विकराल युद्ध में आपके चरणों की शरण लिये भक्त पुरुष दुर्जन शत्रु को भी जीत लेते हैं।।43।।

भयानक-जल-विपत्ति नाशक

अम्भो-निधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र--
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाड्वाग्नौ।
रंगत्तरंग-शिखर-स्थित-यान-पात्रास्--
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्-व्रजन्ति।।44।।

नक्र चक्र मगरादि मच्छ करि भय उपजावै।
जामें वड़वा अग्नि दाहतें नीर जलावै।
पार न पावैं जास, थाह नहिं लहिए जाकी,
गरजे अति गम्भीर लहर की गिनति न ताकी।।
सुखसों तिरै समुद्र को, जे तुम गुण सुमराहिं।
लोल कलोलन के शिख, पार यान ले जाहिं।।

अर्थ--हे तरण तारण देव! जहाँ भयानक नाकू मगर, बड़े मच्छ (ह्वेल शार्क आदि मछली) आदि जलचर जीवों ने क्षोभ मचा रक्खा है तथा वडवा अग्नि से जिसका जल बहुत गर्म हो गया है ऐसे भयानक समुद्र में विकराल तूफान के समय आपका स्मरण करने से मनुष्य अपने जलयान (जहाज) को उठती हुई तरंगों के ऊपर से बिना किसी कष्ट के ले जाते हैं।।44।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्व भयानक रोग नाशक

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः,
शोच्यां दशा-मुपगताश्-च्युत-जीविताशाः।
त्वत्पाद-पंकज-रजोमृतदिग्ध-देहाः,
मर्त्या भवन्ति मकर-ध्वज-तुल्य-रूपाः।।45।।

महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं,
वात, पित्त, कफ, कुष्ट आदि जो रोग गहे हैं।
सोचत रहैं उदास नाहिं जीवन की आशा,
अति घिनावनी देह धरैं दुर्गन्ध निवासा।
तुम पद पंकज धूल को, जो लावै निज अंग।
ते नीरोग शरीर लहि, छिनमें होंय अनंग।।

अर्थ--हे अजरामर प्रभो! जलोदर रोग के कारण जो व्यक्ति पेट के भार से खेद-भिन्न हैं, भयानक रोग के कारण जिनकी दशा शोचनीय है, जिनके जीवित रहने की आशा नहीं रही, ऐस रोगीजन यदि आपके चरणों की धूल अपने शरीर से लगाते हैं। तो वे नीरोग होकर कामदेव के समान सुन्दर हो जाते हैं।।45।।

कारागार आदि बन्धन विनाशक

आपाद-कण्ठ-मुरुशृङ्खल-वेष्टितांगा,
गाढं बृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघाः।
त्वन्नाम-मन्त्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति।।46।।

पांव कंठतैं जकर बांध सांकल अतिभारी,
गाढ़ी बेड़ी पैर मांहि जिन जांघ विदारी।
भूख, प्यास, चिन्ता शरीर दुख जे विललाने,
शरण नांहिं जिन कोय भूप के बन्दीखाने।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम सुमरत स्वयमेव ही, बन्धन सब कट जाहिं।
छिनमें ते सम्पति लहैं, चिन्ता भय विनसाहिं।।

अर्थ--हे बन्ध-विमोचन! बन्दीघर (जेल) में जिनको पैर से कंठ तक भारी जंजीर से जकड़ दिया है, बड़ी बेड़ी की कोर से जिनकी जांघें छिल गई हैं, ऐसे मनुष्य आपके नाम को स्मरण करते हुए तुरन्त स्वयं बन्धन और भय से छूट जाते हैं।।46।।

सर्व भय निवारक

मत्त-द्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि-महोदर-बंधनोत्थम्।
तस्याशु नाश-मुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमान-धीते।।47।।

महामत्त गजराज और मृगराज दवानल,
फणपति रण परचण्ड नीरनिधि रोग महाबल।
बन्धन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै।,
तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशैं।।
इस अपार संसार में, शरन नाहिं प्रभु कोय।
यातैं तुम पद-भक्त को, भक्ति सहायी होय।।

अर्थ--हे संकट निवारक प्रभो! जो मनुष्य आपके इस स्तवन को पढ़ता है उसके, मदोन्मत्त हाथी, सिंह, दावानल (प्रचण्ड अग्नि), सर्प, युद्ध, समुद्र, जलोदर आदि रोग तथा बन्दीघर हथकड़ी बेड़ी आदि के बन्धन का भय स्वयं तत्काल डर कर नष्ट हो जाता है।।47।।

मनोवाछित सिद्धिदायक

स्तोत्र-स्रजं तव जिनेंद्र गुणैर्-निबद्धां
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धत्ते जनो य इह कण्ठ-गतामजस्त्रं
तं मानतुंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः।।48।।

यह गुणमाल विशाल नाथ तुम गुणन संवारी,
विविध वर्णमय पुहुप गूंथ मैं भक्ति विथारी।
जो नर पहिरैं कण्ठ; भावना मनमें भावें,
मानतुङ्ग ते निजाधीन शिवलक्ष्मी पावें।।
भाषा भक्तामर कियो, 'हेमराज' हित-हेत।
जे नर पढ़ें सुभावसों, ते पावैं शिवखेत।।

अर्थ--हे जिनेन्द्र! विविध वर्णमय (अक्षरमय, रंगमंय) आपके गुणों से गुँथी हुई जो मैंने भक्ति से यह स्तुति रूपी माला बनाई है, जो पुरुष इसको अपने गले में सतत धारण करता है, उस उंच्च ज्ञानी या सन्मानी व्यक्ति को मुक्ति लक्ष्मी शीघ्र प्राप्त होती है।।48।।

'पुण्य' (तोता क्यों रोता से)

हे आर्य !
दान देना
दाता का कार्य है
प्रतिदिन अनिवार्य है
यथाशक्ति
तथा भक्ति
मान सम्मान के साथ
पाप को पुण्य में
ढालना है ना !

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री भक्तामर भाषा पाठ

(श्री कमलकुमारजी शास्त्री 'कुमुद')

भक्त अमर नत मुकुट सुमणियों, की सु-प्रंभा का जो भासक।
पापरूप अतिसघन तिमिर का, ज्ञान-दिवाकर-सा नाशक।।
भव-जल पतित जनों को जिसने, दिया आदि में अवलम्बन।
उनके चरण कमल का करते, सम्यक बारम्बार नमन।।1।।

सकल वाङ्मय तत्त्वबोध से, उद्भव पटुतर धी-धारी।
उसी इन्द्र की स्तुति से है, वन्दित जग-जन मन-हारी।।
अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी प्रथम जिनस्वामी की।
जगनामी-सुखधामी तद्भव-शिवगामी अभिरामी की।।2।।

स्तुति को तैयार हुआ हूँ, मैं निर्बुद्धि छोड़ के लाज।
विज्ञजनों से अर्चित हे प्रभु, मंदबुद्धि की रखना लाज।।
जल में पड़े चन्द्र-मंडल को, बालक बिना कौन मतिमान।
सहसा उसे पकड़ने वाली, प्रबलेच्छा करता गतिमान।।3।।

हे जिन! चन्द्रकान्त से बढ़कर, तव गुण विपुल अमल अतिश्वेत।
कह न सकें नर हे गुण-सागर, सुर-गुरु के सम बुद्धिसमेत।।
मक्र-नक्र-चक्रादि जन्तु युत, प्रलय पवन से बढ़ा अपार।
कौन भुजाओं से समुद्र के, हो सकता है परले पार।।4।।

वह मैं हूँ कुछ शक्ति न रखकर, भक्ति प्रेरणा से लाचार।
करता हूँ स्तुति प्रभु तेरी, जिसे न पौर्वा-पर्य विचार।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निज शिशु की रक्षार्थ आत्म-बल, बिना विचारे क्या न मृगी।
जाती है मृगपति के आगे, शिशु-सनेह में हुई रंगी।।5।।

अल्पश्रुत हूँ श्रुतवानों से, हास्य कराने का ही धाम।
करती है बाचाल मुझे प्रभु, भक्ति आपकी आठोंयाम।।
करती मधुर गान पिक मधु में, जगजन मनहर अति अभिराम।
त्समें हेतु सरस फल फूलों, के युत हरे-भरे तरु-आम।।6।।

जिनवर की स्तुति करने से, चिर संचित भविजन के पाप।
पल भर में भग जाते निश्चित, इधर-उधर अपने ही आप।।
सकल लोक में व्याप्त रात्रि का, भ्रमर सरीखा काला ध्वान्त।
प्रातः रवि की उग्र किरण लख, हो जाता क्षण में प्राणान्त।।7।।

मैं मति-हीन-दीन प्रभु तेरी, शुरू करूं स्तुति अघ-हान।
प्रभु-प्रभाव ही चित्त हरेगा, सन्तों का निश्चय से मान।।
जैसे कमल-पत्र पर जल-कण, मोती कैसे आभावान।
दिपते हैं फिर छिपते हैं असली मोती में हे भगवान।।8।।

दूर रहे स्तोत्र आपका, जो कि सर्वथा है निर्दोष।
पुण्य-कथा ही किन्तु आपकी, हर लेती है कल्मष-कोष।।
प्रभा प्रफुल्लित करती रहती, सर के कमलों को भरपूर।
फेंका करता सूर्य-किरण को, आप रहा करता है दूर।।9।।

त्रिभुवन-तिलक जगत-पति हे प्रभु! सद्गुरुओं के हे गुरुवर्य।
सद्भक्तों को निजसम करते, इसमें नहीं अधिक आश्चर्य।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वाश्रित जन को निजसम करते, धनी लोग धन धरनी से।
नहीं करें तो उन्हें लाभ क्या? उन धनिकों की करनी से।।10।।

हे अनिमेष विलोकनीय प्रभु, तुम्हें देखकर परम-पवित्र।
तोषित होते कभी नहीं हैं, नयन मानवों के अन्यत्र।।
चन्द्र-किरण सम उज्ज्वल निर्मल, क्षीरोदधि का कर जलपान।
कालोदधि का खारा पानी, पीना चाहे कौन पुमान।।11।।

जिन जितने जैसे अणुओं से, निर्मापित प्रभु तेरी देह।
थे उतने वैसे अणु जग में, शांत-राग-मय निःसन्देह।।
हे त्रिभुवन के शिरोभाग के, अद्वितीय आभूषण-रूप।
इसीलिए तो आप सरीखा, नहीं दूसरों का है रूप।।12।।

कहां आपका मुख अतिसुन्दर, सुर-नर-उरग नेत्र-हारी।
जिसने जीत लिये सब जग के, जितने थे उपमाधारी।।
कहां कलंकी बंक चन्द्रमा, रंक-समान कीट-सा दीन।
जो पलाश-सा फीका पड़ता, दिन में हो करके छबि-छीन।।13।।

तव गुण पूर्ण-शशांक कान्तिमय, कला-कलापों से बढ़के।
तीन लोक में व्याप रहे हैं, जो कि स्वच्छता में चढ़के।।
विचरें चाहे जहां कि जिनको, जगन्नाथ का एकाधार।
कौन माई का जाया रखता, उन्हें रोकने का अधिकार।।14।।

मद की छर्की अमर ललनाएँ, प्रभु के मन में तनिक विकार।
कर न सकीं आश्चर्य कौन सा, रह जाती हैं मन को मार।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गिर गिर जाते प्रलय पवन से, तो फिर क्या वह मेरु--शिखर।
हिल सकता है रंग-मात्र भी, पाकर झंझावात प्रखर।।15।।

धूप न बत्ती तैल बिना ही, प्रकट दिखाते तीनों लोक।
गिरि के शिखर उड़ाने वाली, बुझा न सकती मारुत झोक।।
तिस पर सदा प्रकाशित रहते, गिनते नहीं कभी दिन-रात।
ऐसे अनुपम आप दीप हैं, स्व-पर-प्रकाशक जग विख्यात।।16।।

अस्त न होता कभी न जिसको, ग्रस पाता है राहु प्रबल।
एक साथ बतलाने वाला, तीन लोक का ज्ञान विमल।।
रुकता कभी प्रभाव न जिसका, बादल की आकर के ओट।
ऐसी गौरव--गरिमा वाले, आप अपूर्व दिवाकर कोट।।17।।

मोह महातम दलने वाला, सदा उदित रहने वाला।
राहु न बादल से दबता पर, सदा स्वच्छ रहने वाला।।
विश्व-प्रकाशक मुख-सरोज तब, अधिक कांतिमय शांतिस्वरूप।
है अपूर्व जगका शशि-मण्डल, जगत शिरोमणि शिव का भूप।।18।।

नाथ आपका मुख जब करता, अन्धकार का सत्यानाश।
तब दिन में रवि और रात्रि में, चन्द्र-बिम्ब का विफल प्रयास।।
धान्य--खेत जब धरती तल के, पके हुये हों अति अभिराम।
शोर मचाते जल को लादे, हुये घनों से तब क्या काम।।19।।

जैसा शोभित होता प्रभु का, स्वपर-प्रकाशक उत्तम ज्ञान।
हरिहरादि देवों में वैसा, कभी नहीं हो सकता भान।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अति ज्योतिर्मय महारतन का, जो महत्व देखा जाता।
क्या वह किरणाकुलित कांच में, अरे कभी लेखा जाता।।20।।

हरिहरादि देवों का ही मैं, मानूं उत्तम अवलोकन।
क्योंकि उन्हें देखने भर से, तुझसे तोषित होता मन।।
है परन्तु क्या तुम्हें देखने, से हे स्वामिन्! मुझको लाभ।
जन्म जन्म में लुभा न पाते, कोई यह मेरा अमिताभ।।21।।

सौ सौ नारी सौ सौ सुत को, जनती रहती सौ सौ ठौर।
तुम से सुत को जनने वाली, जननी महती क्या है और?
तारागण को सर्व दिशाएँ, धरें नहीं कोई खाली।
पूर्व दिशा ही पूर्ण प्रतापी, दिनपति को जनने वाली।।22।।

तुम को परम पुरुष मुनि मानें, विमल वर्ण रवि तमहारी।
तुम्हें प्राप्त कर मृत्युञ्जय के, बन जाते जन अधिकारी।।
तुम्हें छोड़कर अन्य न कोई, शिवपुर--पथ बतलाता है।
किन्तु विपर्यय मार्ग बता कर, भव--भव में भटकाता है।।23।।

तुम्हें आद्य अक्षय अनन्त प्रभु, एकानेक तथा योगीश।
ब्रह्मा ईश्वर या जगदीश्वर, विदितयोग मुनिनाथ मुनीश।।
विमल ज्ञानमय या मकरध्वज, जगन्नाथ जगपति जगदीश।
इत्यादिक नामों कर माने, सन्त निरन्तर विभो निधीश।।24।।

ज्ञान पूज्य है, अमर आपका, इसलिए कहलाते बुद्ध।
भुवनत्रय के सुख--संवर्द्धक, अतः तुम्हीं शंकर हो शुद्ध।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोक्ष--मार्ग के आद्य प्रवर्त्तक, अतः विधाता कहे गणेश।
तुम सम अवनी पर पुरुषोत्तम, और कौन होगा अखिलेश।।25।।

तीन लोक के दुःखहरण करने वाले हे तुम्हें नमन।
भूमण्डल के निर्मल--भूषण, आदि जिनेश्वर तुम्हें नमन।।
हे त्रिभुवन के अखिलेश्वर हो, तुमको बारम्बार नमन।
भव--सागर के शोषक पोषक, भव्य जनों के तुम्हें नमन।।26।।

गुणसमूह एकत्रित होकर, तुझमें यदि पा चुके प्रवेश।
क्या आश्चर्य न मिल पाये हों, अन्य आश्रय उन्हें जिनेश।।
देव कहे जाने वालों से, आश्रित होकर गर्वित दोष।
तेरी ओर न झांक सके वे, स्वप्नमात्र में हे गुणकोष।।27।।

उन्नत तरु अशोक के आश्रित, निर्मल किरणोन्नत वाला।
रूप आपका दिपता सुन्दर, तमहर मनहर छवि वाला।।
वितरण किरण निकर तमहारक दिनकर घनके अधिक समीप।
नीलाचल पर्वत पर होकर, नीराजन करता ले दीप।।28।।

मणि-मुक्ता किरणों से चित्रित, अद्भुत शोभित सिंहासन।
कान्तिमान कंचन-सा दिखता, जिस पर तव कमनीय वदन।।
उदयाचल के तुंग शिखर से, मानो सहस्ररश्मि वाला।
किरण-जाल फैलाकर निकला, हो करने को उजियाला।।29।।

ढुरते सुन्दर चँवर विमल अति, नवल-कुन्द के पुष्प-समान।
शोभा पाती देह आपकी, रौप्य धवल-सी आभावान।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कनकाचल के तुंग शृंग से, झर-झर झरता है निर्झर।
चन्द्र-प्रभा सम उछल रही हो, मानो उसके ही तट पर।।30।।

चन्द्र-प्रभा सम झल्लरियों से, मणि-मुक्तामय अति कमनीय।
दीप्तिमान् शोभित होते हैं, सिर पर छत्रत्रय भवदीय।।
ऊपर रहकर सूर्य-रश्मि का, रोक रहे हैं प्रखर-प्रताप।
मानों वे घोषित करते हैं, त्रिभुवन के परमेश्वर आप।।31।।

ऊँचे स्वर से करने वाली। सर्व दिशाओं में गुञ्जन।
करने वाली तीन लोक के, जन-जन का शुभ-सम्मेलन।।
पीट रही है डंका-"हो सत् धर्म"-राज की ही जय-जय।
इस प्रकार बज रही गगन में, भेरी तव यश की अक्षय।।32।।

कल्पवृक्ष के कुसुम मनोहर, पारिजात एवं मंदार।
गन्धोदक की मन्द वृष्टि करते है। प्रमुदित देव उदार।।
तथा साथ ही नभ से बहती, धीमी धीमी मन्द पवन।
पंक्ति बांध कर बिखर रहे हों, मानों तेरे दिव्य-वचन।।33।।

तीन लोक की सुन्दरता यदि, मूर्तिमान बन कर आवे।
तन भा-मंडल की छवि लखकर, तव सन्मुख शरमा जावे।।
कोटि सूर्य के ही प्रताप सम, किन्तु नहीं कुछ भी आताप।
जिसके द्वारा चन्द्र सुशीतल, होता निष्प्रभ अपने आप।।34।।

मोक्ष-स्वर्ग के मार्ग प्रदर्शक, प्रभुवर तेरे दिव्य-वचन।
करा रहे हैं 'सत्य-धर्म' के, अमर-तत्त्व का दिग्दर्शन।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुनकर जग के जीव वस्तुतः, कर लेते अपना उद्धार।
इस प्रकार परिवर्तित होते, निज-निज भाषा के अनुसार।35।।

जगमगात नख जिसमें शोभें, जैसे नभमें चन्द्रकिरण।
विकसित नूतन सरसीरुह सम, हे प्रभु तेरे विमल चरण।।
रखते जहां वहीं रचते हैं, स्वर्णकमल, सुरदिव्य ललाम।
अभिनन्दन के योग्य चरण तव, भक्ति रहे उनमें अभिराम।36।।

धर्म-देशना के विधान में, था जिनवर का जो ऐश्वर्य।
वैसा क्या कुछ अन्य कुदेवों, में भी दिखता है सौंदर्य।।
जो छवि घोर-तिमिर के नाशक, रवि में है देखी जाती।
वैसा ही क्या अतुल कान्ति, नक्षत्रों में लेखी जाती।37।।

लोल कपोलों से झरती है, जहां निरन्तर मद की धार।
होकर अति मदमत्त कि जिस पर, करते हैं भौंरे गुंजार।।
क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, उद्धत ऐरावत सा काल।
देख भक्त छुटकारा पाते, पाकर तब आश्रय तत्काल।38।।

क्षत-विक्षत कर दिये गजों के, जिसने उन्नत गण्डस्थल।
कांतिमान् गज-मुक्ताओं से, पाट दिया हो अवनी-तल।।
जिन भक्तों को तेरे चरणों, के गिरि की हो उन्नत ओट।
ऐसा सिंह छलांगे भरकर, क्या उस पर कर सकता चोट।39।।

प्रलय काल की पवन उठाकर, जिसे बढ़ा देती सब ओर।
फिर्के फुलिंगे ऊपर तिरछे, अंगारों का भी होवे जोर।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भुवनत्रय को निगला चाहे, आती हुई अग्नि भभकार।
प्रभु के नाम-मन्त्र जल से वह, बुझ जाती है उसही बार।।40।।

कंठ कोकिला सा अति काला, क्रोधित हो फण किया विशाल।
लाल-लाल लोचन करके यदि, झपटै नाग महा विकराल।
नाम-रूप तब अहि-दमनी का, लिया जिन्होंने हो आश्रय।
पग रख कर निश्शंक नाग पर, गमन करें वे नर निर्भय।।41।।

जहां अश्व की और गजों की, चीत्कार सुन पड़ती घोर।
शूरवीर नृप की सेनाएँ, रव करती हों चारों ओर।।
वहां अकेला शक्तिहीन नर, जप कर सुन्दर तेरा नाम।।
सूर्य--तिमिर सम शूर--सैन्य का, कर देता है काम तमाम।।42।।

रण में भालों से वेधित गज, तन से बहता रक्त अपार।
वीर लड़ाकू जहँ आतुर हैं, रुधिर-नदी करने को पार।।
भक्त तुम्हारा हो निराश तहँ, लख अरिसेना दुर्जयरूप।
तव पादारविन्द पा आश्रय, जय पाता उपहार-स्वरूप।।43।।

यह समुद्र कि जिसमें होवें, मच्छ मगर एवं घड़ियाल।
तूफां होकर उठती होवें, भयकारी लहरें उत्ताल।।
भ्रमर-चक्र में फंसे हुये हों, बीचों बीच अगर जल-यान।
छुटकारा पा जाते दुख से, करने वाले तेरा ध्यान।।44।।

असहनीय उत्पन्न हुआ हो, विकट जलोदर पीड़ा भार।
जीने की आशा छोड़ी हो, देख दशा दयनीय अपार।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसे व्याकुल मानव पाकर, तेरी पद-रज' संजीवन।
स्वास्थ्य-लाभकर बनता उसका, कामदेव सा सुन्दर तन।।45।।

लोह-श्रृंखला से जकड़ी है, नख से सिख तक देह समस्त।
घुटने-जंघे छिले बेड़ियों, से अधीर जो हैं अतित्रस्त।।
भगवन ऐसे बन्दीजन भी, तेरे नाम-मन्त्र की जाप।
जप कर गत-बन्धन हो जाते, क्षण भर में अपने ही आप।।46।।

बृषभेश्वर के गुण स्तवन का, करते अहि-निशि जो चिंतन।
भय भी भयाकुलित हो उनसे, भग जाता है हे स्वामिन।।
कुंजर-समर-सिंह-शोक-रुज, अहि दावानल कारागार।
इनके अतिभीषण दुःखों का, हो जाता क्षण में संहार।।47।।

हे प्रभु तेरे गुणोद्यान की, क्यारी से चुन दिव्य-ललाम।
गूंथी विविध वर्ण सुमनों की, गुण-माला सुन्दर अभिराम।।
श्रद्धासहित भविकजन जो भी कण्ठाभरण बनाते हैं।
मानतुंग-सम निश्चित सुन्दर, मोक्ष-लक्ष्मी पाते हैं।।48।।

मत सोच
लोग तेरे बारे में क्या सोचते हैं?
क्या जानते हैं?
क्या समझते हैं?
सोच ये कि
तू अपने बारे में क्या सोचता है?
क्या जानता है?
क्या समझता है?
अपने आप को।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐 कल्याणमन्दिरस्तोत्रम् 卐

(हिन्दी पद्यानुवाद आचार्य विद्यासागर जी कृत)

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि—
भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रिपद्मम्।
संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तु—
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य।।1।।
यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम्।
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतो—
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये।।2।। (युग्मम्)

कल्याण-खाण-अघनाशक औ उदार,
हैं जो जिनेश-पद-नीरज विश्वसार।
संसारवर्धि वर पोत ! स्ववक्षधार,
उन्हें यहां नमन मैं कर बार-बार।।1।।
रे ! रे ! हुवा स्तवन ना जिनदेव जी का;
धीमान से जब वृहस्पति से प्रभू का।
तो मैं उसे हि करने हत जा रहा हूं;
क्यों धृष्टता अहमता दिखला रहा हूं।।2।।

जिनेन्द्र भगवान् के चरणकमलों को नमस्कार कर मैं उन पार्श्वनाथस्वामी की स्तुति करता हूं, जो गुरुता के समुद्र थे, और कमठ का मानमर्दन करने वाले थे तथा बृहस्पति भी जिनकी स्तुति करने के लिए समर्थ नहीं हो सकता।।1-2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप —
मस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किंकिल धर्मरश्मेः।।3।।

मेरे समान लघु-धी कवि लोग सारे,
सामान्य से तव सुवर्णन भी विचारे।
कैसे करे अहह ! नाथ ! नहीं करेंगे;
उल्लू दिवान्ध रवि को न यथा लखेंगे।।3।।

हे प्रभे ! जिस प्रकार उलूक का बालक, सूर्य के रूप का वर्णन नहीं कर सकता, क्योंकि जब तक सूर्य रहता है, तब तक वह अन्धा रहता है, इसी तरह मैं आपके सामान्य स्वरूप का भी वर्णन नहीं कर सकता हूं, क्योंकि मैं भी मिथ्याज्ञानरूपी अन्धकार से अन्धा होकर आपके दर्शन से वञ्चित रहा हूं।।3।।

मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यो,
नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत।
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्-
मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः।।4।।

है आपको विगतमोह मनुष्य जाना,
भो ! किन्तु जो जव गुणों उसने गिनान
तूफान से जलविहीन समुद्र हो तो;
वार्धिस्थ रत्नचय का अनुमान है क्या ?।।4।।

हे प्रभो ! जिस तरह प्रलयकाल में पानी न होने से साफ-साफ दिखने वाले समुद्र के रत्नों को कोई नहीं गिन पाता, उसी तरह मिथ्यात्व के अभाव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

से साफ-साफ दिखनेवाले आपके गुणों को कोई नहीं गिन सकता क्योंकि वे अन्नतानन्त हैं।।4।।

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्यागुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निजबाहु-युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः।।5।।

मैं स्तोत्र को तव विभो ! करने चला हूं,
हैं आप नैक-गुणधाम, व मन्द-धी हूं।
तो बाल भी जलधि की सुविशालता को;
फैला स्वहस्त युग को कहना नहीं क्या ?।।5।।

हे नाथ ! जेसे बालक शक्ति न रहते हुए भी समुद्र का विस्तार से वर्णन करने के लिये तैयार रहता है, वैसे ही मैं भी आपकी स्तुति करने के लिये तैयार हूं।।5।।

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः।
जाता तदेवमसमीक्षितकारितेयं
जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि।।6।।

गाये गये तव न भो ! गुण योगियों से,
मेरा प्रवेश उनमें फिर हन्त कैसे ?
है हो गई इक यहां स्थिति जो अनोखी;
गाते स्व वाणि बल से फिर भी विहंग।।6।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे प्रभो ! आपका स्तवन प्रारम्भ करने के पहले मैंने इस बात का विचार नहीं किया कि आपके जिन गुणों का वर्णन बड़े-बड़े योगी भी नहीं कर सकते हैं, उनका वर्णन मैं कैसे करूंगा? इसलिये हमारी यह प्रवृत्ति बिना विचारे ही हुई है।6।।

आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन! संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे
प्रीणाति पद्मसरसः सरसाऽनिलोऽपि।7।।

जो स्तोत्र है ! जिन ! सुदूर रहे महात्मा !,
तेरा हि नाम जग को दुख से बचाता।
संतप्त भी पथिक जो रवि ताप से यों,
होता सुशान्त जलमिश्रित वायु से है।7।।

हे प्रभो ! आपके स्तवन की तो अचिन्त्य महिमा है ही, पर आपका नाम मात्र भी जीवों को संसार के दुःखों से बचा लेता है। जैसे ग्रीष्म ऋतु में घाम (धूप) से पीड़ित मनुष्यों को, कमलयुक्त सरोवर तो सुख पहुंचाते ही हैं, परन्तु उन सरावरों की शीतल हवा भी सुख पहुंचाती है।7।।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिलीभवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्मबन्धाः।
सद्यो भुजङ्गममया इव मध्यभाग —
मभ्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होते हिवास तव भव्य सुचित्त में त्यों,
होतेप्रभो शिथिल हैं धनकर्मबन्ध।
आते हि चन्दन-सुवृक्ष-सुवीच मोर;
हैं दौडते सकल ज्यों अहि एक ओर।।8।।

हे भगवान् ! जिस तरह मयूर के आते ही चन्दन वृक्ष में लिपटे हुए सांप ढीले पड़ जाते हैं, उसी तरह जीवों के हृदय में आपके आने पर उनके कर्मबन्धन ढीले पड़ जाते हैं।।8।।

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र!
रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि।
गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानं ।।9।।

ही देखते सब जिनेन्द्र ! तुझे मनुष्य,
होते सुदूर सहसा दुःख से अवश्य।
गंभीर शूर वसुधा पति को यहां जो;
हैं चोर देख सहसा द्रुत भागते यों।।9।।

हे नाथ ! जिस तरह तेजस्वी राजा के दिखते ही चोर चुराई हुई गायों को छोड़कर शीघ्र ही भाग जाते हैं, उसी तरह आपके दर्शन होते ही अनेक भयंकर उपद्रव मनुष्यों को छोड़कर भाग जाते हैं।

त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून —
मन्तर्गतस्य मरुतः सकिलानुभावः ।।10।।

कैसे जिनेश तुम तारक हो जनों के,
जो आपको हृदय से धर, पार होते।
वा चर्मपात्र जल में तिरता परंतु;
पात्रास्थ वायु बल है उस कर्म में ही ।।10।।

हे प्रभो ! जिस तरह भीतर भरी हुई वायु के प्रभाव से मसक पानी में तिरती है, उसी तरह आपको हृदय में धारण करने वाले (मन से आपका चिन्तवन करनें वाले) पुरुष आपके ही प्रभाव से संसार-समुद्र से तिरते हैं।।10।।

यस्मिन् हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभागः
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजःपयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धरवाडवेन।।11।।

ब्रह्मा, महेश मद को नहि जीत पाये,
भो ! आप किन्तु उसको क्षण में जलाये।
है ठीक ! अग्नि बुझती जल से यहां पे;
पीया गया न जल क्या बड़वाग्नि से पै।।11।।

हे जिनन्द्रे ! जिस काम ने हरि, हर, ब्रह्मा आदि महापुरुषों को पराजित कर दिया था, उस काम को भी आपने पराजित कर दिया, यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि जो जल संसार की समस्त अग्नि को नष्ट करता है, उस जल को भी बड़वानल नामक समुद्र की अग्नि नष्ट कर डालती है।।11।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वामिन्नल्पगरिमाणमपि प्रपन्नास्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः।।12।।

स्वामी ! महान गरिमायुत आपको वे,
संसारि जीव गह, धार स्व-वक्ष में औ।
कैसे सु आशु भवसागर पार होते;
आश्चर्य ! साधु जन की महिमा अचिन्त्य!।।12।।

हे प्रभो ! आश्चर्य है कि अधिक गौरव से युक्त (विरोध पक्ष में अतयन्त वजनदार) आपको प्राप्त हृदय में धारण करने वाले प्राणीजन संसार-समुद्र को बहुत ही लघुता से कैसे शीघ्र तर जाते हैं अथवा हर्ष है कि महापुरुषों का प्रभाव चिन्तवन के योग्य नहीं होता है।।12।।

क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौराः।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी।।13।।

भो ! क्रोध नष्ट पहले जब की बता दो,
कर्मौघ नष्ट तुमसे फिर बाद कैसे?
है ठीक ही हरित पूरित भूरूहों को;
शीतातिशीत हिम क्या? न यहां जलाता।।13।।

हे विभो ! लोक में देखा जाता है कि क्रोधी मनुष्य ही शत्रुओं को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीतते हैं, पर हे भगवान् ! आपने क्रोध को पहले ही (नवमें गुणस्थान में) जीत लिया था। फिर आपने क्रोध के अभाव में चौदहवें गुणस्थान तक कर्मरूपी शत्रुओं को कैसे जीता? आचार्य ने इस लोक विरुद्ध बात पर पहले आश्चर्य प्रगट किया, पर जब बाद में उन्हें ख्याल आता है कि ठण्डा तुषार बड़े-बड़े वनों को क्षण भर में जला देता है अर्थात् क्षमा से भी शत्रु जीते जा सकते हैं, तब वे अपने आश्चर्य का स्वयं समाधान कर लेते हैं।।13।।

त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप—
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोषदेशे।
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य—
दक्षस्य सम्भवपदं ननु कर्णिकायाः।।14।

शुद्धात्मरूप ! तुमको जिन ! ढूंढते हैं,
योगी सदा हृदय नीरज कोष में वे।
है ठीक ही, कमल बीज प्रसूतस्थान,
अन्यत्र क्यामिलत है? तजकर्णिका को ।।14।।

हे जिन ! बड़े-बड़े योगीश्वर ध्यान करते समय अपने हृदय कमल में आपको खोजते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि जैसे कमल बीज की उत्पत्ति कमल कर्णिका में ही होती है उसी तरह शुद्धात्म-स्वरूप आपका सद्भाव भी हृदय-कमल की कर्णिका में ही होगा।।14।।

ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति।
तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः।।15।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छद्मस्थ जीव तव देव ! सुध्यान से ही,
यो शीघ्र देह तज वे परमात्म होते।
पाषाण जो कनक मिश्रित ईश ! जैसा;
संयोग पा अनल का द्रुत हेम होता।।15।।

हे जिनेश ! लोक में तीव्र अग्नि के संबंध से जैसे अनेक धातुएं पत्थररूप पूर्व पर्याय को छोड़कर शीघ्र ही स्वर्णपर्याय को प्राप्त हो जाती हैं, उसी तरह संसार के प्राणी आपके ध्यान से शरीर को क्षण भर में छोड़कर परमात्मा की अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं।।15।।

अन्तःसदैव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः।।16।।

भो नित्य भव्य उर में जिन ! शोभते हो,
कैसे सुनाश करते ? उस काय को क्यों?
ऐसा स्वभाव रहता समभावियों का;
जो हैं महापुरुष विग्रह को नशाते।।16।।

हे भगवन् ! लोक में यह रीति प्रचलित है कि जो जहां रहता है, अथवा जहां जिसका ध्यान-सम्मान आदि किया जाता है वह उस जगह का विनाश नहीं करता। पर आप भव्य जीवों के जिस शरीर में हमेशा सम्मानपूर्वक ध्याये जाते हैं, आप उन्हें उसी विग्रह (शरीर) को नष्ट करने का उपदेश देते हैं। आचार्य को पहले यह लोक-विरुद्ध बात पर भारी आश्चर्य होता है, पर जब उनकी दृष्टि विग्रह शब्द के द्वेष अर्थ पर जाती है, तब उनका आश्चर्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दूर हो जाता है। श्लोक में आये हुये विग्रह शब्द के दो अर्थ है—एक 'शरीर' और दूसरा 'द्वेष'। इसी तरह 'मध्यविवर्तिनः' शब्द के भी दो अर्थ हैं—एक 'बीच में रहने वाला' और दूसरा 'राग-द्वेष से रहित समताभावी'।।16।।

आत्मामनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्धया,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभावः।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं
किन्नाम नो विषविकारमपाकरोति।।17।।

जो आपको जिन ! अभेद विचार से है,
आत्मा सुध्यान करता, तुम - सा हि होता।
जो नीर को अमृतमान, उसे हि पीता(
क्या नीर जो न उसके विष को नशाता ?।।17।।

हे जिनदेव ! जो पुरुष अपने आपको आपसे अभिन्न अनुभव करता है अर्थात् जो सोचता है कि 'भगवान' ! जैसी विशुद्ध आत्मा आपकी है निश्चय नय से हमारी आत्मा भी वैसी ही विशुद्ध है, किन्तु वर्तमान में कर्मोदय से अशुद्ध हो रही है। यदि मैं भी आपके रास्ते पर चलने का प्रयत्न करूंगा, तो मेरी आत्मा भी शुद्ध हो जावेगी। ऐसा सोचकर जो शुद्ध होने का प्रयत्न करता है, वह आपके ही समान शुद्ध हो जाता हैं जैसे कि यह अमृत है, इस प्रकार निरन्तर चिन्तवन किया गया पानी भी मन्त्रादि के संयोग से अमृतरूप हो जाता है और विष के विकार को दूर करने लगता हे।।17।।

त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि
नूनं विभो ! हरिहरादिधिया प्रपन्नाः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किंकाचकामलिभिरीश सितोऽपि शङ्खो,
नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण।।18।।

हे वीतराग ! तुमको परवादि लोग,
ब्रह्मा-महेश-हरि रूप वि जानते हैं।
है ठीक काचकमलामय रोग वाले;
क्या शंख को विविध वर्णमयी न जानें? ।।18।।

हे भगवन् ! जिस तरह कामला (पीलिया) रोगवाला अथवा रंगदार चश्माधारी मनुष्य सफेद शंख को नाना प्रकार से ग्रहण करता हैं। उसी प्रकार से मिथ्यात्व कर्म के उदय से अन्य मतावलम्बी पुरुष आपको ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि मानकर पूजते हैं।।18।।

धर्मोपदेशसमये सविधानुभावा—
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः।।19।।

धर्मोपदेश जब हो जन दूर होवे,
सानिध्य से हि तव, वृक्ष अशोक होते।
है भानु के उदय से जन मोद पाते;
उत्फुल्ल क्या तरु-लता-दल हो न पाते।।19।।

हे प्रभो ! धर्मोपदेश के समय जब आपकी समीपता के प्रभाव से मनुष्य तो दूर रहे वृक्ष भी अशोक यानि शोक रहित हो जाता है तब आप सूर्य उदित होने पर वृक्षों सहित समस्त जीव लोग क्या विवोध यानि विशेष ज्ञान को प्राप्त नहीं होते ? अर्थात् होते हैं। यह 'अशोक वृक्ष' प्रातिहार्य का वर्णन है।।19।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चित्रं विभो ! कथमवाङ्मुखवृन्तमेव
विष्वक्पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि।।20।।

वर्षा यहां सुमन की करते हि देव,
आश्चर्य ! वे कुसुम सर्व अधोमुखी क्यों?
है ठीक ही, सुमन-बंध सभी हि जाते;
नीचे मुनीश ! तुमको लख के सदैव।।20।।

हे मुनीश ! आश्चर्य है कि सब ओर व्यवधान रहित देवों के द्वार की हुई फूलों की वर्षा नीचे का बन्धन (डण्ठल) करके ही क्यों पड़ती है? अथवा ठीक ही है कि हे प्रभो ! पुष्पों अथवा विद्वानों के डंठल यानि कर्मों के बन्धन निश्चय से नीचे को ही जाते हैं अर्थात् नष्ट हो जाते हैं। यह 'पुष्पवृष्टि' प्रातिहार्य का वर्णन है।।20।।

5784

स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वा यतः परमसम्मदसङ्गभाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम्।।21।।

गंभीर वक्ष जनराशि-विनिर्गता जो,
है भारती, जब उसे करते सुपान।
हैं भव्य, जीव फलतः मुदमोद होते;
औ शीघ्र ही जन न मृत्युविहीन होते?।।21।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे विभो! लोक में प्रचलित है कि अमृत गहरे समुद्र से निकला था और उसका पान करने से देव लोक आनन्दित होते हुए अजर यानि बुढ़पा रहित तथा अमर अर्थात् मृत्यु रहित हो गये थे। वैसे ही आपकी वाणी भी आपके गंभीर हृदय रूपी समुद्र सेपैदा हुई है और उसके सेवन करने से लोग परम सुखी हो अजर-अमर हो जाते हैं-मुक्त हो जाते हैं। ऐसी हालत में लोग यदि कहें कि आपकी वाणी अमृत है, तो ठीक ही करते हैं। यह 'दिव्यध्वनि' प्रातिहार्य का वर्णन है।।21।।

स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनपुङ्गवाय,
ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः।।22।।

स्वामी मनो ! नम सुभक्ति सुभाव से ज्यों,
स्वर्गीय चामर कलाप हि बोलता है।
जो भी करे नमन साधु वराग्र को भो !;
होगा हि निर्मल तथा वह उर्ध्वगामी।।22।।

हे स्वामिन् ! जब देवलोग आप पर चँवर ढोरते हैं तब वे चँवर नहले नीचे की ओर झुकते हैं और बाद में ऊपर को जाते हैं, सो मानों लोगों से यह कहते हैं कि भगवान् को झुककर नमस्कार करने वाले पुरुष हमारे समान ही ऊपर को जाते हैं, अर्थात् स्वर्ग मोक्ष को जाते हैं। यह 'चमर' प्रातिहार्य का वर्णन है।।22।।

श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्न—
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चै–
श्चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम्।।23।।

गंभीर भारति-विधारक आपको त्यों,
और श्याम ! हेममणिनिर्मित आसनस्थ !
आमोद से निरखते सब भव्य मोर;
स्वामी ! सुमेरु पर मोर पयोद को ज्यों।।23।।

हे प्रभु ! जिस तरह सुवर्णमय: मेरु पर्वतपर उमड़े हुए गर्जना करने वाले कांले मेघ को देखकर मयूरों को बहुत ही आनन्द होता है उसी तरह दिव्यध्वनि करते हुए तथा सोने के सिंहासन पर विराजमान श्यामवर्ण वाले आपके दर्शनकर भव्य जीवों को अत्यन्त आनन्द होता है तथा उनका मन मयूर की तरह नाचने लगता है। यह 'सिंहासन' प्रातिहार्य का वर्णन है।।23।।

उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन,
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि।।24।।

भो ! आपके हि शित-मण्डल-ज्योति से जो,
देखो हुवा छवि विहीन अशोक वृक्ष।
सानिध्य से फिर विभो तव वीतराग !;
क्या भव्य चेतन न रागविहीन होते?।।24।।

हे वीतराग ! आपकी श्यामल कांति के संसर्ग से अशोक वृक्ष की लालिमा दब गई, सो ठीक ही है, वीतराग (ललाई रहित, दूसरे पक्ष में स्नेह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहित) के समीप से कौन सचेतन-प्राणी वीतराग (ललाई रहित, दूसरे पक्ष में स्नेह रहित) नहीं हो जाता? अर्थात् सभी हो जाते हैं। यह 'भामण्डल' प्रातिहार्य का वर्णन है।124।।

भो भो प्रमादमवधूय भजध्वमेन—
मागम्य निर्वृतिपुरी प्रति सार्थवाहम्।
एतिन्निवेदयाति देव ! जगत्त्रयाय
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते।125।।

ये आपके अमर दुन्दुभि है बताते,
आके करो अलस छोड़ जितेन्द्र सेवा
जो आप हैं वर शिवालय सार्थवाह;
इत्थं विचार मम है अरु ठीक भी है।125।।

हे देवाधिदेव ! आकाश में जो देवों का नगाड़ा बजा रहा है, वह मानों तीन लोक के जीवों को चिला-चिल्लाकर सचेत कर रहा है कि जो मोक्षनगरी की यात्रा के लिये जाना चाहते हैं वे प्रमाद छोड़कर भगवान् पार्श्वनाथ की सेवा करें। यह 'दुन्दुभि' प्रातिहार्य का वर्ण है।125।।

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ,
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः।
मुक्ताकलापकलितोल्लसितातपत्र[1]—
व्याजात्त्रिधाधृततनुर्ध्रुवमभ्युपेतः।126।।

1. मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाज्वल्यमान तुमसे त्रय लोक देख,
नष्टाधिकार वह चन्द्र हताश होके।
यो तीन छत्र मिष से तुम पास आके;
सेवा प्रभो शशि यहां करता हि तेरी।126।।

हे नाथ! जब आपने अपनी कांति व ज्ञान से तीनों लोकों को प्रकाशित कर दिया, तब मानो चन्द्रमा का प्रकाश करने रूप अधिकार छीन लिया गया। इसलिये वह तीन छत्र का वेष धरकर आपकी सेवा में अधिकार वापिस चाहने के लिये उपस्थित हुआ है। छत्रों में जो मोती लगे हुए हैं, वे मानों चन्द्रमा के परिवार स्वरूप तारागण हैं। यह 'छत्रत्रय' प्रातिहार्य का वर्णन है।126।।

स्वैनप्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन,
कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन।
माणिक्य हेमरजतप्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभाति।127।।

संपत्ति से भरितलोक समान आप,
कान्ति-प्रताप-यश का अरु हैं सुधाम।
हेमाद्रि दिव्य मणि निर्मित साल से ज्यों;
शोभायमान भगवन् इह हो रहे हैं।127।।

हे स्वामिन्! समवसरण भूमि में जो आपके चारों ओर माणिक्य, सुवर्ण और चाँदी के बने हुए तीन कोट हैं, वे मानों आपकी कांति, प्रताप और यश का वह समूह है, जो कि तीनों जगत् में फैलकर पिण्डरूप हो गया है।127।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिव्यस्त्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव।।28।।

देवेन्द्र की जिन ! यहां नमते हुए की,
माला, सुमोच मणिमंडित मौलियो को।
लेती सु आश्रय सदा तव पाद का है;
अन्यत्र ना सुमन वासव, ठीक भी है।।28।।

हे जिनेन्द्र ! नमस्कार करते समय देवों के मुकुटों में लगी हुई फूलों की मालायें जो आपके चरणों में गिर जाती है, मानों वे पुष्प-मालायें आपसे इतना अधिक प्रेम करती हैं कि उनके पीछे देवों के रत्नों से बने हुये मुकुटों को भी छोड़ देती हैं अथवा आपका समागम प्राप्त होने पर पुष्प यानि विद्वान् पुरुष किसी दूसरी जगह रमण नहीं करते हैं।।28।।

त्वं नाथ ! जन्मजलधेर्विपराङ्ग मुखोऽपि,
यत्तारयस्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान्।
युक्तं हि पार्थिवनृपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो ! यदसि कर्मविपाकशून्यः।।29।।

हे नाथ ! आप भववारिधि से सुदूर,
तो भी स्वसेवक जनाऽऽकर को तिराते।
है आपको उचित पार्थिव भूप-सा भी;
आश्चर्य कर्मफल शून्य तथापि आपि।।29।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे नाथ! जिस तरह घड़ा पानी में अधोमुख होकर अपनी पीठ पर स्थित लोगों को नदी-लाने आदि से पार करा देता है, उसी तरह आप यद्यपि राग न होने से संसार-समुद्र से पराङ्मुख रहते हैं, तथापि अपने अनुयायिओं को उससे पार लगा देते हैं-मोक्ष प्राप्त करा देते हैं। वह घड़ा अग्नि में पकाया हुआ हो तभी पानी में तैरकर दूसरों को पार करा सकता है अन्यथा कच्चा घड़ा तो पानी में गल कर घुल जाता है किन्तु आश्चर्य है कि आप पाकर हित/कर्मों के उदय से रहित होकर भी लोगों को पार करा रहे हैं।।29।।

विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गस्त्वं,
किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश!
अज्ञानवत्यपि सदैव कथञ्चिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतुः।।30।।

त्रैलोक्यनाथ जिन हैं ! धनहीन भी हैं !,
हैं आप अक्षर विभो ! लिपिहीन भी हैं।
ना आप में करण बोध शतांश में भी;
विज्ञान है विशद किन्तु जगत्प्रकाशी।।30।।

हे जनपालक! आप तीन लोक के स्वामी होकर भी दुर्गत यानि अत्यन्त कठिनाई से जाने जाते हैं तथा आप अक्षर प्रकृति अर्थात् अविनश्वर स्वभाव वाले होकर भी अलिपि यानि आकार रहित/निराकार हैं। अज्ञान युक्त होन पर भी (अज्ञानीजनों की रक्षा करने वाले होने से) आप में हमेशा केवल ज्ञान जगमगाता रहता है। इस श्लोक में विरोधाभास अलंकार का प्रयोग है।।30।।

प्राग्भारसम्भृतनभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छायापि तैस्तव न नाथ ! हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा।।31।।

धूली अहो कमठ ने नभ में उड़ा दी,
तो भी ढकी तव विभो ! उससे न छाया।
देखो ! जिनेश वह ही फलतः दुरात्मा;
धिक् धिक् महान दुःख को बहुकाल पाया।।31।।

हे नाथ! जो सूर्य पर/की ओर धूल फेंकता है, उससे सूर्य की कान्ति जरा भी नष्ट नहीं होती अपितु वही धूलि फेंकने वाले के ऊपर गिरती है। इस भांति कमठ ने आप पर क्रोध के कारणउपसर्ग किया किन्तु अंत में वही कर्मरज से आच्छादित हुआ।।31।।

यद्गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीम-
भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम्
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन ! दुस्तरवारिकृत्यम्।।32।।

भो ! दैत्य से कमठ से घनघोर वर्षा,
अश्राव्य गर्जनमयी तुमपें हुई भी।
पै आप पे असर तो उसका पड़ा ना;
पै दैत्य को नरक में रू पड़ा हि जाना।।32।।

हे जिनेश्वर / आप पर मूसलाधार पानी वर्षाकर क़मठ के जीव ने उपसर्ग किया था, उससे आपका क्या बिगड़ा? परंतु उसी ने अपने लिये दुष्ट तलवार का कार्य अर्थात् घाव कर लिया यानि ऐसे कर्मों का बंध कर लिया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो तलवार के समान दुःखदायी हुए थे।32।।

ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृताकृतिमर्त्यमुण्ड-
प्रालम्बभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रतिभवन्तमपीरितो यः
सोऽस्याऽभवत् प्रतिभवं भवदुःखहेतुः।33।।

धारे हुए सकल थे गलरुन्ड माला,
जो त्यागते अनल को मुख से निराला।
भेजा कुदैत्य तव पास पिशाच ऐसे;
पै दैत्य के हि दुखकारण हो गए वे।33।।

हे परमेश्वर / कमठ के जीव ने आपको तपस्या से विचलित करने के लिये जो पिशाचदौड़ाये थे, उनसे आपका कुछ भी बिगाड़ नही हुआ, परंतु उन पिशाच को ही भारी कर्मबन्ध हुआ, जिससे उसे अनेक भवों में दुःख उठाने पड़े।33।।

धन्यास्त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्य—
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्यकृत्याः।
भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः,
पादद्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाजः।34।।

वे जीव धन्य महि में त्रयलोकनाथ !,
प्रातः तथा च अपराह्न विभो ! सु सन्ध्या।
उत्साह से मुदित हो वर भक्ति साथ;
शास्त्रानुकूल तव पाद सु पूजते हैं।34।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे भुवनाधिप ! जो प्राणी अन्य कार्यों को छोड़कर तीनों कालों में विधिपूर्वक आपके चरणयुगल की आराधना करते हैं और भक्ति से प्रकट हुए रोमांचों से जिनके शरीर का प्रत्येक अवयव व्याप्त है, संसार में उनका जीवन सफल है, वे ही धन्य हैं।।34।।

अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति।।35।।

ना आप आज तक भी श्रुतिगम्य मेरे,
मानूँ मुनीश ! भववारिधि में हि ऐसा।
आ जाय मात्र सुनने तव नाम मन्त्र;
आता समीप फिर भी विपदा फणी क्या ?।।35।।

हे मुनीश ! मैं समझता हूं कि आप इस अपार संसार रूप समुद्र में कभी भी मेरे कानों की विषयता को प्राप्त नहीं हुए हो क्योंकि निश्चय से आपके नामरूपी मंत्र के सुने जाने पर विपत्तिरूपी नागिन क्या समीप आती ? अर्थात् कभी नहीं इससे विश्वास होता है कि मैंने आपका पवित्र नाम कभी नहीं सुना।।35।।

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव !
मन्ये मया महितमीहितदानदक्षम्।
तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम्।।36।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेरी न पादयुग पूजन पूर्व में की,
जो हैं यहां सुखद ईप्सित-वस्तु-दाता।
ऐसे विचार मम है फलतः मुनीश।;
देखा हुआ अब अनादर पात्र मैं हूं।36।।

हे मुनीन्द्र ! आज तक मैं जो तरह-तरह के तिरस्कारों का पात्र हो रहा हूं उससे स्पष्ट पता चलता है कि मैंने आपके चरणों की पूजा नहीं की क्योंकि आपके चरणों के पुजारियों का कभी किसी जगह भी तिरस्कार / पराभव नहींहोता।36।।

नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि
मर्माविधो विधुरयन्ति हि माम नर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते।37।।

मोहान्धकार सुतिरोहित लोचनों से,
देखा न पूर्व तुमको जिन ! एक बार।
ऐसा न हो यदि विभो ! मुझ को बता दो;
क्यों पाप कर्म दिन रैन मुझे सताते।37।।

हे विभो ! मैंने मिथ्यात्व के उदय से अंधे होकर कभी भी आपके दर्शन नहीं किये। यदि दर्शन किये होते तो आज ये दुःख मुझे दुःखी कैसे करते? क्योंकि आपके दर्शन करने वालों को कभी कोई भी अनर्थ दुःख नहीं पहुंचा सकते।37।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः।।38।।

देखे गये श्रवणगम्य हुवे व पूजे,
पै भक्ति से न चित में तुमको बिठाया।
हूँ दुःख भाजन हुवा फलतः जिनेश !
रे ! भावहीन करणी सुख को न देती।।38।।

हे जगद्बन्धो ! मैंने आपका नाम भी सुना, पूजा भी की और दर्शन भी किये, फिर भी वे दुःख मेरा पिण्ड नहीं छोड़ते, उसका कारण सिर्फ यही मालूम होता है कि मैंने भक्तिपूर्वक आपका ध्यान नहीं किया। केवल आडम्बर से ही उन कार्यों को किया है न कि भावपूर्वक भी। यदि भाव से करता तो कभी भी ये दुःख नहीं उठाने पड़ते।।38।।

त्वं नाथ ! दुःखिजनवत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्यपुण्यवसते ! वशिनां वरेण्य !
भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय,
दुःखाङ्कुरोद्दलनतत्परतां विधेहि।।39।।

संसार-त्रस्त-जन-वत्सल और शरण्य,
हे नाथ ! ईश्वर ! दया-वर-पुण्य-धाम !
हूँ भक्ति से नत, दया मुझ में दिखा के;
उद्युक्त हो दुरित अंकुर को जलाने।।39।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे नाथ! हे दुखियों पर प्रेम करने वाले ! हे शरणागत प्रतिपालक / हे दया की पवित्रभूमि ! हे जितेन्द्रियो में श्रेष्ठ और हे महेश्वर ! मैं आपकी भक्ति में तत्पर हूं आप मुझ पर दया करके मेरे दुःखाङ्कुरों को नाश करने में तत्परता / तल्लीनता कीजिये।139।।

निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्य—
मासाद्य सादितरिपुप्रथितावदानम्।
त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानवन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवनपावन !ह्य हतोऽमि।140।।

हैं आप जीत वसुकर्म सुकीर्तिधारी,
पा, पाद कंज युग को यदि आपके मैं।
स्वामी ! सुदूर निज चिंतन से रहूं तो;
हूं भाग्यहीन, व मरा, अयि तात ! वन्द्य।140।।

हे संसार को पवित्र करने वाले भगवान् ! हे असंख्यात श्रेष्ठ पदार्थरूपी घर की रक्षा करने वाले / शरणागत ! प्रतिपालक ! आपने अपने पराक्रम से कर्मशत्रुओं को नाश कर दिया है, आपके पवित्र चरण-कमलों को पाकर भी मैं उनके ध्यानकरने में अभागा / हतभाग हूं इसी कारण से मैं नष्ट हुआ जा रहा हूं यानि मुझे कर्मशत्रु दुःख दे रहे हैं।140।।

देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताखिलवस्तुसार !
संसारतारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ!
त्रायस्व देव ! करुणाहृद ! मां पुनीहि
सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशेः।141।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री पार्श्वनाथ ! भवतारक ! लोकनाथ !
सर्वज्ञदेव ! व विभो ! सुरनाथ वन्द्य !
रक्षा अहो ! मम करो, करुणासमुद्र,
संसारत्रस्त मुझको, उस छोर भेजो।।41।।

हे इन्द्रों से वन्दनीय ! हे सब पदार्थों के रहस्य को जानने वाले ! हे संसार-समुद्र से तारने वाले ! हे प्रभो ! हे तीन लोक के स्वामिन् ! हे दया के सरोवर ! हे देव ! आप मुझे इस भयंकर दुःखों के समुद्र से बचाइये तथा हमेशा के लिए पवित्र कीजिये अर्थात् कर्म-मैल से रहित कर दीजिये।।41।।

यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रिसरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्ततसञ्चितायाः।
तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य ! भूयाः
स्वामी ! त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि।।42।।

पादारविन्द युग-भक्ति-सुपाक, कोई,
है तो यहां तव विभो भववार्धिपोत !
मेरे लिये इह तथा परजन्म में भी;
हैं आप ही व शरणागत पाल स्वामी।।42।।

हे शरण्य मैं आपकी स्तुति कर किसी भी अन्य फल की चाह नहीं रखता। सिर्फ यही चाहता हूं कि आप सदैव मेरे स्वामी रहे अर्थात् जब तक मुझे मोक्ष प्राप्त न हा जावे तब तक भव-भव में मेरे स्वामी रहें। "तुम होहु भव-भव स्वामि मेरे मैं सदा सेवक रहूं।।42।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः।
त्वद्बिम्बनिर्मलमुखाम्बुजबद्धलक्ष्याः,
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः।।43।।

रोमाचितंगयुत जो जब भव्य जीव,
एकाग्र हो तव मुखांबुज में अली से।
हैं स्त्रोत की सुरचना करते यहां पे;
ऐसे यथाविधि जिनेन्द्र ! विभो ! शरण्य।।43।।

हे जिनेन्द्र ! आपके निर्मल मुख कमल को लख करके तथा सावधान बुद्धि से युक्त होकर जब भव्यजन आपकी आराधना करते हैं तब उनके शरीर के समस्त अवयव भक्तिवशात् रोमांचित हो उठते हैं और वे आपका विधिपूर्वक विभिन्न तरीकों से स्तवन करते हैं।43।।

जननयनकुमुदचन्द्र ! प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा।
ते विगलितमलनिचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते।।44
।।इति कल्याणमन्दिरस्तोत्रम्।।

(आर्या-छन्द)

जननयन कुमुदचन्द्र !, परमस्वर्गीय भोग को भोग।
वे वसुकर्म नाशकार, पाते शीघ्र मोक्ष को लोग।।44।।

हे प्राणियों के नेत्ररूपी कुमुद-कमलों को विकसित करने के लिये चन्द्रमा की तरह शोभायमान देव ! जो भक्ति से गद्गद् चित्त हो आपकी स्तुति करते हैं, वे स्वर्गीय सुख भोगकर बहुत ही शीघ्र अष्ट कर्मों के बंधन को नष्ट करके मोक्ष सुख को प्राप्त कर लेते हैं।।44।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इति श्रीकुमुदचन्द्राचार्य अपरनाम श्रीसिद्धसेनदिवाकरेण प्रणीतं कल्याण-मंदिरस्तोत्रं-श्रीपार्श्वनाथस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

1 – कवि ने श्लेष से कुमुदचन्द्र' यह अपना नाम भी सूचित कर दिया है। कवि का दूसरा नाम 'सिद्धसेन दिवाकर' भी था।

"रक्षा कीजिए - दिगम्बरत्व की - संस्कृति की"

सत्य संस्कृति की प्रतिष्ठापना हेतु, वर्षों से चल रहा सफल आन्दोलन एवं मंजिल की देहलीज पर लड़खड़ाते कदम रखने जा रहा है। किन्तु अब आपको अपना सहयोग देकर दिगम्बरत्व की रक्षा हेतु, बल प्रदान कर संस्कृति को बचाये रखना है

"ये ऐसे संत जिन्हें नमते, उर का क्रन्दन खो जाता है। जिनके चरणों में अंगारा, आकर चंदन हो जाता है। चेतना इतनी जग जाती, तन ये तन्मय हो जाता है। इनका वन्दन करते करते, खुद का वन्दन हो जाता है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मंगलाष्टक

(शार्दूलविक्रीड़ित)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम।1।।

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योत - रत्नप्रभा,
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पंचगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्।2।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम्।3।।

नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु प्रतिविष्णु-लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्येप्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।4।।

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगतो पंच ये,
ये चाष्टांग महानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणाः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचज्ञानधरास्त्रयोऽपिबलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम।।5।।

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।6।।

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रौप्याद्रिषु
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।7।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवता जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पंच सततं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।8।।

"बदले का भाव वह राहु है
जिसके
सुदीर्घ विकराल गाल में
छोटा सा कवल बन
चेतन रुप भास्वत भानु भी
अपने अस्तित्व को खो देता है।"

मूक माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महावीराष्टक स्तोत्रम्

शिखरिणी छन्द

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः।
समं भान्ति ध्रौव्यव्यय जनिलसंतोऽन्त रहिताः ।।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।1।।

शब्दार्थः (यदीये चैतन्ये) जिनके चेतन में (मुकुर इव) दर्पण के समान (अन्त रहिताः) अनंत (चिदचितः भावाः) चेतन अचेतन पदार्थ (समं) एक साथ (ध्रौव्य व्यय जनि लसन्तः) ध्रुवता, विनाश, उत्पत्ति से शोभायमान होते हुए (भांति) झलकते है। (जगत्साक्षी) संसार का प्रत्यक्ष करने वाले (मार्ग प्रकटन परः) श्रेष्ठ मार्ग को प्रकाशित करने में (भानुरिव) सूर्य के समान (मे) मेरे (नः) हमारे (नयन पथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहे।

अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्द रहितं।
जनांन्कोपापाय प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला।
महावीरस्वामी नयन पथगामी भवतु मे (नः)।।2।।

शब्दार्थ : (यत्) जिनके (अताम्रं) ललाई से रहित (स्पन्द रहितं) टिमकार से रहित (चक्षुः कमलयुगलं) दोनों नेत्र कमल (वाभ्यन्तरमपि, अंतरंग में भी (कोप) कोध के (अपाय) अभाव को (जनान्) प्राणियों को (प्रकटयति) प्रकट कर रहे है। (यस्य मूर्तिः) जिनकी मूर्ति (प्रशमितमयी)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रशांत रस से युक्त (वा) और (अतिविमला) अत्यंत निर्मल (स्फुटं) प्रकट है। ऐसे (महावीरस्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयन पथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहें।

नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि भाजालजटिलं।
लसत्पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृतां।
भवज्जवाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।3।।

शब्दार्थ : (नमन्) नमस्कार करते हुए (नाक इन्द्र आली) स्वर्ग के इन्द्रों के (मुकुटमणि) मुकुटों की मणियों के (भाजाल जटिलं) प्रकाश के समूह से धनीभूत (यदीयं) जिनके (पादाम्भोज) चरण कमल (लसत्) शोभायमान है (वा) अथवा (स्मृतं अपि) जिनका स्मरण। मात्र भी (तनुभृताम्) प्राणियों के (भव ज्वालां) संसार रूपी ज्वाला को (शान्त्यै) शांत करने के लिए (जलं) जल सदृश्य (प्रभवति) होता है। ऐसे (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे नयनपथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहे।

यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह।
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्ध : सुखनिधिः।।
लभंते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमुतदा।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे(नः)।।4।।

शब्दार्थ : (यद्) जिनकी (यदर्चा भावेन) पूजा करने के भावों से (प्रमुदितमना) आनंदित भाव वाला (दर्दुर) मेढक (क्षणात्) क्षणभर में ही (स्वर्गी) स्वर्ग में देव (आसीत्) हुआ (गुणगण समृद्धिः) जो गुणों के समूह से वृद्धि को प्राप्त है वे (शिवसुख समाजं) मोक्ष की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निधि को (लभन्ते) पाते है। (किमु) इसमें क्या आश्चर्य है, ऐसे (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयन पथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहें।

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत तनुर्ज्ञान निवहो।
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः।।
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर्।।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।5।।

शब्दार्थ : (कनत्स्वर्णाभासः) चमकते हुए स्वर्ण के समान कांतिमान होने पर (अपि) भी (अपगततनुः) शरीर से रहित (ज्ञाननिवहो) ज्ञानादि गुणों के समूह से (विचित्र) अनेक रूप होने पर (अपि) भी (आत्माएकः) द्रव्य की अपेक्षा एक है (नृपतिवरसिद्धार्थतनयः) राजा सिद्धार्थ के पुत्र होने पर भी (अजन्मा) जन्म रहित हैं (विगत भव रागोद्भुतगतिः) राग से रहित विगत भव स्वरूप अद्भूत गति है जिनकी, ऐसे (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयन पथ गामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहें।

यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला।
वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।।
इदानीमप्येषा वुधजनमरालैः परिचिता।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।6।।

शब्दार्थ : (यदीया) जिनकी,(विविधनय-कल्लोल-विमला) उनके नय रूपी तरंगों से निर्मल, दिव्य ध्वनि रूपी गंगा (वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति) विशिष्ट ज्ञान रूपी जल के द्वारा (जगति) जगत में (जनतां) प्राणियों को (स्नपयति) स्नान करा रही है। (इदानी-अपि) अभी भी, (बुध-जन-मरालैः)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्ञानी जन रूपी हंसों के द्वारा (परिचिता) जानी जाती है, ऐसे (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयनपथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहे।

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः।
कुमारावस्थायामपि निजबलाद् येन विजितः।
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः
महावीरस्वामी नयन पथगामी भवतु मे (नः) ।।7।।

शब्दार्थ : (अनिर्वारोद्रेक) जिसके मद को दूर करना अत्यन्त कठिन है। ऐसे (त्रिभुवन जयी) तीन लोक को जीतने वाले, (काम सुभटः) काम रूपी योद्धा का, (येन) जिन महावीर स्वामी के द्वारा (निजबलाद्) आत्म बल से (कुमारावस्थायांअपि) यौवन अवस्था में ही (विजितः) जीत लिया गया है। (स्फुरन्) स्फुरायमान होते हुए (नित्यानन्द) शाश्वत या आनंद और (प्रशमपद) प्रशांत पद (राज्याय) राज्य की प्राप्ति के लिए (स जिनः) वे जिनेंद्र, (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयन पथगामी) दृष्टि के सामने (भवतु) रहें।

महामोहातंकप्रशमनपरा – कंस्मिकभिषङ्।
निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मंगलकरः।।
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।8।।

शब्दार्थ : (महामोहातंक) जो मोह रूपी रोग को, (प्रशमनपर) शमन करने में तत्पर, (आकस्मिक भिषक्) आकस्मिक वैद्य हैं, (निरापेक्षो बन्धुः) अपेक्षा रहित बन्धु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है, (विदित महिमा) जिनकी महिमा प्रकट है, (मंगल करः) जो मंगल करने वाले है, (भवभयभृतां साधूनां) संसार के भय से भयभीत साधुओं को (शरण्यः) शरण स्वरूप (उत्तमगुणाः) ऐसे उत्कृष्ट गुणों से सम्पन्न (महावीर स्वामी) महावीर प्रभु (मे) मेरे (नयन पथगामी) दृष्टिके सामने (भवतु) रहें।

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम् ।।9।।

शब्दार्थ : (महावीराष्टं) महावीर स्वामी का आठ श्लोक वाला स्तोत्र (भक्त्या) भक्ति से (भागेन्दुना) भागचंद कवि के द्वारा (कृत) रचा गया, (यः) जो (पठेत् पढता है (च) और (श्रृणु याच्चापि) सुनता भी है (स) वह (परमांगति) परमगति को (याति) प्राप्त करता है।

शारदानुतिरियम्

(द्रुतविलम्बित छन्द)

आचार्य विद्यासागर जी कृत

जिनवरा-नन-नीरज-निर्गते!
गणधरैः पुनरादर-संश्रिते!
सकल-सत्व-हिताय वितानिते!
तदनु तेरिति हे! किल शारदे!।।1।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सकल-मानव-मोदविधायिनि!
मधुर-भाषिणि! सुन्दररूपिणि!
गतमले! द्वयलोक-सुधारिणि!
मम मुखे वस पापविदारिणि!।।12।।

असि सदा हि विषक्षयकारिणि!
भुवि कृदृष्ट्य हयेऽतिविरागिनि!
कुरु कुपां करुणे करवल्लकी
मयि विभो पदपंकज-षट्पदे!।।13।।

उपलजो निज-भाव-महो यदा
सुरस-योगत आशु विहाय सः।
कनक-भाव-मुपैति समेमि किं
न शुचि-भाव-महं तव योगतः।।14।।

जगति भारति! तेऽक्षि-युगं खलु
नय मिषेण कुमार्ग-रता-गमम्।
नयति हास्यपदं न तदास्मय-
मयि! वचोऽमृत-पूर्ण-सरोवरे!।।15।।

वृषजलेन वरेण वृषापगे!
शमय तापमहो! मम दुस्सहम्।
सुख-मुपैमि निजीय-मपूर्वकं
द्रुतमहं लघुधी-रथ येन हि।।16।।

शिरसि तेन हि कृष्णतमाःकचा-
स्त्वयि न ते निलयं परिगम्य वै।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परम-तामसका बहिरागता
इति सरस्वति! हे! किल मे वचः।।7।।

विगत-कल्मष-भाव-निकेतने!
तव कृता वर-भक्ति-रियं सदा।
विभवदा शिवदा पविभूयता-
मिति ममास्ति शिशोशुभकामना।।8।।

शशिकलेव सितासि विनिर्मले!
विकच-कंज-जय-क्षय-लोचने!
यदि न, मानवकोऽतिसुखायते
त्वदवलोकन-मात्र-तया कथम्।।9।।

शशिकला वदनप्रभया जिता,
नयन-हारितया तव शारदे!
सपदि वै गतमान-तयेति सा
नखमिषेण तवांघ्रियुगंश्रिता।।10।।

श्रुतियुगं तव मान-मिषेण वै,
वितथ-मान-मतं परिदूष्य च।
जिनमते गदितं यतिभिः परै-
र्यदिति सूचयतीह वरं हि तत्।।11।।

इह सदाऽऽस्वनितं शुभकर्मणि,
भवतु मे चरणं च सुवर्त्मनि।
जगति वंद्यत एव सरस्वती,
तनुधिया सदया ह्यथ या मया।।12।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पञ्च गुरु भक्ति

मणुयणाइंद सुर धरिय छत्तत्तया पंचकल्लाण सोक्खावली पत्तया दसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ।।1।।

अर्थः- राजा, नागेन्द्र और सुरेन्द्र जिन पर तीन छत्र धारण कराते है तथा जो पंचकल्याणकों के सुख समूह को प्राप्त हैं वे जिनेन्द्र हमारे लिए उत्कृष्ट मंगलस्वरूप अनंतदर्शन, अनंतज्ञान अनंत बल और उत्कृष्टध्यान को देवें।

जेहिं झाणग्गि बाणेहिं अइ थड्ढय जम्म जर मरण-णयर-स्तयं दड्ढयं। जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं।।2।।

अर्थः- जिन्होंने ध्यान रूपी अग्नि वाणों से सुन्दर जन्म, जरा और मरण रूपी तीन नगरों का जला डाला तथा जिन्होंने शाश्वत मोक्षस्थान प्राप्तकर लिया, वे सिद्ध भगवान मुझे उत्तम ज्ञान प्रदान करें।

पंच-आचार-पंचग्गि संसाहया, बारसंगाइ-सुअ-जलहि अवगाहया। मोक्ख-लच्छी महंती महंते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खं - गया - संगया।।3।।

अर्थः- जो पांच आचार रूपी पांच अग्नियों का साधन करते हैं, द्वादशांगरूपी समुद्र में अवगाहन करते है तथा जो आशाओं से रहित मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। ऐसे आचार्य परमेष्ठी मेरे लिये सदा महती मोक्षरूपी लक्ष्मी को प्रदान करें।

घोर संसार भीमाडवी - काणणे, तिक्ख वियराल णह पाव - पंचाणणे। णट्ठ मग्गाण जीवाण पहदेसिया, वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया।।4।।

अर्थः- जिसमें तीक्ष्ण विकराल नख और पैर वाले पापरूपी सिंह विद्यमान है, ऐसे भयंकर संसार रूपी बीहड़ वन में मार्ग भूले हुए जीवों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को मार्ग दिखाते है, उन उपाध्याय परमेष्ठी की हम सदा वंदना करते है।

उग्ग तव चरण करणेहिं झीणं गया, धम्म वर झाण सुक्केक्क झाणं गया।
णिब्भरं तव सिरी ए समा लिंगया, साहवो ते महा-मोक्ख पहु मग्गया ।।5।।

अर्थः- उग्र तपश्चरण करने से जिनका शरीर क्षीण हो गया है। जो उत्तम धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान को प्राप्त है तथा तप रूपी लक्ष्मी के द्वारा जो अत्यन्त आलिङ्गित हैं, वे साधु परमेष्ठी मुझे मोक्षमार्ग के दर्शक हों।

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए, गुरुय संसार घणवेल्लि सो छिंदए
लहइसोसिद्धि सोक्खाइं बहुमाणणं, कुणइ कम्मिंधणंपुंज पज्जालणं।

अर्थः-जो इस स्तोत्र के द्वारा पंचगुरूओं पंच परमेष्ठियों की वन्दना करता है, वह अनंत संसार रूपी सघन बेल को काट डालता है, उत्तम जनों के द्वारा मान्य मोक्ष के सुखों को प्राप्त होता है तथा कर्मरूपी ईधन के समूह को जला डालता है।

अरुहा सिद्धाइरिया, उवज्झाया साहु पंच परमेट्ठी
एदे पंच णमोयारा, भवे भवे मम सुहं दिंतु।

अर्थः- अर्हन्त, सिद्ध आचार्य उपाध्याय और साधु ये पॉच परमेष्ठी है। इनके लिए किये गये नमस्कार मुझे भव भव में सुख देंवे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्म कोई जबरदस्ती का सौदा नहीं है, जबरदस्ती ग्रहण किया गया धर्म अंदर तक नहीं पहुँच पाता। जैसे माँ बच्चे को जबरदस्ती दूध नहीं पिला सकती, अगर पिला भी दे तो उसे लाभ के स्थान पर हानि ही होगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 2

काव्य सौरभ

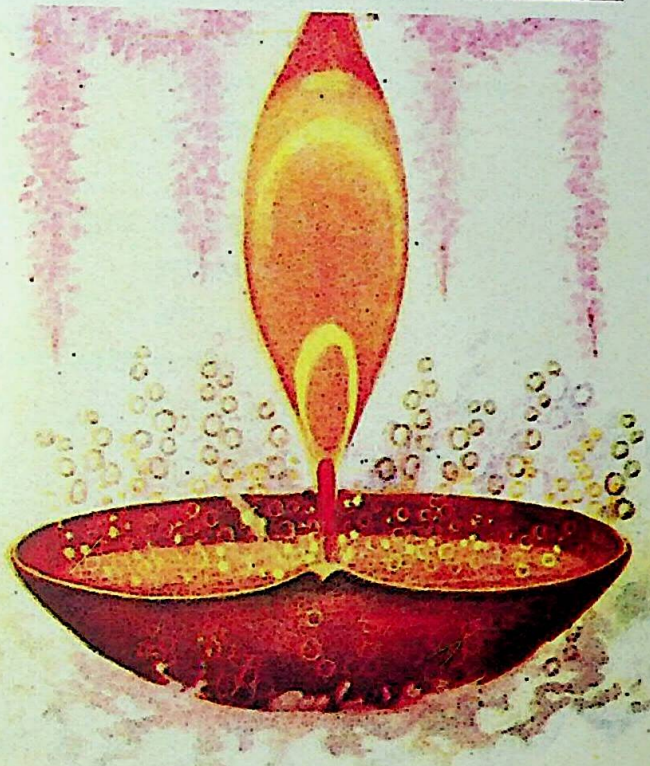

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समर्पण द्वार पर-

आचार्य श्री

दिगम्बरी दीक्षा
पश्चात्
पावन वेला में
परम पावन /तरण तारण
गुरु चरण सान्निध्य में
ग्रन्थराज समय सार का
चिन्तन, मनन, अध्ययन
यथाविधि प्रारम्भ हुआ
अहा!.....
यह भी गुरु की गरिमा
महिमा/अस्तिमा
कि.....
कन्नड़ भाषा भाषी
मुझे..... ....उठता हुआ
अत्यन्त सरल/श्रुति-मधुर
भाषा शैली में
समय सार के हृदय को
खोज-खोज कर
बार बार दिखाया
प्रति गाथा में
अमृत ही अमृत भरा है
और
मैं पीता ही गया
पीता ही गया
माँ के समान गुरुवर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपने अनुभव और मिलाकर
घोल-घोल कर
पिलाते ही गये
पिलाते ही गये
मुझे!
शिशु बाल मुनि को!
उपलब्धि हुई
अपूर्व विभूति की
आत्मानुभूति की
और समयसार
ग्रन्थ भी
....ग्रन्थ/परिग्रह
प्रतीत हो रहा है
पीयूष भरी गाथायें रसास्वादन में
डूब जाता हूं
अनुभव करता हूं
कि.....
ऊपर उठता हुआ
..... ऊपर उठता हुआ.....
उर्ध्वगमन होता उठता हुआ
सिद्धालय को
पार कर गया हूं.....
सीमोल्लंघन कर गया हूँ.....
अविद्या कहाँ.....?
कब?
सरपट चली गई
पता नहीं रहा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आश्चर्य यह है कि
जिस विद्या की चिरकालीन
प्रतीक्षा थी.....
उस विद्यासागर के भी पार.....
बहुत दूर .....दूरातिदूर.....
पहुंच गया हूँ
अविद्या/ विद्या से परे
ध्येय/ज्ञानज्ञेय से परे
भेदाभेद/खेदाखेद से परे
उसका साक्षी बनकर

नर्मदा का नरम कङ्कर

आचार्य श्री

युगों युगों से
जीवन विनाशक सामग्री से
संघर्ष करता हुआ
अपने में निहित
विकास की पूर्ण क्षमता संजोये
अनन्त गुणों का
संरक्षण करता हुआ
आया हूँ
किन्तु आज तक
अशुद्धता का विनाश
ह्रास
शुद्धता का विकास
प्रकाश
केवल अनुमान का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय रहा .....विश्वास
विचार साकार कहाँ हुए?
बस!..... अब निवेदन है
कि
या तो इस कंकर को
फोड़ फोड़ कर
पल भर में
कण - कण कर
शून्य में
उछल
समाप्त कर दो
अन्यथा-इसे
सुन्दर सुडौल
शङ्कर का रूप प्रदान कर
अविलम्ब .....इसमें
अनन्त गुणों की
प्राण प्रतिष्ठा
.....कर दो
हृदय में अपूर्व निष्ठा लिए
यह किन्नर
अकिञ्चन किङ्कर किंकर
नर्मदा का नरम कंकर
चरणों में
उपस्थित हुआ हैं
हे विश्व व्याधि के प्रलयंकर!
तीर्थङ्कर!
शङ्कर शंकर!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनमाना मन

आचार्य श्री

माना
मानता नहीं मन
मनाने पर भी
मनमाना
करता है माँग
मना करने पर भी
फिर भी
विषयों की ओर !
बार-बार
गतिमान/धावमान
स्वयं बना है
नादान
हिताहित के विषय में
स्व-पर बोध
नहीं रखता
. . . अनजान!
इसकी इस
स्वच्छन्दता
उच्छृंखलता
देख जान
होंगे आप
पीड़ित परेशान
और इसे
नियन्त्रित सेवक बनाने
अथवा पूर्ण मिटाने
षड्यन्त्र की योजना में
इसी की सहायता से
होंगे सतत
प्रयत्नवान
फिर भी आप
जानते मानते
अपने आप को
धीमान सुजान !
इससे मैं
विरिमतवान् !
मन को मत छेड़ो
बिना मतलब
उसे
मत मारो, छोड़ो
संभालो सुधारो
दया द्रवीभूत
कण्ठ से
विनय भरे
हित-मित-मिष्ट
वचनों से
वह नादान
नादानी तज
बने मतिमान्
सही सही समितिमान
मोक्ष पथ का पथिक
गतिमान और प्रगतिमान
"बिना मन
चढ़ नहीं सकता
मोक्ष महल का
वह सोपान
यह अनुमान !"
'बिना मन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हो नहीं सकता
मोक्ष महल का
आविर्माण
नव निर्माण !
तनिक हो सावधान
उस ओर दो
तनिक ध्यान कि
मन का मत करो
उतना शोषण !
मत करो मन का
उतना पोषण !
पोषण से
प्रमाद पवमान
अप्रमादवान
प्रवहमान
तब बुझता है आत्मा का
शिव पथ सहायक
वह रोशन !
मन का षोषण
उल्टा तनाव
उत्पन्न करता है
तनाव का प्रभाव
उदित हो निश्चित
विभाव/विकार भाव
फलतः
जीवन प्रवाह . . .
विपरीत दिशा की ओर . . .
होता प्रवाहित
भरता-आह..... . !
श्राव्य/श्रुति मधुर
स्वर लहरी

जय ध्वनियाँ
सुनना है यदि
वीणा का तार
इतना मत कसो
कि
टूट जाय . .
संगीत सम्वेदना की धार
छूट जाए . . .
और !
इतना ढीला भी नहीं
कि
अनपेक्षित रस विहीन
स्वर लयोंका झरना
फूट जाये . . .
माना
मन करता
अभिमान
चाहता है गुरुवों से भी
उच्च उत्तुंग स्थान
चाहता अपना
सम्मान/मान
सदा सर्वथा
तीन लोक से
पद-प्रणाम
पूजा नाम
तथापि उसे समझना है
स्वभाव की ओर लाना है
क्योंकि उसे
अज्ञात है
गुण-गण-खान
अव्यय द्रव्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भव्य-दिव्य . . .
ज्ञात है केवल
पर-प्रभावित
वह पर्याय
उसमें जागृत हो
स्वाभिमान
तभी बनेगा
वही बनेगा
निरभिमान
मानापमान
समझ समान
फिर . .
. . . फिर क्या !

आरूढ हो ध्यान यान
पल भर में
प्रयाण . . .
जिस ओर ओ . . .
. . . है निज धाम
. . . है निर्वाण . . . !
वही मन
भावित मन
करे स्वीकार
मेरेइन
शत शत प्रणाम !
शत शत नमन !

चित-कबरा

प्रकृति के प्यार ने
रंगीन राग ने
अरूपी पुरुष को
चिदम्बर को
न केवल . . .
. . . पापी पाखण्डी . . .
और रूपी बनाया है
परन्तु
पुरुष की परख करना भी
कठिन हो गया है आज !
बहुरूपी बनाया है
चितकबरा
बेशक ! . . . .

स्वयं वरण

आचार्य श्री

तू तो अपना ही गीत
गुन गुनाता रहता है
रे ! स्वैर बिहारी मन
जरा सुन . . .।
संयम का बन्धन
बन्धन नहीं है
वरण . . . . .।
अबन्ध दशा का
अभिनन्दन-वन्दन है
अन्यथा
मुक्ति रमा वह
मोहित सम्मोहित हो
उपेक्षित कर इतरों को
संयत को ही
क्यों करती है
स्वयं वरण . . . .

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम कैसे पागल हो हे ! आत्मन्

आचार्य श्री

रेत-रेतिल से नहीं
रे ! तिल से
तेल निकल सकता है
निकलता ही है
विधिवत् निकालने से
नीर-मन्थन से नहीं
विनीत-नवनीत
क्षीर मन्थन से
निकल सकता है
निकलता ही है
विधिवत् निकालने से
ये सब नीतियाँ
सब को ज्ञात हैं
किन्तु हित क्या है?
अहित क्या है?
हित किस में निहित है
कहाँ ज्ञात है? किसे ज्ञात है?
मानों ज्ञात भी हो तुम्हें
शाब्दिक मात्र . . .।
अन्यथा
अहित पन्थ के पथिक
कैसे बने हो तुम!
निज को तज
जड़ का मन्थन करते हो
तुम कैसे पागल हो?
तुम कैसे पागल हो।

अपने सहज शुद्ध
अनंत धर्मों
गुणों के
यथार्थ बोध से
वंचित हो
युगों युगों से
बिना सुख शांति आनंद
व्यतीत किया है
. . . अनन्त काल !
यह संसार सकल
त्रस्त है
पीड़ित है
आकुल-विकल
. . . कारण
और है इसमें
हृदय से कहां हटाया
विषय राग को
हृदय में कहाँ बिठाया
. . . वीतराग को
जो है
संसार भर में केवल
परम-शरण . . .
. . . तारण-तरण !

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कदम फूल कदम शूल

आचार्य श्री

इस युग में भी
सत् युग सा
सुधार तो हुआ है
पर लगता है
उधार हुआ है
अन्यथा
कभी का हुआ होता
उद्धार . . .।
प्रभु के कदमों पर
चलने वाले कदम कम नहीं हैं
उन कदमों में
मखमल मुलायम
अच्छी अहिंसा पलती है
साथ ही साथ
उन कलमों में
हिंसा की दुगुणी ज्वाला जलती है
इय सुग में भी
सत् युग सा
सुधार तो हुआ है
पर लगता है
उधार हुआ है

होले-होले

यह यथार्थ नहीं है
इसलिए परमार्थ भी नहीं है
आर्त है केवल
पर का आलम्बन
पर का सम्बल !
ऐसी स्थिति में
कैसा उपलब्ध हो
स्वार्थ . . . !
यही एक परिणाम हुआ
कि
शिर पर ले अघ मटका
भव वन में मन भटका
चहुँ गतियों में अटका
मिला नहीं सुख घटका
कब तक तू जीयेगा
कब तक ना पीयेगा
पीयूष पी बन . . .
. . . . . संजीवन
जीना क्या? ना चाहेगा
. . . चिर जीवन
कब तक पथ में
विष घोलेगा
कब तक चंचल डोलेगा
जहाँ खड़ी है शाम
वहीं खड़े निजशाम !
विगत काम . . .
. . . घनश्याम।
कब तो इन पर
दृग खोलेगा?
कब इन से सरस बोले वे
. . . बोलेगा ?
उनकी दृष्टि तुला पर
अपनी समग्र सत्ता
. . . कब तोलेगा
कब तो उन के . . .
पीछे-पीछे
होले होले
होलेगा!! होलेगा!! होलेगा!!
होलेगा तो निश्चित है यह
अपना मल सब
धो लेगा!धो लेगा!!धो लेगा!!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोर की ओर

आचार्य श्री

कब से आ रहा हूँ
अपार सागर में
तैरता-तैरता
आथ भर आये है
श्लथ !
नैर्बल्य की अनुभूति
अब और नहीं . . .
. . . . छोर मले ! ! !
चारों ओर . . . . .
. . . . . भ्रमर तिमिर
फैला हे
फैलता जा रहा है
चरण चल रहे
साथ आस्था है
साफ रास्ता है
पर !
धृति कहती है
अब घोर नहीं
. . . . . भोर मिले ! ! !

पूर्णकाम

मुनि श्री क्षमासागर जी

अपने मरने का
जिन्हे डर है
वे डरें
और रखें
बचने के लिए
अस्त्र शस्त्र
जो कुरूप है
वे पहनें आभूषण
ओढ़ा करें वस्त्र
पर तुम तो
सर्वांग सुन्दर हो
इसीलिए दिगम्बर हो
अस्त्र - आयुध से
तुम्हें क्या काम?
तुम अपने में हो
और हो - पूर्णकाम !

सोच

एक वे हैं
जो ये सोचकर
जी रहे हैं
कि एक दिन
मरने का तय है
तो आज अभी
ठाठ से जिओ
एक तुम हो
जो ये सोचकर
मर रहे हो
कि आज अभी
यदि मौत आयी है
तो शान से मरो
ये तो हम है
जो इस सोच में
न जी पा रहे हैं
न मर पा रहे हैं
कि तुम क्यो
शान से मर रहे हो
कि वे क्यों
ठाठ से जी रहे हैं?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंतर ना सही

मुनि श्री क्षमासागर जी

ये मंदिर
इसलिए कि हम
आ सकें
बाहर से
अपने में भीतर!
ये मूर्तियाँ
अनुपम सुन्दर
इसलिए कि हम
पा सकें
कोई रुप
अपने में अनुत्तर
और
श्रृद्धा से झुककर
गलाते जाएँ
अपना मान मद
पर्त-दर पर्त निरन्तर
ताकि
कम होता जाए
हमारे
और प्रभु के
बीच का अंतर!

माना कि हममें
भगवान बनने की
योग्यता है
पर इस बात पर
हम इतना
अकड़ते क्यों है?
(वह तो किसी)
चीटीं में भी है
सवाल सिर्फ
योग्यता का नहीं
हू-ब-हू होने का है
स्वयं को
भगवान मानने / मनवाने
का नहीं
स्वयं भगवान
बन जाने का है
हम अपने को
जरा ऊँचा उठायें
इस बार
ना सही भगवान
एक बेहतर/
इन्सान बन जाएँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काँधे

मुनि जी क्षमासागर जी

मुझे मौत में
जीवन के
फूल चुनना है
अभी मुरझना
टूट कर गिरना
और अभी
खिल जाना है
कल यहाँ
आया था
कौन ? कितना रहा
इससे क्या?
मुझे आज
लौट जाना है
मेरे जाने के बाद
लोग आयें
अर्थी संभालें
काँधें बदलें
इससे पहले
मुझे खुद संभलना
और बदल जाना है
मेरे जाने के बाद
लोग आयें
मेरी जली देह की
राख उठायें
या कहीं सिरायें
इससे पहले
मुझे अपने
अंहकार को जलाना
अपने को अपने में
सिराना - डुबोना है
और
और ऊँचे उठना है
मौत आये
और जाने कब आये
अभी तो मुझे
रोज - रोज जीना
और रोज - रोज मरना है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लिबास

(मुनि क्षमा सागर जी)

मौत
जिन्दगी का लिबास
ओढ़ कर आती है।
जिन्दगी-भर
लिबास दिखता है
मौत
कहाँ दीख पाती है?

खिड़की

(मुनि क्षमा सागर जी)

संबन्धों के बीच
पहले
एक दीवार
हम खुद
खड़ी करते हैं
फिर उसमें
एक खिड़की
और लगाते हैं
पर जिन्दगी-भर
करीब रह कर भी
हम खुल कर
कहाँ मिल पाते हैं?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वह मैं

(मुनि क्षमा सागर जी)

मैंने पर्वत लाँघे
नदियाँ पार की
कई रास्ते
चल कर तय किये
आकाश की
ऊँचाई
सागर की
गहराई नापी
दुनिया को देखा
लोगों को परखा है
पर फिर भी
लगता है
कुछ अनछुआ
अनदेखा है
कुछ अलंघ्य
अनलेखा है
और शायद
वह मैं ही हूँ।

अकेले

(मुनि क्षमा सागर जी)

जिन्दगी
जाने को थी
हमने
मौत को
बुला लिया
क्या करें
हमसे
अकेले
रहा नहीं गया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसने कहा

(मुनि क्षमा सागर जी)

मौत ने आकर
उससे पूछा-
मेरे आने से पहले
वह-
क्या करता रहता।
उसने कहा-
आपके स्वागत में
पूरे होश
और जोश में
जीता रहा।
सुना है
मौत ने
उसे प्रणाम किया
और कहा -
अच्छा जियो
अलविदा।

अतृप्त

(मुनि क्षमा सागर जी)

कामनाओं- का- कलश
ऊपर से
सोने-सा
दमकता है
सुराख
उसमें कहीं नीचे
पैंदी में होता है
कोई इसे
कितना भी भरे
वह सदा
अतृप्त रहता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अगर

(मुनि क्षमा सागर जी)

उसने सोचा
जब वह पहली बार
नीड़ से बाहर
पैर रखेगा
तब कोई आ कर
उसे थाम लेगा
आँचल से लगा कर
दुलार लेगा
पंख सहला कर
उसे उड़ने का साहस देगा
दो-चार कदम
उसके साथ चलेगा
पर हुआ यह
कि उसने
न पैर बाहर रखा
न पंख खोले
न उड़ा
सोचता ही रहा
अगर ऐसा न हुआ
तो क्या होगा ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लौटकर लौट आया हूँ

(मुनि सुधा सागर जी)

मुसीबत को झेलता हूँ
झेलता आया हूँ मैं
झेल रहा हूँ / झेलूंगा
क्योंकि.....
मैं बटोही
राह के हर अनुभव से गुजरना चाहता हूँ
मंजिल को पाने के....
नये नये ठौर तरीके
सीखना चाहता हूँ मैं
कि न जाने कब कौन
दुश्मन--
पथ में आकर विषकंटक बोदे--
पर भूल जाते हैं
वो विचारे विषकंटक बोने वाले
अरे / फुलझड़ी की
आग से डराते हो मुझे
ध्यान रहें-
ज्वालामुखी की आग में से भी लौटकर
लौट आया हूँ मैं-

जीवन का "आस्था से वास्ता होने पर
रास्ता स्वयं शास्ता होकर
सम्बोधित करता साधक को
साथी बन साथ देता है।" मूक माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कब खफाँ हो, दफा हो जाये!!!

(मुनि सुधा सागर जी)

इन छैल, छबीली श्वाँसों का
क्या भरोसा .....।
कब किस मोड़ पर
खफाँ हो, दफा हो जाये
दफन का कफन देकर
और .....।
उस मुड़न की, छिलन घुलन की
छुभन चुभन मयी पीड़ा से
कब किस क्षण .....।
यह छैल छबीली
सुन्दर फूलों की काया
सूखकर बिखर जाये
सपनों सी .....।
देख ले रे वल्लभ
अपनी प्राण प्यारी
निरंकुश श्वाँसों को
कब कहाँ किस आँचल में
छुप जाये झट से
लाजवन्ती सती सी
और .....।
क्या पता कब किस गोद में
सो जाये किस करवट से
अपनी होकर भी
परायी सी .....।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रंगरुटों के बूट

(मुनि सुधा सागर जी)

एक शूल से बचने को
रंगरुट बाटा के बूट पहन लेते हैं
किन्तु अफसोस की बात तो यह
है कि...../
उन बूटों को पहन कर
शान से रेंगते हुए
जीवों पर पैर रख देते हैं
क्या कभी विचार किया
कि...../
जब हमें शूलों की चुभन
असहनीय है...../
इष्ट नहीं है...../
तो फिर क्या
उनको
बूटों की भार सहनीय है- ?
क्या बूटों के नाल
उन्हें नहीं चुभते होंगे- ?
फूलों की मार भी
तुम्हें नहीं सुहाती है
और...../
उन मासूमों को
बूटों से मार रहे हो
मैं मानता हूँ
सूट के साथ बूटों का शौक होता है
पर होश के साथ
होश के बिना ध्यान रखो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस शौक से साख नहीं
राख मिलेगी...../
क्योंकि यह शौक
मासूमों के प्राण लूट लेता है
ज्ञेय भी
कहाँ बदलते हैं
वही है।
सिर्फ अर्थ बदला है
दृष्टि बदली है
पथ एक ही है
सिर्फ मुख बदला है
अत:...../
एकांत से
एकत्व की ओर बढ़ो
अनेकत्व की ओर नहीं
अनेकांत पकड़ो
पथ का अंत होगा

(मढ़िया जी)

"शर्म छोड़ दो/ मर्म खोल दो"

(मुनि सुधा सागर जी)

तुम बता सकते हो क्या ?
कौन है इस भूमंडल पर
जिसको अपराध की
कूख न मिली हो
कौन है इस वसुन्धरा पर
जिसके हाथ की हथेली
दूध से धुली हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हाँ...../
धुली जरूर होगी
पर...../
न दूध से, न पानी से
बस / खून से धुली है
उसी से रंगी है
भले ही...../
ऊपर से मेंहदी लगी है
पर...../
मक्खियाँ तो भिनभिना ही रही
हैं/खैर
तुम्हीं नहीं हो अपराधी
शरम की बात नहीं हैं
जरा...../
सर उठा कर देख तो लो
अपने साथियों के
वत कबरे मुखड़े को
जो कोढ़ के धब्बों से सने हैं
भले ही ऊपर से
लिपस्टिक पाउडर से पूरती हैं
पर...../
गंध कहाँ छुप पाई है/
बूँ तो अब भी
आ रही है
चिड़िया खेत चुन चुकी है
अब पछताने से, कुछ नहीं होगा
विवेक की जरूरत है
मुँह छिपाने से
सजा माफ नहीं होगी
गलती करना बुरा है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गलती को गलती
न कहना महान गलत है
हलाहल जहर ही तो है
जहर को जहर कहना
क्या बुरा है!!
क्या जहर पीना भला है
अरे कहाँ चला है/
सुधा का पान कर ले/
एक घूँट काफी है,
जहर से बचने को अमर बनने को

(मढ़ियाजी)

"दो बूँद"

(मुनि सुधा सागर जी)

उन रीते नयनों को / किसने देखा है
आज की दुनियाँ ने तो / उनको सहलाया है
जिनके नयनों से दो बूँद भी नहीं गिरे हैं।
किन्तु / सुना है / महावीर कुछ इससे उलटे
चले थे
उनका पथ कुछ भिन्न था
वे अघोषी पुरुष थे
दिव्य घोष तो उनके पैरों में था
मुख से नहीं पैरों से बोलते थे
कथनी नहीं, करनी उनका जीवन था
सुना है, गुरुओं से / कि
नगर में / राजा थे / महाराजा थे
सेठ थे / श्रेष्ठी थे / पर
महावीर के पग/

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महावीर के पग/
उन महलों के तोरण द्वार की ओर नहीं गये
गये / उस अबला के दरवाजे पर
समिट गये / समाहित हुए / अवगाहित हुए
उस चंदन बाला की अंखियों में
क्योंकि / वो रीत गई थी
उनको भरने के लिए
चमकाने के लिए
षट् रस भोजन छोड़ दिये / उन महलों के
और उड़दों के छिलके / अबला के
कँपते हाथों से ग्रहण कर / खा लिए
अरे सोचो तो / महावीर के भक्तों उनकी नेम
प्लेट लगाने वालो
कुछ तो अपने उपास्य की कदर करो
मेरे जैन जवानो ...../
क्या राम ने शबरी के झूठे बेर नहीं खाये थे
रामायण पढ़ने वालों...../
पर आज तो राम का नाम लेकर
रावण का काम कर रहे हैं
राम नाम जपना / पराया माल अपना
क्या कृष्ण ने / सुदामा के / कच्चे चॉवल
नहीं खाये थे
नारायण होकर...../
क्या भूल गये ? राष्ट्रपिता गांधी ने भी
उन मासूम गरीबों की कुटियों में जाकर
ज्वार की रोटी भाजी संग खाई थी
तभी देश को आजादी दिलाई थी /
आज / गरीबी हटाओ के नारे खूब लग रहे हैं /
पर कहाँ घट रही है / और
बढ़ रही है...../

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैं कहता हूँ...../
विश्व शांति तब तक नहीं होगी
जब तक तुम अपनी आँखों से
दो बूंद निकालकर /
उन रीती आँखों में / नहीं डालोगे
जो रोते रोते / रीत गई हैं...../
सूख गई हैं...../

आखिर जहर किसका?

(मुनि सुधा सागर जी)

सर्प जब डसता, हाँ
जहर भी चढ़ता है
लेकिन
गनीमत है
उतारने के नुक्से भी तो हैं।
वैद्य हकीम गुनियों के पास
लेकिन
एक जहर ऐसा भी है
जो रहा आदमी का
जब किसी को डसता है आदमी
और
जब जहर चढ़ता है
किसी पर आदमी का
तो
उस जहर को नहीं उतार पाते
वैद्य हकीम गुनिया मशहूर
जहर चढ़ता है.....
चढ़ता ही चला जाता है
आखिर आदमी ने ही तो काटा है।

(थूवौन जी)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थंकर नहीं तो तीर्थ तो बना लो

(मुनि सुधा सागर जी)

तुम तीर्थंकर हो
अनहोने हो
जिस ठूँठ को छू लेते हो
हराभरा हो जाता है
तुम सा रूप पा जाता है
क्षायिक हो तीर्थंकर बन जाता है
चरण स्पर्श से
अंजन चोर भी
निरञ्जन हो गया तुम्हारे दर्शन से
पर प्रभु ये तो बताओ
कि तुम इस ठूँठ को क्यों नहीं
छूते हो
यदि छूते हो तो
हरा क्यों नहीं हो रहा है
ये ठूँठ
क्या आपका प्रभाव कम हो
गया है
या
ठूँठ में हरे होने की योग्यता
नहीं है
या फिर
आपने छुआ ही नहीं / अथवा
ठूँठ से ठिठोली कर रहे हो
सच

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्या नहीं छुओगे इस ठूँठ को
पक्षपात करोगे निर्विकारी
वीतरागी होकर
पक्षपाती यदि तुम नहीं हो तो
मेरे
हाथों में भी वह सुधा रस भर
दो
जिसे पान कर
मर कर भी अमर बन जाऊँ
पंक से उठकर पंकज बन जाऊँ
हे नाथ
नाथों के नाथ हो
या
अनाथों के नाथ
पंकज की मृदुल पाँखुड़ियों को
मृदुल कर-कमलों से
थोड़ा तो सहलादो
तीर्थंकर नहीं
तो तीर्थं तो बना दो -

(थूर्वोन जी)

(आदिनाथ के चरणों में समर्पित)

"रागी किसका"

(मुनि सुधा सागर जी)

तुम मेरे सूने आंगन में
क्यों आते हो भगवन्
क्या - - - - - - /
चोरी का दोष तुम्हें नहीं लगता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यदि - - - - - -- /

भक्त की भक्ति से प्रसन्न हुए हो

तो फिर - - - - - - /

साकार रूप ले

क्यों नहीं दर्शन देते हो

निराकार बन क्यों सपनों में

आते हो

लगता है डरते हो

भक्त की पकड़ से

इसमें मेरी क्या गलती प्रभु

तुम्हीं ने तो भक्त बनाया है

मुझे अपना - - - - - -- /

- - - न - - - -

तुम वीतरागी होते

न मैं तुमसे राग करता

क्योंकि मैं - - - - - -- /

रागियों से राग नहीं करता हूँ

अतः प्रभु मेरी प्रार्थना है

अब मत - - - - - -- /

अपनी नियत को पलटो /

सत्य का फल तुम पा चुके हो

इसलिए - - - - - -- /

सत्य महाव्रती को धोखा देना

अब ठीक नहीं है

और प्रभु - - - - - -- /

तुम तो सर्वदर्शी हो

दूरदर्शी हो - - - - - -- /

भक्त की पकड़ से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कब तक डरोगे ?
कब तक बचोगे ?
और मुझे - - - - - -- /
समझ में भी नहीं आता
डरने की भी बात भी अब क्या है ?
तुम यथाजात बिहारी
और हम - - - - - -- /
यथाजात रूप धारी
तुम निराकारी बने हो
हम निर्विकारी बने हैं
नग्न दोनों हैं प्रभु /
फर्क क्या है / तर्क क्या है ?

बरसाती मेंढक

(मुनि सुधा सागर जी)

आज बड़े-बड़े कानून तो बनते हैं
और...../
मान्यता भी मिलती है
जोर शोरों से
बड़े-बड़े हस्ताक्षरों से
पर.....खेद है
एक रात के बाद
पुराने हो जाते हैं
अप्रमाणित होकर
कचरे की टोकरी में
चले जाते हैं...../
कारण स्पष्ट है .....कि
उनके नियामक या प्रस्तावक
बरसाती मेंढक होते हैं...../
अवसरवादी होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माफ नहीं, इन्साफ होगा!!!

(मुनि सुधा सागर जी)

मरण से कब डरा है
शरण में कब गया है
मौत जब नाच रही है, सिर पर
तब शरण चाहता है
याद रख...../
मरण जब निकट है
शरण तब निकट है
यही तो संकट है
अब शरण नहीं
हरण संभव है
क्यों..... ?
कारण स्पष्ट है
तेरी रक्षा को
जब जब जिसने हाथ बढ़ाये
काट दिए, तूने उन हाथों को
खंजर से...../
कितनों को अपाहिज किया है
इन हाथों से
जिस पत्तल में खाया
उसी में छेद किया है
भेद किया है...../
अब शरण नहीं
मरण संभव है
अब माफ नहीं,
इन्साफ होगा...../
उस जेल की
काली कोठरी में!!!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दृष्टि का फेर

ऐसा कोई घर नहीं
जिसमें द्वार न हो
ऐसा कोई मानव नही
जिसमें सद्गुण न हो
पर यह मानव
किसी के गुण
कहाँ देखता
और कब अमल करता?
कमाल की बात तो
यह है कि
पर का कोमल-कोमल
कमल भी इसे
नकली कमल सा
मल सा दिखता है
और अपना
सपनों का
नकली कमल भी
जिसमें न ---कली
खुली खिली
पर असली कमल सा
निर्मल सा दिखता है
कहूँ कहाँ तक
विराग में भी
राग का दर्श करता है
कारण स्पष्ट है
वस्तु का स्वरुप
नयन पर लगे
उपनयन के
अनुरुप ही दिखता है

मर्यादा

मुनि श्री समता सागर जी

तुम छोटे हो
छोटे जैसे रहो
गल्तियाँ कम करो
तुम बड़े हो
बड़ो जैसे रहो
छोटों की गल्तियाँ सहन
करो
एक दूसरे के अस्तित्व को
युगपत् वहन करो
मर्यादा लांघना ठीक जारी
रखो
कदमों को रखने का, क्रम
जारी रखो
किसी के पूजन अर्चन में
अपनी श्रद्धा का हवन करो
आगामी काल सुनहरा बने
इसलिए कुछ
जपन करो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुछ ही सब कुछ है

आर्यिका दृढ़मति जी

लिखा पडा है
जीवन की कॉपी पर
अपने द्वारा
अनन्त काल से
बहुत कुछ
.....पर.....
महत्व नहीं है
जीवन में
उसका कुछ
.....लेकिन.....

जब लिख जाता है
सच्चे गुरु की
वचन अथवा मौन
लेखनी से कुछ
उसी का
जीवन में
महत्व होता है
सब कुछ
.....अत:.....

सब कुछ में
कुछ नहीं
कुछ में ही
सब कुछ
समझो और
पाओ

■■■

डोली

मुनि श्री क्षमासागर जी

सांझ के द्वारे
रात आयी है
स्वागत करो
दीप जलाओ
देखो तो
यह रोशनी का
संदेशा लायी है
जीवन के द्वारे
मौत आयी है
स्वागत करो
डोली सजाओ
देखो तो
यह अपने घर
पहुंचने का
संदेशा लायी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैंने पाठ पढ़ा है जग का

मुनि श्री समता सागरजी

कोई जुड़े टूटता कोई श्वासें आती जातीं।
कहीं कली खिलती तो कोई कली कहीं मुरझाती।।
रखा गया सो सत्य भरोसा, मुझे न अगले पल का।
मैंने पाठ पढ़ा है जग का।।1।।
कभी आँख चाहे रोना पर आंसू न आ पाते।
कभी चाहता रोकूं आंसू पर वे न रूक पाते।।
पढ़े कौन भाषा भावों की रहस्य रहा क्या दृग का।
मैंने पाठ पढ़ा है जग का।।2।।
मैंने छोड़ा कितना सारा क्या इसमें अटकूंगा।
स्वयं राह बनाकर चलता फिर राहों में क्या भटकूंगा।।
वैभव मुझे लुभा न पाया भू का और सुरग का।
मैंने पाठ पढ़ा है जग का।।3।।
जग का है इतिहास जगह देता है पर ले लेता।
पाई पाई छोड़ यहीं पर यह चेतन चल देता।।
तुम परदेशी मैं परदेश मेल मिलन यह मग का
मैंने पाठ पढ़ा है जग का

"जल और ज्वलनशील अनल में अन्तर शेष रहता ही नहीं साधक की अंतर दृष्टि में।
निरन्तर साधना की यात्रा भेद से अभेद की ओर वेद से अवेद की ओर बढ़ती है, बढ़नी ही चाहिए अन्यथा, वह यात्रा नाम की है यात्रा की शुरुआत अभी नहीं हुई है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पशुओं से सीख

मुनि उत्तमसागरजी महाराज

चींटी से पुरुषार्थ सीख लो चिड़िया से घर रचना।
कोयल से तुम गाना सीखो, भौंरे से गुण गहना।
मैना से मीठी वाणी को सीखो खग से उड़ना।
घोड़े से तुम दौड़ सीख लो भरू हाथी से चलना।
सियार से चतुराई सीख लो कष्ट गधे से सहना।
चक्की से तुम प्रेम सीख लो भरू कौवे से तखना।
सीख शेर सह पराक्रमीता-चपल हिरण से बनना।
मेंहनतकरना सीख बैल से अरू बंदर से कूदना।
गौ माँ से वात्सल्य सीख लो अहि से निसंग बनना।
भेड़ों से भी सीख मित्रता और मीन से तैरना।
सबकी सेवा सीख श्वान से अरू चूहे से डरना।
मधुमाखी से सीख एकता मुर्गे से जल्दी उठना।
कछुवा से निज रक्षा सीखो अरू तितली से खेलना।
भेद ज्ञान हंस से सीखो बक से सु योग साधना।
तरू चढ़ना गिलहरी से सीखो लक्ष बिल्ली से धरना।
सीख चील से शिशु की रक्षा और मोर से नाचना।
शिक्षाप्रद इन पशुओं को तुम कभी न कोई सताना।
यदि सताओगे तो निश्चित नरक पड़ेगा जाना।।

-उद्देश्य की प्राप्ति-प्रयास साध्यं-

"मूक माटी"

उपाय की उपस्थिति ही पर्याप्त नहीं
उपादेय की प्राप्ति के लिए अपाय की अनुपस्थिति भी अनिवार्य है
और वह अनायास नहीं, प्रयास साध्य है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वे लाजवाब हैं

आर्यिका श्री दृढ़मति जी

वे मुनिगण गुण मुकुट हैं उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं
वे सैकड़ों में अकेले हैं, अलबेले हैं, उनका कोई जोड़ नहीं वे बेजोड़ हैं
क्या कहें वे तो बस वे ही है जिनके चेहरे पर निर्मल निश्छल मुस्कान है
उनकी हर छवि अम्लान है जो धर्मध्वजा की आन हैं, साधु संघ की शान हैं
मुनिगण गुण मुकुट हैं उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं।
वे भले हैं-भोले हैं हित मित मधुर बोल बोले हैं
भद्र भावों से भरे है साधना पथ पर खरे हैं
उम्र से जवान हैं साधक महान हैं
मित्र हैं सदज्ञान के शत्रु हैं अभिमान के।
भुलावों से दूर हैं, तपश्चरण में सूर हैं
वे मुनिगण गुण मुकुट हैं
उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं।
उनका चिंतन मौलिक है उनकी वार्ता अलौकिक है।
विचारों में उदारता है, हृदय में विशालता है
जीवन में प्रमाणिकता है व्यवहार में शालीनता है।
चर्या में दृढ़ता है, चर्चा में मृदुता है,
सर्वजन हितैषिता है वे मुनिगण गुण मुकुट हैं
उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं।
वे आत्मजयी हैं कषाय विजयी हैं वे आत्मकेन्द्रित है मनोहर मन मुदित हैं।
गुरु की नासादृष्टि है, सब पर कृपा दृष्टि है, निजानन्द रसलीन हैं।
विषयानंद विहीन हैं उन्हें लुभाती नहीं बाहरी दुनिया की चमक
उनके स्वभाव में है एक स्वाभिमानी की दमक
वे आलोक पुंज है संयम सुमन निकुञ्ज हैं।
वे मुनिगण गुण मुकुट हैं
उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं।
अनासक्ति और निस्पृहता
क्षमाशीलता सहनशीलता समता, धैर्य और वीरता, निर्भयता व निर्ममता
दयाशीलता कृपाशीलता साथ में जिनके है गंभीरता
वे ज्ञानदीप हैं सत्य संयम प्रदीप हैं ये सब उनके बड़े गुण हैं
उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं उनका कोई जवाब नहीं वे लाजवाब हैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"गुणों के साथ
अत्यन्त आवश्यक है
दोषों को बोध होना भी
किन्तु
दोषों से द्वेष रखना
दोषों का विकसन है,
और
गुणों का विनशन है
काँटों से द्वेष रखकर
फूल की गंध रखकर
वंचित रहना
अज्ञता ही मानी है
और
काँटो से अपना बचाव कर
सुरभि सौरभ का सेवन करना
विज्ञता की निशानी है
सो.....
विरलों में ही मिलती है।"

"वसुधैव कुटुम्बकम्"
इस व्यक्तित्व का दर्शन
स्वाद-महसूस
इस आँखों को
सुलभ नहीं रहा अब.....।
यदि सुलभ भी है
तो भारत में नहीं
महाभारत में देखो।
भारत में दर्शन स्वारथ का होता है
हाँ..... हाँ
इतना अवश्य परिवर्तन हुआ है कि
"वसुधैव कुटुम्बकम्"
इसका आधुनिकी करण हुआ है
"वसु" यानि धन द्रव्य
धन ही कुटुम्ब बन गया है
धन ही मुकुट बन गया है
जीवन का

(मूक माटी)

"करूणा रस उसे माना है,
जो कठिनतम पाषाण को भी मोम बना देता है।"
"करूणा रस जीवन का प्राण है,
शान्त रस जीवन का गान हैं।"

मूक माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मूक-माटी

कम बल वाले ही
कम्बल वाले होते हैं
और
काम के दास होते हैं
हम बल वाले हैं
राम के दास होते हैं
और
राम के पास सोते हैं
कम्बल का सम्बल
आवश्यक नहीं हमें
सच्ची सूती चादर का ही
आदर करते हम
अहिंसा के पुजारी।

नारी

इनकी आँखें हैं करुणा की कारिक
शत्रुता छू नहीं सकती इन्हें
मिलन सारी मित्रता
मुफ्त मिलती रहती इनसे।
यही कारण है कि
इनका सार्थक नाम है 'नारी'
यानी
न... अरि.....नारी
अथवा
ये आरी नहीं हैं
सो..... नारी

भगवान हमेशा
अपने आपको
देखते हैं
न..... कि
आपको देखते हैं
लेकिन.....
संसार प्राणी आपको देखता है
न..... कि
अपने आपको
देखता है

भगवान की दृष्टि
नासा दृष्टि है
न..... आशा पर
दृष्टि है
लेकिन.....
संसारी प्राणी
की दृष्टि
आशा पर है
ना... नासा पर है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 3

जिन वन्दन सौरभ

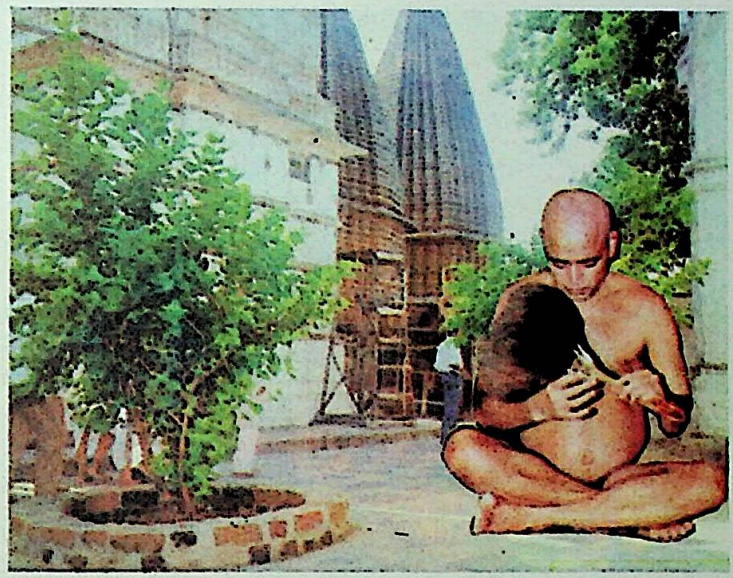

श्री जिन मन्दिर रामटेक जी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनेन्द्र स्तुति

आचार्य श्री विद्यासागर जी

हे शांत संत अरिहन्त ! अनंत ज्ञाता।
हे शुद्ध बुद्ध, शिव सिद्ध अवद्ध धाता।
आचार्य वर्य ! उवज्झाय ! सु साधु सिंधु।
मैं बार-बार तब पाद पयोज बन्दूं।।1।।

स्वामी ! तुम्हें निरख सादर नेत्र दोनों।
आरुढ़ ! मोक्षपथ हों मम पैर दोनों।।
ले ईश नाम रसना शिर तो नती से
यों अंग अंग हरषे तव संगति से।।2।।

ये ईश ! धीश ! मुझमें बल बोधि डालो।
कारुण्यधाम करुणा मन में जगा दो।।
देहात्म का बस विभाजन तो करेंगे।
शीघ्रातिशीघ्र सुख भाजन भी बनेंगे।।3।।

जो जानते सकल लोक तथा अलोक।
न मान यान परिरूढ़ सदा अशोक।।
ऐसे महेश, बृषभेष, प्रभो ! जिनेश।
रक्षा करें मम मुझे सुख दें विशेष।।4।।

हैं जन्मते कब कहा ँ? जग जीव सारे।
मानो जगतगुरु तुम्हीं जगदीश प्यारे।।
धाता पितामह चराचर मोद धारी।
हे लोक बंधु भगवन ! जय हो तुम्हारी।।5।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैन गीत – (प्रार्थना)

तर्ज- जनगण मन--राष्ट्रगीत

अरहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु सुखदाता,
परमेष्ठी पंच सुखदाता।

इन्द्र नरेन्द्र यक्ष सुर किन्नर, पंडित बुधजन सारे,
भव तम भंजन शीश नमावत रक्षक तुम्ही हमारे,
जब शुभ मन से ध्यावे, तब शुभ आशिष पावें,
हे सदबुद्धि प्रदाता।

भव दुःख बाधा हरो हमारी, तुम्हें नमावत माथा,
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे,
परमेष्ठी पंच सुखदाता।।1।।

अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु सुखदाता।
परमेष्ठी पंच सुखदाता

चारों गति में भ्रमत फिरे हैं, कष्ट अनेक उठाये,
ज्ञान नयन जब खुले हमारे, तब तव दर्शन पाये,
सुख की ये आश लगाए, हम सब तुम ढिग आये,
जहां मिले सुखसाता।।2।।

नाथ तुम्हारे दर्शन से तो मुक्ति पन्थ मिल जाता,
जय हे, जय हे, जय हे जय जय जय जय हे,
परमेष्ठी पंच सुखदाता

अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु सुखदाता
परमेष्ठी पंच सुखदाता।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रार्थना

हे प्रभो ! ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना है
दूर दुर्गुण सभी तुम करो, हम सभी की यही अर्चना है।

धर्म रक्षा में हम प्राण दें, न अधर्मी कभी हम बनें।
झूठे वैभव को हम त्याग कर, सर्वदा सत्य राही बनें।।
न कभी हमको अभिमान हो, बस यही एक आराधना है।।1।।
हे प्रभो ! ज्ञान का दान .....
सदाचारी रहें हम सदा, और सदाचार हो सम्पदा।
न जगे मन में ईर्ष्या कभी, प्रीत की ही बहे नर्मदा।।
छल कपट से रहें दूर हम, मिल के करते यही कामना है।।2।।
हे प्रभो ! ज्ञान का दान .....
लाखों बाधायें आयें तो क्या, मोह भरमाये हमको तो क्या।
जिसे मिल जाये तेरी शरण,धैर्य टूटेगा उसका कहाँ।
हम भक्तों को तुमसे प्रभो, यही वरदान तो मांगना है।।2।।
हे प्रभु ! ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना है।
दूर दुर्गुण सभी तुम करो, हम सभी की यही अर्चना है।

मेघ आते बहुत हैं मगर कुछ ही बरसते हैं,
फूल खिलते बहुत मगर कुछ ही महकते हैं।
आते और जाते, इंसान तो बहुत हैं धरा पर
मगर इन्सानियत को कुछ ही समझते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनेन्द्र भक्ति

निरखो अंग अंग जिनवर के जिनसे झलके शान्ति अपार। टेक।।

चरण कमल जिनवर कहें घूमा सब संसार।
पर क्षण भंगुर जगत में निज आत्म तत्व ही सार।।
यातें पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शांति अपार।।1।।

हस्त युगल जिनवर कहें पर का करता होय।
ऐसी मिथ्या बुद्धि से ही भ्रमण चतुर्गति होय।।
यातैं पद्मासन विराजे जिनवर झलके शांति अपार।।2।।

लोचन द्वय जिनवर कहें घूमा सब संसार।
पर दुःख भय गति चार में ध्रुव आत्म तत्व ही सार।।
याते नाशा दृष्टि विराजे जिनवर झलके शांति अपार।।3।।

अन्तर्मुख मुद्रा अहो, आत्म तत्व दरशाय।
जिन दर्शन कर निज दर्शन पा सतगुरु वचन सुहाय।।
याते अन्तर्दृष्टि विराजे जिनवर, झलके शांति अपार।।4।।

मूक-माटी

"संयम की राह चलो
राही बनना ही तो
हीरा बनना है
स्वयं राही शब्द ही
विलोम रुप से कह रहा है
रा.... ही..... ही..... रा

"संयम के बिना
आदमी नहीं
यानी
आदमी वही है
जो यथायोग्य
सही आ...दमी है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महावीर गुण-गाओं

आ जाओ महावीर गुणगाओ-आ जाओ महावीर गुण गाओ
जिनके गुणगाता हैं सारा त्रिभुवन उनके चरणों में करो मिलके सब नमन
ऐसा जयघोष करो गूंजे ये गगन, महावीर गुणगाओ
सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाया
जियो और जीने दो सबको सिखाया
जीवो को मुक्ति का पंथ दिखाया
महावीर गुण गाओ।।1।।

पंचशील धारे, वैराग्य जगाया
कर्मों का नाश किया, मुक्ति को पाया
जन्म और मृत्यु का रोग मिटाया

महावीर गुण गाओ..... ।।2।।
नित्य करो आरती, नित करो पूजन
पापों का त्याग करें सफल हो जीवन
दुःख न सताए जो करे नाम का सुमरन
महावीर गुण गाओ, आ जाओ महावीर गुण गाओ।।3।।

"तन और मन को
तप की आग में
तपा तपा कर
जला जला कर
राख करना होगा
तभी कहीं चेतनात्मा
खरा उतरेगा

"खरा शब्द भी
स्वयं विलोम रुप हो
कह रहा है
राख बने बिना
खरा दर्शन कहाँ
रा... ख ...ख ... रा !
'मूक माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पार्श्वनाथ-स्तुति

श्री पार्श्वनाथ भगवान अरज सुन लीजो मेरी-2
मेरे पूरे करो अरमान- कि निशदिन करुं तुम्हारा ध्यान-2

जीवन की राहों पर चल रहा में राही अलबेला,
कभी दुःखों का कभी सुखों का, देख रहा हूँ मेलारे-2
प्रभु तुम हो शक्तिवान 2 हमें भी, दे दो दया का दान
अरज सुन लीजो मोरी .....।।1।।

एक ओर है टूटी झोपड़ी, एक ओर महल भारी
एक बना नगरी का राजा, एक बना है भिखारी रे 2
है कर्म बड़ा बलवान 2 कि कोई कर न सका पहचान
अरज सुन लीजो मोरी ...।।2।।

रंग बिरंगी इस दुनिया का देखा दृश्य निराला
तेरे बिन, हे भगवन ! मेरा कोई नही रखवाला रे - 2
मै गाऊँ तेरे गुणगान-2 कि रखना हम भक्तों की शान
अरज सुन लीजो मोरी - ।।3।।
श्री पार्श्वनाथ भगवान, अरज सुन लीजो मोरी।।

"तूने जो
अपने आपको
पतित जाना है
लघुतम माना है
यह अपूर्व घटना
इसलिए है कि
तूने निश्चित रुप से
प्रभु को गुरुतम को-पहचाना है।"
'अधोमुखी जीवन
उर्ध्वमुखी हो
उन्नत बनता हैं
हारा हुआ भी
बेसहारा जीवन
सहारा देने वाला
बनता है
गुरु के परिसर में
जीवन का जहाँ निर्वाह
नहीं निर्वाण होता है
'मूक माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विनती – सुनिये दयालु भगवन

सुनिये दयालु भगवन्' अरजी तो ये हमारी।
सब दोष माफ करके, रख लेना लाज हमारी।।

पतित हम हैं प्रभु जितने, हो पावन तुम प्रभु उतने।
बने अपराधी हम जितने, दयालु तुम प्रभु उतने।
नहीं और कोई दिखता, आये शरण तिहारी।
सुनिये दयालु भगवन।।1।।

तुम्हीं दाता तुम्हीं त्राता, पिता माता हो सब जग के।
तुम्ही दुःख हर कहाते हो विधाता भाग्य सब जग के
विपदायें जितनी आवें हर लेना आप सारी"
सुनिये दयालु भगवन्।।2।।

तुम्हारा नाम हर पल हो, जुवां पर ऐ मेरे भगवन्।
कर्म बलि से बचा लेना मैं निर्बल हूँ मेरे भगवन्।
अंतिम समय में केवल रटना रहे तिहारी।।3।।
सुनिये दयालु भगवन् अरजी तो ये हमारी।
सब दोष माफ करके रख लेना लाज हमारी।।

रोम रोम से निकले प्रभु जी नाम

रोम रोम से निकले, प्रभु जी नाम ये तुम्हारा-2
ऐसा दो वरदान कि फिर ना पाँऊ जन्म दुबारा
रोम-रोम.....
छोड़ न पाँऊ प्रभुजी, पाँच ठगों का डेरा,
किस विधि पाँऊ आखिर प्रभु जी दर्शन तेरा,
भटक न जाये, ये बालक प्रभुजी, देना आन सहारा,
रोम-रोम.....
मन से निशदिन प्रभु जी, ज्योति जलाऊँ तेरी,
कब तक मन की होगी पूरी आशा मेरी,
इन नैनों से, तेरी ज्योति का देखूँ अजब नजारा,
रोम-रोम.....
कोई न खाली जाये तेरे दर से प्रभुजी,
अपनी दया का हाथ तूं, सर पर रख दे प्रभु जी,
तेरे दर पर आये हैं, पाने दीदार तुम्हारा।
रोम-रोम.....

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नन्हा सा फूल हूँ मैं . . .

नन्हा सा फूल हूँ मैं, चरणों की धूल हूँ मैं,
आये हैं हम तो तेरे द्वार, प्रभुजी मेरी भक्ति करो स्वीकार।
गुरुजी मेरी भक्ति करो स्वीकार।।

ओऽऽ . . . मैं तो निर्गुणिया, मुझको कुछ ज्ञान दो
जीवन में जीना सीखूं, ऐसा वरदान दो
निर्गुण को गुण मिल जाये, निर्धन को धन मिल जाये।
मानूं तुम्हारा उपकार प्रभुजी मेरी . . .।।1।।

सुनलो हमारी अरजी बस इतनी बात है
मेरे जीवन की डोरी, अब तेरे हाथ है
सूरज सी ज्योति पाऊँ, तुम जैसा जीवन पाऊँ
इतना सा दे दो उपहार प्रभुजी मेरी . . .।।2।।

हृदयांगन मेरा सूना, तुम बिन अनाथ है
हृदय में तुम बस जाओ, तो हम सनाथ हैं।
चरणों में मैं रह जाऊँ, हृदय में तुम बस जाओ
इतना सा कर दो उपकार-प्रभुजी . . .।।3।।

(मूक माटी)

आस्था के तारों पर ही
साधना की अंगुलियाँ
चलती हैं साधक की
सार्थक जीवन में तब
स्वरातीत सरगम करती हैं।
आस्था के विषय को आत्मसात् करना हो
उसे अनुभूत करना हो
तो साधना के साँचे में
स्वयं को ढालना होगा सहर्ष।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"प्रभु-दर्शन-चाह"

चाह मुझे है दर्शन की, वीर चरण स्पर्शन की
वीतराग छवि प्यारी है, जन-जन के मन भाई है
मूरत मेरे भगवन की . . . . . ।टेक।।

कुछ भी नहीं श्रृंगार किये, हाथ नहीं हथियार लिये
फ़ौज भगाई कर्मन की . . . . . वीर चरण . . . .
चाह मुझे . . . . . .

हाथ पर हाथ धरे ऐसे, करना कुछ न रहा जैसे
देख दशा पद्मासन की . . . . . वीर चरण . . . .
चाह मुझे . . . . . .

समता पाठ सिखाती है ध्यान की याद दिलाती है
नाशा दृष्टि लखो इनकी . . . . . वीर चरण . . .
चाह मुझे . . . . . .

जो शिव आनंद चाहो तुम, इन सा ध्यान नगाओ तुम
विपद हरे भव भटकन की . . . . वीर चरण . . . .
चाह मुझे . . . . . .

साहित्य (मूक माटी)

हित से जो युक्त-सर्मान्वत होता है
वह सहित माना है
और सहित का भाव ही
साहित्य बाना है,
अर्थ यह हुआ कि
जिस के अवलोकन से
सुख का समुद्भव-सम्पादन हो
सही साहित्य वही है
अन्यथा-
सुरभि से विरहित पुष्प सम
सुख का राहित्य है वह
सार-शून्य शब्द-झुण्ड . . .।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेरी परम दिंगबर मुद्राको....

तेरी परम दिगम्बर मुद्रा को मैं हर पल निहारा करूं
रहूं नहीं दूर
मेरे मन मंदिर में आओ प्रभू मैं हरदम पुकारा करूं
रहूं नहीं दूर
यह जग पापों का डेरा, लाख चौरासी का फेरा,
भटक-भटक कर हार गये हैं पाया अव शरणा तेरा,
हे नाथ महर कर दो मुझ पर गुण तेरे ही गाया करूं
रहूं नहीं दूर . . . ।।1।।
सीता ने तुमको ध्याया जल बिच कमल बिछा पाया,
लाज रखी तुमने भक्तों की अद्भुत है तेरी माया,
हे तीन लोक के नाथ सदा तेरे चरणों की पूजा करूं
रहूं नहीं दूर . . . ।।2।।
जिसने भी तुमको ध्याया, सुख अमृत उसने पाया,
इस दुःखिया की विनती सुनले जो तेरी शरणा आया,
हे करुणा के सागर प्रभु जी मैं तुमको ही ध्याया करूं।
रहूं नहीं दूर . . . ।।3।।
तेरी परम दिगम्बर मुद्र को मैं पल पल निहारा करूं
रहूं नहीं दूर
मेरे मन मंदिर में आओ प्रभू गुण तेरे ही गाया करूं।

- : जीवन-साहित्य : -

शान्ति का श्वास लेता
सार्थक जीवन ही
सृष्टा है शाश्वत साहित्य का।
इस साहित्य को
आँखें भी पढ़ सकती हैं
कान भी सुन सकते हैं
इस की सेवा हाथ भी कर सकते हैं
यह साहित्य जीवन है ना। *(मूक माटी)*

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जय-जिनेन्द्र

जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र, जय जिनेन्द्र बोलिये,
जय जिनेन्द्र की ध्वनि से, अपना मन खोलिये।
सुर असुर जिनेन्द्र की महिमा को नहीं गा सके,
और गौतम स्वामी न महिमा का पार पा सके।
जय जिनेन्द्र बोल कर जिनेन्द्र शक्ति तोलिये।।
जय जिनेन्द्र . . .।।1।।

जय जिनेन्द्र ही हमारा एक मात्र मंत्र हो
जय जिनेन्द्र बोलने को हर मनुष्य स्वतंत्र हो
जय जिनेन्द्र बोल-बोल खुद जिनेन्द्र हो लिये
जय जिनेन्द्र . . . ।2।।

पाप छोड़ धर्म जोड़, ये जिनेन्द्र देशना
अष्ट कर्म को मरोड़, ये जिनेन्द्र देशना
जाग जाग जाग चेतन, बहु काल सो लिये
जय जिनेन्द्र . . .।3।।

हे जिनेन्द्र ज्ञान दो, मोक्ष का वरदान दो
कर रहे हैं प्रार्थना हम प्रार्थना पर ध्यान दो
जय जिनेन्द्र बोल कर हृदय के द्वार खोलिये।
जय जिनेन्द्र . . .।4।।

बोल नहीं माहौल मिले (मूक माटी)

ओ श्रवणा।
कितनी बार
श्रवण किया स्वर का
ओ मनोरमा!
कितनी बार
स्मरण किया स्वर का
कब से चल रहा है
संगीत-गीत यह
कितना काल अतीत में
व्यतीत हुआ, पता हो, बता दो . . .
भीतरी भाग भीगे नहीं अभी तक
दोनों बहरे अंग रहे
कहाँ हुए हरे भरे
हे नीराग हरे!
अब बोल नहीं माहौल मिले।
बोल नहीं माहौल मिले।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओ ऽऽऽ जगत् के शान्तिदाता !

ओ ऽऽऽ जगत् के शान्तिदाता शांति जिनवर
जय हो तेरी 2

ओ ऽऽऽ जगत् के
किसको मैं अपना कहूँ कोई नजर आता नहीं,
इस जहाँ में आप बिन, कोई भी मन भाता नहीं
तुम ही हो त्रिभुवन विधाता, शांति जिनवर
जय हो तेरी . . . 2

ओ ऽऽऽ जगत् . . . . .
तेरी ज्योति से जहाँ में, ज्ञान का दीपक जला
तेरी अमृत वाणी से ही, राह मुक्ति का मिला
शीश चरणों मे झुकाता, शांति जिनवर
जय हो तेरी . . . .

ओ ऽऽऽ जगत् . . . . . .
मोह माया में फंसा, तुमको भी पहिचाना नहीं
ज्ञान है ना ध्यान दिल में धैर्य को जाना नहीं
दो सहारा मुक्ति दाता, शांति जिनवर
जय हो तेरी . . . . . .

बन के सेवक हम खड़े हैं, स्वामी तेरे द्वार पे
हो कृपा तेरी तो बेड़ा पार हो संसार से
तेरे गुण हम सब हैं गाते, शान्ति जिनवर
जय हो तेरी . . . .

ओ जगत के . . . . .

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर-वंदना

वीरा तेरे चरणों को कहाँ छोड़ के जाना है,
सारा जग झूठा हे सच्चा तेरा ठिकाना हे,

सारे जग के नाते तो चार दिनों के हैं
तेरा मेरा नाता तो सादियों से पुराना है,
वीरा तेरे चरणों.....

हम नित दर्शन को आते तेरे मंदिर में,
प्रभु तेरा गंदोदक तो आंखों से लगाना है,
वीरा तेरे चरणों.....

काहे को तू रोता है इस नश्वर काया को
चोला तो बदलता है, मरने का बहाना है,
वीरा तेरे चरणों.....

वीरा तेरी वाणी सुन लाखों तिर गये भव से,
मैं भी तेरा नाम जपूं मुझे भी तर जाना है,
वीरा तेरे चरणों.....

"यह एक कटु सत्य है कि (मूक माटी)
अर्थ की आँखें परमार्थ को देख नहीं सकतीं
अर्थ की लिप्सा ने बड़े-बड़ों को निर्लज्ज बनाया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम्हें कैसे पाऊँ

तुम्हे कैसे पाऊँ समझ में न आये,
तुम्हारे लिए मन परेशां है मेरा 2।
चढ़ाने को कुछ भी नहीं पास मेरे
रही है तमन्ना दरश पाऊँ तेरा।।
श्रद्धा सुमन मैं करूं तेरे अर्पण,
नहीं फूल पुष्पों से तुझको मनाऊँ।
हृदय में जलाऊँ मैं भक्ति का दीपक
तभी दूर होगा, हृदय का अंधेरा।
तुम्हें कैसे . . .
नहीं तुमसे कोई शिकायत मुझे है
प्रभो वीर मेरी तमन्ना यही है
सभी टूटे कर्मों के बंधन ये मेरे
जुवां पर हो मेरे सिरफ नाम तेरा
तुम्हें कैसे . . .
निर्जन में ढूंढा है वन वन में ढूंढा
लताओं गुफाओं में तुझको है ढूंढा
नहीं मन के मंदिर में तुमको है ढूंढा
तो फिर कैसे पाऊँ प्रभु दर्श तेरा
तुम्हें कैसे . . .
तुम्हें जिसने पाया मिला सुख है उसको
बना वो है एक दिन आनन्द कर्ता
मिटा दो दुई का पर्दा ओ भगवान्
हो तेरी कृपा से सरल भाव मेरा।
तुम्हें कैसे . . .

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 4
गुरु वन्दन सौरभ

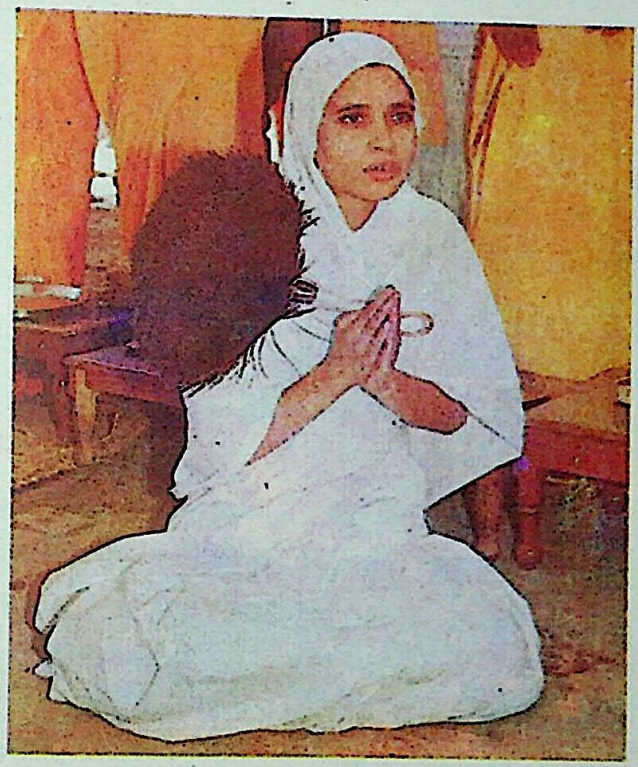

गुरुदेव तुम्हारा क्या कहना,
तुम तो स्वाति की बूँदें हो।
बूंदों की गिनती संभव है,
तुम तो निस्सीम समन्दर हो।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य भक्ति

श्री सिद्ध भक्ति

नमोऽस्तु पौवन्हिक। अपरान्हिक आचार्य वंदनायां श्री सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गम् करोम्यहम्।

सम्मत्त--णाण-दंसण। वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं। अगुरुलहु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।1।।

तव सिद्धे, णय-सिद्धे, संजम सिद्धे, चरित्र-सिद्धेय, णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।2।।

क्षायिक सम्यक्त्व, अनंत दर्शन, अनंत वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व अगुरुलघुत्व, और अब्याबाध सुख-ये आठ गुण सिद्धों के होते हैं ।।1।।

तप-सिद्ध, नय-सिद्ध, संयम-सिद्ध, चरित्र सिद्ध, ज्ञान सिद्ध, दर्शन-सिद्ध ऐसे सभी सिद्धों को नमस्कार करता हूं।।2।।

इच्छामि भंते। सिद्ध-भक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्म-दंसण सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्मविप्प मुक्काणं, अट्ठ-गुण संपण्णाणं, उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहि-लाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंचलिका–

हे भगवन्! सिद्ध भक्ति करने के पश्चाद् जो मैंने कायोत्सर्ग किया है उसमें लगे हुए दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। जो सिद्ध भगवान सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र सहित हैं, आठों कर्मों से रहित हैं सम्यक्त्वादि आठ गुणों से शोभित है, जो उर्ध्वलोक के मस्तक पर विराजमान है, जो तपश्चरण से सिद्ध हुए हैं, नयों से सिद्ध हैं, संयम से सिद्ध हुए, जो चारित्र से सिद्ध हुए, जो भूतकाल, भविष्यत्काल और वर्तमान काल तीनों कालों से सिद्ध हुए है, ऐसे सिद्धों की मैं सदा पूजा करता, वंदना करता, अर्चा करता हूँ और उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुखों का नाश हो, कर्मों का नाश हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, श्रेष्ठगति मिले, समाधिमरण हो और भगवान जिनेन्द्र के गुणों प्राप्ति हो।

श्री श्रुतभक्ति

नमोऽस्तु आचार्य वन्दनायां श्री श्रुत भक्ति कायोत्सर्गम् करोम्यहम् ।

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव
पंचाश-दृष्टौ च सहस्त्र-संख्या, मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि।।1।।

अरहंत-भासि-यत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मम्
पणमामि भक्ति-जुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा।।2।।

-एक सौ बारह करोड़, तेरासी लाख अट्ठावन हजार और पांच पद प्रमाण इस श्रुतज्ञान को मैं नमस्कार करता हूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अरहंत भगवान द्वारा अर्थरूप से कहे गये और गणधरदेव द्वारा ग्रंथरूप से ग्रंथित किये गये श्रुतज्ञान रूप महासागर को भक्ति पूर्वक मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूं।

इच्छामि भन्ते। सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं अंगो वंगपइण्णए पाहुडय परियम्म-सुत्त-पढमाणि ओग पुव्व-गय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुई-धम्म कहाइयं णिच्च-कालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि मरणं जिणगुण सम्पत्ति होउमज्झं।

अंचलिका–

हे भगवन्! श्रुतभक्ति करने के बाद मेरे द्वारा जो कायोत्सर्ग किया गया है उसमें लगे हुए दोषो कीआलोचना करने की इच्छा करता हूं। श्रुत ज्ञान के जो अंग, उपांग प्रकीर्णक, प्राभृतक परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग पूर्वगत चूलिका, सूत्रार्थ, स्तुति और धर्मकथा आदि भेद है उन सबकी मैं सदा काल अर्चा करता हूँ, पूजा करता हूं , वंदना करता हूं,नमस्कार करता हूँ । मेरे समस्त दुखों का नाश हो, समस्त कर्मों का नाश हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति मिले, समाधिमरण हो, जिनेन्द्र भगवान के अनंत गुणों की प्राप्ति हो।

श्री आचार्य भक्ति

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।।

श्रुत–जलधि–पारगेभ्यःस्व–पर–मतविभावना–पटु–मतिभ्यः।
सुचरित–तपो–निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ।।1।।
छत्तीस–गुण–समग्गे, पंच–विहाचार–करण संदरिसे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिस्सा णुग्गह-कुसले, धम्मायरिये सदा वंदे।।2।।
गुरू-भत्ति संजमेण य, तरन्ति संसार सायरं घोरं,।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।3।।
ये नित्यं व्रत मंत्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्राकुला।
षट्-कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः, साधु-क्रिया-साधवः।।4।।
शील-प्रावरणा-गुण-प्रहरणा, चन्द्रार्क तेजोऽधिका।
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन भटाः प्रीणंतु माम् साधवः।।5।।
गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञान दर्शन-नायकाः,।
चारित्रार्णव गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः।।6।।

- जो श्रुताज्ञान के पारगामी हैं स्वमत और परमत के विचार करने में कुशल है, सुचरित्र और तप के खजाने है और गुणों में महान् है- ऐसे गुरूओं को नमस्कार हो।

- जो छत्तीस गुणों से पूर्ण हैं, पांच प्रकार के आचार के स्वयं पालने वाले है, तथा शिष्यों के द्वारा भी उसी आचरण का पालन कराने वाले है, शिष्यों के ऊपर अनुग्रह करने वाले हैं ऐसे धर्माचार्य की मैं सदा वंदना करता हूं।

गुरूभक्ति करने से शिष्य, घोर संसार सागर से पार हो जाते है। आठ कर्मों का नाश कर देते है और जन्म-मरण के दुख को फिर कभी नही पाते।

-जो प्रतिदिन ब्रत, मंत्र और होम में लगे रहते है, जो ध्यान रूपी अग्नि में हवन करने वाले है, आवश्यकादिषट्क्रियाओं में लीन है तपरूपी धन ही जिनका धन है, जो साधुओं की क्रियाओं को करने में कारणभूत है, अठारह हजार शील रूपी वस्त्र ओढ़तें है, चौरासी लाख गुण ही जिनके पास शस्त्र है, चन्द्र और सूर्य से भी जिनका तेज अधिक है,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो मोक्षद्वार के दरवाजे खोलने में सुभट है, योद्धा की तरह है- ऐसे साधु मेरी रक्षा करें।

-जो ज्ञान और दर्शन के नायक हैं, चारित्ररूपी सागर के समान गंभीर है, और मोक्षमार्ग का उपदेश देने वाले हैं-ऐसे श्री गुरू/आचार्य हमारी नित्य रक्षा करें।

इच्छामि भन्ते। आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, तिरयण-गुण-पालण-रयाणं सव्व साहूणं, णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण गुण संपत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका-

हे भगवन्! मैंनें आचार्य भक्ति संबंधी कायोत्सर्ग क्रिया है, उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूं। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र से युक्त पंचाचार का पालन करने वाले आचार्यों की, आचारांग आदि श्रुतज्ञान का उपदेश देने वाले उपाध्यायों की, रत्नत्रय गुण को पालन करने वाले समस्त साधुओं की सदा अर्चना करता हूं, पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ। उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुखों का नाश हो, कर्मों का क्षय हो मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति मिले, समाधिमरण हो, और भगवान जिनेन्द्र के गुणों की प्राप्ति हो।

नोटः- सुबह 18 बार एवं सध्या आचार्य वन्दना में 36 बार णमोकार मंत्र पढें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परमपूज्य 108 श्री आचार्य ज्ञान सागर जी महाराज की पूजन

रचयिता : श्री मुनि योगसागर जी

वसन्त तिलका छन्द

स्थापना

श्री पूज्यपाद भवतारक ज्ञान सिन्धु
पूजा करुं हृदय से तब पाद बन्दु
अध्यात्म दीप जग में तुमने जलाया
विद्यादिसागर महाऋषि को बनाया

ऊँ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागरमुनीन्द्र!
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहवानन्।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागरमुनीन्द्र!
अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागरमुनीन्द्र!
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।
जो ज्ञान गंग जल में डुबकी लगाते
यों जन्म-मृत्यु स्वयमेव विलीन होते
आशीष दो यह मुझे वह ज्ञान पाऊँ
मैं भी समाधि जल में डुबकी लगाऊँ
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय जलं नि0 स्वाहा।
अंगार-सी विषय राग चहूं दिशों में
व्यामोह चित्त मृग ज्यों भटके वनों में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संसार में यह छवि सब को रमाती
ज्यों चांदनी शरद पूनम की सुहाती।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय भवतापविनाशनाय चंदनं नि0 स्वाहा।

सिद्धान्त के नयन से भलि-भांति जाना
है विश्व के हर पदार्थ अनित्य माना।
जो धर्म ही अमिट हे शरणादिलाता
पीयूष-सा परम अक्षय सौख्य दाता।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय अक्षयपदप्राप्तयें अक्षतम् नि स्वाहा।

है नागराज-सम काम सता रहा है
सारा शरीर विष से जल-सा रहा है।
ज्यों चंद्र कान्त-मणि शीतल सौम्यवाली
त्यों शील प्रदायक धर्म वाली।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागाराय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि0 स्वाहा।

घी-दूध के सरस व्यंजन चाहती है
तो भी क्षुधा उदर की मिटती नहीं है।
आत्मानुभूति रस से वह तृप्त होती
तो ज्ञान-ध्यान तप से वह प्राप्त होती।
ॐ ह्रीं आचार्य ज्ञानसागराय क्षुधारोग निवारणाय नैवेधं नि. स्वाहा

था ज्ञान दीपक अकंप अपूर्व आभा
ज्यों रत्न दीप दमके उस भांति शोभा।
वैराग्य वर्धक कषाय निवारता है
ऐसे महागुरु भवोदधि तारता है।।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि0 स्वाहा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैनेन्द्र यज्ञ तप को अपना लिया है
दुष्टाष्ट कर्म दल तो जलने लगे हैं।
आनंद गन्ध निज से बहने लगा है
निर्गन्ध वस्तु जग के लगने लगे हैं।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय अष्ट कर्म दहनाय धूपं नि० स्वाहा।

शुद्धात्म वृक्ष पर ही फल मोक्ष पाता
त्रैलोक में अनुपम रसवान होता।
सर्वस्वत्याग करके वह योग साधा
है मोक्ष के निकट ही जिसमें नवाधा।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० स्वाहा।

वैराग्य मूर्ति लखके मन शान्त होता
जो भेद-ज्ञान स्वयमेव सु-जाग जाता।
विश्वास है वरद हस्त हमें मिला है
संसार चक्र जिसमें भ्रमता नहीं है।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा।

जयमाल

दोहा

ज्ञानार्णव आचार्य की गाता हूं जयमाल
समकित पंकज खिल उठे खुलता मन का जाल।।
चित्त पपीहा के लिए ज्ञानामृत का धार
मोह जहर निवारण को गरुड़ मन्नसावार।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वसन्त तिलका छन्द

वात्सल्य का कमल पूर्ण खिला हुआ था
वैराग्य केसर सुगंध बहा रहा था
जो ज्ञान नीर जिस बीच सुशोभता था
संवेग का हरित लिया हुआ था
मैं कोटि-कोटि उर से करता प्रणाम
जो नाम के स्मरण से मिलता सुशर्म
जो ख्याति लाभजनरंजन से परे थे
निःस्वार्थ पूर्ण अति उज्जवल संयमी थे
थे ज्ञानवृद्ध तपवृद्ध वयों सुवृद्ध
थे कल्प वृक्ष-सम शीतल शांत शुद्ध
अध्यात्म के अमृत में निज को रमाते
ऐसे महाश्रमण का गुण-गान गाते।
साहित्य का सृजन संस्कृत में किया है
लालित्य पूर्ण मनमोहक लेखनी हैं
है आपका जयोदय इस काव्य न्यारा
शिवभूत हे अतुलनीय महान प्यारा।
आचार्यवर्य शिवसागर थे कृपालु
थे पट्ट शिष्य उनके सब में दयालू
अन्वर्थ नाम रख के गुरु ने उठाया
श्री ज्ञानसागर सुनाम सबकों सुहाया।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य ज्ञानसागराय जयमाला पूर्णार्घ्य नि0 स्वाहा।

दोहा

ज्ञान सिन्धु दरबार में, मची ज्ञान की लूट।
झोली जो भरता प्रभु, भव सागर सें छूट।।
।इत्यार्शीवाद पुष्पाजंलि क्षिपेत्।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य विद्यासागर जी की पूजन

: स्थापना :

मुक्ति-वधु को पाने हेतु, भेष दिगम्बर को धारा।
रत्नत्रय के आभूषण से, तुमने निज को श्रृंगारा।।
श्रमण संध के शिरोमणि हो, चलते फिरते रत्ना-कर
मेरे उर के कमलासन पर, तिष्ठो गुरु विद्यासागर।।1।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागर मुनीन्द्र! अत्र-अवतर संवोषट् आह्वानन्
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागर, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागर, अत्र मम सन्निहितोभव-भव वषट्
सन्निधिकरणं।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

: जल :

तन मन की सब प्यास मिटाने, सागर भर जल पी डाला।
फिर भी प्यास न शांत हुई हैं, धधक रही इच्छा ज्वाला।।
विद्या के सागर का अमृत, पीने को अब आया हूँ
जन्म मरण की ताप मिटाने, प्रासुक जल भर लाया हूँ।।2।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम्

: चंदन :

रागद्वेष की ज्वाला में ही, मैने तन मन जला दिया।
चिन्तामणि सम नर जीवन को, मिट्टी में ही मिला दिया।।
विद्या रूपी चँदन-तरु का, लेप लगाने आया हूँ।
भव आताप की दाह मिटाने शीतल चंदन लाया हूँ
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय संसार ताप विनाशनाय चंदनम्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

: अक्षत :

इन्द्रिय सुख ही अक्षय सुख है, ऐसा अब तक माना था।
इन्द्रियों के वश होकर के, निज को नहिं पहिचाना था।
अक्षय सुख की परिभाषा को, आज जानने आया हूँ
अक्ष विजेता बनने को मैं, अखण्ड अक्षत लाया हूँ।।4।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय अक्षय पद प्राप्त्ये अक्षतम्।

: पुष्प :

काम-देव ने काम-वाण से, मुझकों घायल बना दिया।
कामेन्द्रि के आधीन करके, मम शक्ति को दबा दिया।।
काम देव पर जय पाने की, विद्या लेने आया हूं।
शील स्वभावी बनने को मैं, पुष्प सुगंधित लाया हूं।।5।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय काम वाण विध्वंसनाय पुष्पम्।

: नैवेद्य :

युगों-युगों से खाते-खाते, अगणित भोजन नष्ट किया।
फिर भी भूख न शान्त हुई, समता रस भी नहीं पिया।।
विद्या रूपी मधुर सुधा, का अमृत पीने आया हूं।
क्षुधा रोग से मुक्ती पाने, व्यंजन को मैं लाया हूं।।6।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यम।

: दीप :

मोह मल्ल से मैत्री करके, भटक रहा हूं भव वन में।
ज्ञान नयन से अन्धा बनकर, खोज रहा सुख विषयन में।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विद्या रवि से सम्यक ज्योति, पाने को मैं आया हू।
मिथ्यातम को दूर भगाने, घी का दीपक लाया हूं।7।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागाराय मोहान्धकार विनाशनाय दीपम्।

: धूप :

अष्ट कर्म की जंजीरों ने, जकड़ लिया है चेतन को।
क्रोध, मान, मद, माया, अरि ने लूट लिया आतम धन को।।
विद्या धन से कर्म काटने, शरण आपकी आया हूं।
कर्म विजेता बनने को यह, धूप जलाने लाया हूं।8।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय अष्ट कर्म दहनाय धूपम्।

: फल :

फल की इच्छा मन में रखकर, मैनें अब तक धर्म किया।
मुक्ता फल से वंचित होकर, नश्वर फल का स्वाद लिया।।
विद्या-तरु का फल खाने को, पंछी बनकर आया हूं।
मुक्ति श्री को पाने गुरुवर, श्री फल चरणों में लाया हूं।9।।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय मोक्ष फल प्राप्तये फलम्।

: अर्घ :

अष्ट कर्म के भव जंगल में, भटक रहा हूं भव भव से।
शिवपुर का पथ नहिं मिल पाया, गुरुवर मुझकों तुमजैसे।।
विद्या बल से सकल कर्म को, आज मिटाने आया हूं।
सिद्ध स्वरूपी बनने कों मैं अर्घ साथ यह लाया हूं।
ऊँ ह्रीं श्री आचार्य विद्यासागराय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

: दोहा :

जो निज गुरु के गुरु बने, अरु संतों के संत।
ऐसे विद्या महाकवि, रहें सदा जयवंत।।

: जयमाला :

जय जय गुरु विद्या के सागर, जिन शासन के दिव्य दिवाकर।
चेतन हित के तुम अनुरागी, तन, मन, धन, से पूर्ण विरागी।।

तप्त कनक सम काया तेरी, देखते ही मेटे भव फेरी।
छोड़ा तुमने सब आडम्बर, धार लिया फिर भेष दिगम्बर।।

जन जन की आंखों के तारे, जग में रहते जग से न्यारे।
नाम आपका विद्यासागर, सबकी भरते ज्ञान से गागर।।

चन्दा सूरज तारे सारे, निश दिन तब आरती उतारे।
धन्य हो गई भारत माता, सुनकर तेरी जीवन गाथा।।

ऋणी रहेगी जनता सारी, पाकर के ये शरण तुम्हारी।
हर मानव के मन मन्दिर में, बैठे तुम परमेष्ठी पद में।।

ब्रम्ह-वाक्य मय तेरी वाणी, सुनते ही मिलती शिवरानी।
जो ओरों से तुम कह देते, उसको पहिले खुद कर लेते।।

भव में अटके-भटके जन को दिखा रहे तुम शिव पथ सबको।।
तीन लोक के कण-कण सारे तेरे ही नित नाम पुकारे,

आज न मिलते मुनि तुम ऐसे, विश्व कल्याण होता कैसे?।।
आत्म ज्ञान की घुट्टी पिलाके, सब शिष्यों को धैर्य दिलाते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चरण आपके जिसने पूजे, उसको मिले नहीं भव दूजे।।
ग्रीष्म तपन में तुम हो सरवर, शीत काल के तुम हो दिनकर।।

हर प्राणी के प्राण आप हो, हर प्राणी के हरत पाप को।।
हर ध्यानी के ध्यान आप हो, हर ज्ञानी के ज्ञान आप हो।।

हर भक्तों की भक्ति आप हो, हर शूरों की शक्ति आप हो।
हर जीवों के श्वास आप हो, हर दर्शक के पास आप हो।।

हर कवियों के छन्द आप हो, हर पुष्पों की गंध आप हो।।
हर लेखक के लेख आप हो, हर चिंतक के चित्त आप हो।।

हर गायक के गीत आप हो, हर मानव के मीत आप हो।
हर आंखों की ज्योति आप हो, हर भव्यों को पूज्य आप हो।।

हम रागी हैं, तुम त्यागी हो, हम भोगी हैं, तुम योगी हो।
हम नीरज हैं, तुम सूरज हो, हम पद रज हैं, तुम पंकज हो।।

हम तारे हैं तुम इन्दु हो, हम बिन्दु हैं तुम सिन्धु हो।
हम बालक हैं, तुम पालक हो, हम नमते हैं तुम गुण-गण को।।

ऊँ ह्रीं श्री विद्यासागराय
जय माला पूर्णार्घ्य निर्वापामति स्वाहा।।

दोहा

विद्या सागर नीर से, करता हैं जो स्नान।
वह "मुनि उत्तम" होय के पाता पद निर्वाण।।
इन्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य श्री विद्यासागर चालीसा

दोहा

पंच परम परमेष्ठी को पूजूँ मन वच काय।
परमोत्तम पद पा सकूँ, पाप पंक मिट जाय।।
जिनवाणी जिन देव जी, और गुरू महाराज।
इनको बन्दूँ विनय से, बनूँ मुक्ति सरताज।।

चौपाई

जय गुरूवर विद्या के सागर, रत्नत्रय के तुम रत्नाकर।
मन्द मधुर मुस्कान तुम्हारी, लगती है अति प्यारी-प्यारी।।
गाँव सदलगा कर्नाटक में, ख्यात हुआ है भारत भर में।
रात शरद-पूनम की भारी, जनम लियो तुम जन हितकारी।।
श्रीमति जी तुमरी माता, पिता मल्लप्पा धन के दाता।
भ्रात बहन अरू मात पिताजी, बने सभी मुनि अरू माता जी।।
धन्य-धन्य परिवार आपका, काट रहा जंजीर पाप का।।
बीस साल में तुम घर छोड़ा, मुक्ति रमा से नाता जोड़ा।
दक्षिण से उत्तर को आये, ज्ञान गुरू को तुम अपनाये।।
गुरूवर तेरे ज्ञान सु सागर ज्ञान-ध्यान के सच्चे आगर।
हिन्दी, संस्कृत, न्याय पढ़ाया, एक साल में मुनि बनाया।।
विद्याधर से विद्यासागर, साधु बने तुम नग्न दिगम्बर।
आचारज पद दिया आपको, दीन-हीन के हित करने को।।
उत्तम गुण से मण्डित हो तुम, ज्ञान विशारद पण्डित हो तुम।
सब शास्त्रों के तुम हो ज्ञाता, ज्ञान विधि के तुम हो दाता।।
स्यादवाद मय तुमरी वाणी, सुनते हैं नित लाखों प्राणी।
करते हो तुम लेखन, चिन्तन, जिनवाणी का करके मंथन।।
सोते हो तुम बिना चटाई, ना मेवा ना खाते मिठाई।
फल या फल का रस नहिं पीते, मीठा नमकीन कुछ नहिं खाते।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौमासा तुम जहँ कर लेते, जंगल में मंगल कर देते।
ज्ञान-सिन्धु के तुम हो मोती, देते सबको सम्यक् ज्योति।
षट् शतको के तुम निर्माता, समयसार की जैसी गाथा।
"मूक माटी महाकाव्य" बनाया, जैन धर्म का सार बताया।।
महावीर के तुम लघु भ्राता, जन-जन के हो प्राण-प्रदाता।
जिनवाणी के लाल तुम्हीं हो, जैन धर्म के ढाल तुम्हीं हो।
मोक्ष-मार्ग के तुम हो नेता, काम-क्रोध अरु अक्ष विजेता।।
समय सार के तुम हो अर्चन, मूल आचार के तुम हो दर्पण।
मंत्र-तंत्र से सदा दूर हो, विद्यामृत के महापूर हो।।
बिन माँगे तुम सब कुछ देते, बदले में कुछ भी नहिं लेते।
ब्रह्मा बिष्णु तुम शिव शंकर, सकल विश्व के तुम्ही हितंकर।
चरण आपके जहाँ पड़े है, वहाँ धर्म की ध्वजा गड़े है।।
भव दावानल महा दुखदाई, तुमने सच्ची राह दिखाई।।
वैद्यों में तुम वैद्य-राज हो, भव दुःख का करते इलाज हो।
ब्राही विद्या आश्रम खोला, जन-जन ने जयकारा बोला।।
संध आपका जग में भारी, सारा संघ सु बाल ब्रह्मचारी।
सुर-नर किन्नर मुनिगण सारे, गाते हैं गुण-गान तुम्हारे।।
तेरे गुण हम गाते-गाते-निश्चित भवसागर तर जाते।
हम बच्चे हैं छोटे-बिन्दु-हमें बना दो अपार सिन्धु।।
जिसे मिला आशीष तुम्हारा, संयम पद को उसने धारा।
"उत्तम मुनि" चालीसा गावें, "विद्या गुरु" को शीश नवावें।।

दोहा

गुरू चालीसा को पढ़ें, जो नित चालिस बार।
विद्यासागर पढ़लहे, भवोदधि करके पार।।1।।
मैं बालक अल्पज्ञ हूँ, हूँ मैं मति का मंद।
ज्ञानी सुधार के पढ़े गुरू चालीसों छन्द।।2।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य को विनय से उर में बिठा लूं

आचार्य को विनय से उर में बिठा लूं।
मैं पूज्य पाद रज को सिर पै चढ़ा लूं।
हे मित्र! मोक्ष सबको फलतः मिलेगा।
विश्वास है यह नियोग नहीं टलेगा।।1।।

आचार्य देव! मुझको कुछ बोध देओ।
रक्षा करो शरण में शिशु शीघ्र लेओ।।
क्या दिव्य अंजन प्रकाश नहीं खिलाता।
क्या शीघ्र नेत्र गत धूल नहीं उड़ात।।2।।

ध्यानाग्नि से मदन को तुमने जलाया।
पीयूष स्वानुभव का निज को पिलाया।।
धारा सु रत्नत्रय हार अतः कृपालो।
पूजूँ तुम्हें मम गुरो मद मेट डालो।।3।।

हे विद्यासागर गुरो! तुमको नमोस्तु।
हे मोक्ष सूचक गुरो! तुमको नमोस्तु।।
विज्ञान को सहज ही सब में जगा दो।
अज्ञान रूप तम को झट से भगा दो।।4।।

संसार में पतित था, गुरु ने उठाया।
अज्ञान का तिमिर था गुरु ने हटाया।।
आचार्य हैं तरण तारण ज्ञानधारी।
विद्यादिसागर गुरो जय हो तुम्हारी।।5।।

मूक-माटी

"संघर्ष मय जीवन का उपसंहार
नियम से हर्षमय होता है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"ज्ञान-तीर्थ विद्यासागर"

कर्नाटक के बेलगांव का गाँव सदलगा प्यारा है।
पिता मलप्पा मातु श्री मति का ये लाल दुलारा है।।
यथा नाम गुण हुये उजागर नाम विद्याधर धारा है।
ब्रह्मचर्य व्रत रखकर घर में वाईस वर्ष गुजारा है।।

सुन उपदेश शांति सागर के, मन वैराग्य विचारा है।
भरी जवानी में दीक्षा ली, वेश दिगम्बर धारा है।।
सारा ही परिवार वैरागी, कैसा अजब नजारा है।
पाकर के निमित्त मुक्ति का सबने लिया सहारा है।।

त्याग तपस्या और साधना का, ये रूप तुम्हारा है।
इतनी सी छोटी वय में, पद आचारज का धारा है।।
शिष्य आपके हुये अनेकों, वेश दिगम्बर धारा है।
नई युवा पीढ़ी को गुरुवर तुमसे मिला सहारा है।।

ज्ञानी ध्यानी युवा संत सब, ब्रह्मचर्य व्रत धारा है।
जग के झूठे जंजालों से, गुरुवर किया किनारा है।।
यथा नाम और गुण से पूरित, संघ आपका न्यारा है।
विद्या के सागर हो गुरूवर, अनुपम रूप तुम्हारा है।।

रेवा की माटी धन्य हो गई, जब से गुरु के चरण पड़े।
धर्म ध्यान की चर्चा में रत, भविजन दिखते नित्य खड़े।।
गुरु के चरण कमल की रज को, शीश सभी ने धारा है।
धन्य हुआ है जन मानस यह, बरसें हर्ष अपारा हैं।।

गुमराह हुई थी जो पीड़ी, गुरु ने सन्मार्ग दिखाया है।
जीवन के सच्चे सुख का गुरु, तुमने ही बोध कराया है।।
जाने कितनों ने नियम धर्म से, अपना वक्त गुजारा है।
हे ज्ञान तीर्थ विद्यासागर, दिग्दर्शक रुप तुम्हारा है।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

-भजन-मेरा नम्र प्रणाम है

मेरा नम्र प्रणाम है,
जग के उन सब मुनिराजों को बारम्बार प्रणाम है।
सिद्धों की श्रेणी में आने वाला जिनका नाम है।।
मोक्ष मार्ग में अंतिम क्षण तक चलना जिनको इष्ट है,
जिन्हें न च्युत कर सकता पथ से कोई विघ्न अनिष्ट है।
दृढ़ता जिनकी है अगम्य और जिनका धैर्य अगाध है,
साहस जिनका है अदम्य और जिनका शौर्य अबाध है।।
है जिनकी निस्वार्थ साधना, जिनका तप निष्काम है,
जग के उन सब मुनिराजों को बारम्बार प्रणाम है।1।।
मन में किंचित हर्ष न लाते सुन अपना गुणगान जो,
और न अपनी निंदा सुनकर करते हैं मुख म्लान जो।
जिन्हें प्रतीति एक सी होती, संस्तुतियां और गालियाँ,
सिर पर गिरती सुमना वलियां चलती हुई दुनालियाँ।।
दोनों समय शांत मय रहना जिनका शुभ परिणाम है,
जग के उन सब मुनिराजों को बारम्बार प्रणाम है।2।।
हर उपसर्ग सहन करते जो कहकर कर्म विचित्रता,
तन तज देते, किन्तु न तजते, अपनी ध्यान पवित्रता।
एक दृष्टि से देखा करते, गर्मी वर्षा ठण्ड जो,
शीत उष्ण लू रिमझिम वर्षा शीत तरंग प्रचण्ड जो।।
जिनको ज्यों ही शीतल छाया, त्यों ही भीषण घाम है,
जग के उन सब मुनिराजों को बारम्बार प्रणाम है।3।।
जिनको कंकड़ जैसा ही है मणिमुक्ता का ढेर भी,
जिनका समता धन खरीदने में असमर्थ कुबेर भी।
दूर परिग्रह से रह माना, करते हैं संतोष जो,
रत्नत्रय से भरते रहते, अपने संचित कोष को।।
और उसी की रक्षा में रत, रहते सुबह औ शाम है,
जग के उन सब मुनिराजों को बारम्बार प्रणाम है।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"गुरु स्तुति" – ते गुरु मेरे मन बसों

ते गुरु मेरे मन बसो जे भवजलधि जिहाज।
आप तिरहिं पर तारहिं, ऐसे भी ऋषिराज।। ते गुरु०
मोहमहारिपु जानिकै, छाड्यो सब घरबार।
होय दिगम्बर वन-वसै, आतम शुद्ध विचार। ते गुरु०।
रोग उरग-विल वपु गिण्यो, भोग भुजंग समान।
कदली तरु संसार है, त्याग्यो सब यह जान।। ते गुरु०।
रतनत्रयनिधि उर धरैं, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल,
मार्‌यो कामखवीस को, स्वामी परम दयाल। ते गुरु०।
पंचमहाव्रत आदरै, पांचो समिति समेत।
तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पदहेत।। ते गुरु०।
धर्म धरैं दश लक्षणी, भावैं भावना सार,
सहैं परीषह बीस द्वै, चारित-रतन-भण्डार। ते गुरु०।
जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सरवर नीर।
शैल-शिखर मुनि तप तपै, दाझै नगन शरीर। ते गुरु०।
पावस रैन डरावनी, बरसै जल धरधार।
तरुतल निवसै तब यती, बाजै झंझा ब्यार। ते गुरु०।
शीत पड़ै कपि-मद गलै, दाहै सब बनराय,
तालतरङ्गनि के तटै, ठाड़ै ध्यान लगाय। ते गुरु०।
इहि विधि दुद्धर तप तपै, तीनों काल मंझार।
लागैं सहज सरुप में, तनसों ममत निवार। ते गुरु०।
पूरब भोग न चिंतवैं, आगम वांछै नाहिं।
चहुंगति के दुःखसों डरैं, सुरति लगी शिवमांहिं। ते गुरु०।
रंग महल में पौढ़ते, कोमल सेज बिछाय।
ते पच्छिम निसि भूमि में, सोवें संवरि काय। ते गुरु०।
गजचढ़ि चलतैं गरबसों, सेन्न सजि चतुरंग।
निरखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग। ते गुरु०।
वे गुरु चरण जहां धरै, जग में तीरथ जेह।
सो रज मम मस्तक चढ़ै, 'भूधर' मांगैं एह। ते गुरु०।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"गुरु वंदना"

बन्दौं दिगम्बर गुरु-चरन, जग-तरन-तारन जान,
जे भरम-भारी रोग को हैं, राजवैद्य-महान।
जिनके अनुग्रह बिन कभी, नहिं कटै कर्म-जंजीर
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।1।।
यह तन अपावन अथिर है, संसार सकल असार,
ये भोग विष-पकवान से, इह भांति सोच-विचार।
तप विरचि श्री मुनि वन बसे, सब छोड़ि परिग्रह भीर।
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।2।।
जे कांच-कंचन सम गिनहिं अरि-मित्र एक सरुप।
निन्दा-बड़ाई सारिखी, वन खण्ड शहर अनूप।
सुख-दुःख जीवन मरन में, नहिं खुशी नहिं दिलगीर।
वे साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।3।।
जे बाह्य परवत वन विषै, गिरि गुफा-महल मनोग।
सिल सेज समता-सहचरी, शशि-किरन-दीपक जोग।
मृग मित्र, भोजन तप-भई, विज्ञान-निरमल नीर,
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक धीर।4।।
सूखहिं सरोवर जल भरे, सूखहिं तरङ्गिनि तोय।
बाटहिं बटोही ना चलै, जहं धाम गरमी होय।
तिहुंकाल मुनिवर तप तपहिं, गिरि-शिखर ठाड़ैधीर।
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।5।।
घनघोर गरजहि घन-घटा, जल परहि पावस-काल।
चहुँ ओर चमकहिं बीजुरी, अति चलै सीरी ब्याल।
तरू-हेठ तिष्ठहिं तव जती, एकांत अचल शरीर।
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।6।।
जब शीत मास तुषारसौं, दाहैं सकल बन-राय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जब जमैं पानी पोखरा, थरहरै सबकी काय।
तब नगन निवसै चाहटैं, अथवा नदी के तीर।
ते साधु मेर उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।।7।।
कर जोर 'भूधर' बीनवै कब मिलहिं वे मुनिराज।
यह आश मन की कब फलै, मम सरहि सगरे काज।
संसार विषम-विदेश में, जो बिना कारण वीर।
ते साधु मेरे उर बसहु, मम हरहु पातक पीर।।8।।

"इस युग के
दो मानव
अपने आपको
खोना चाहते हैं-
एक
भोग राग को
मद्य-पान को
चुनता है
और एक
योग त्याग को
आत्म ध्यान को
धुनता है
कुछ ही क्षणों में
दोनों होते
विकल्पों से मुक्त!
फिर क्या कहना!
एक शव के समान
निरा पड़ा है
और एक
शिव के समान
खरा उतरा है।"

'मूक-माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विनयांजलि

मुनि श्री समता सागरजी

हे! सन्त श्रेष्ठ आचार्य प्रवर तुमको मेरा शत्-शत् प्रणाम।
जो कर न सके जन कोटि-कोटि, ऐसा कुछ किया आपने काम।।
सन्तों में हो कवि आप कवियों में संत निराले।
बने आप निर्ग्रन्थ मगर ग्रन्थों को पढ़ने वाले।।
मोहित जन-जन को कर जाते अद्भुत ये निर्मोही।
देह सहित हैं किन्तु ध्यान करते हैं वैदेही।।
किन नामो से तुम्हें पुकारूँ, ठहरै आप अनाम।
हे! सन्त श्रेष्ठ..... ।। 1 ।।
अनुशासन अध्यात्म आत्मदृष्टि आदर्श तुम्हारे।
निर्णय निस्पृह निरभिमान निश्छल निर्देशन सारे।।
परीषह जय संघर्ष हर्ष से करते ये ध्रुव तारे।
त्याग तपस्या के तीरथ के सन्मुख सब जन हारे।।
कभी ज्ञान से ध्यान-ध्यान से ज्ञान कभी करते विश्राम।
हे! सन्त श्रेष्ठ..... ।। 2 ।।
श्वॉस-श्वॉस में समयसार, पग-पग पर मूलाचार चले।
बात-बात में सूत्रांसूक्तियाँनीति रीतियाँ सहज मिले।।
दूरदर्शिता व्यापक चिन्तन, सूझ-बूझ अनुपम इनकी।
न्याय छन्द साहित्य दार्शनिक काव्य कला सुन्दर जिनकी।।
वात्सल्य करूणानिधान के वचन और प्रवचन अभिराम।
हे! सन्त श्रेष्ठ..... ।। 3 ।।
श्रमण संस्कृति के उन्नायक साहित्य सृजक अनुपम सेतु।
जिन धर्म संघ के संवाहक, प्रहरी वन फहराते केतु।।
साध्य साधना भक्ति भावना में निज जीवन लगा दिया।
अंध कुरीति हटा समाज, बिखरी को तुमने मिला दिया।।
संस्कृति समाज साहित्य संघ उपकृत है साधना पराधाम।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे! सन्त श्रेष्ठ..... ।।4।।
दीक्षा शिक्षा देकर गुरुवर ने भारी उपकार किया।
भटके हुए सैकड़ों जन को मार्ग दिखा उद्धार किया।।
रजत मुनि दीक्षा अवसर पर विनयांजलि अर्पित है।
भक्ति भाव से भरा मुनि समता का हृदय समर्पित है।।
जिन शासन के महाप्रभावक जुग जुग जीवोसंत ललाम।
हे! सन्त श्रेष्ठ..... ।।5।।
जो कर न सके जन कोटि.....

"महिला"

प्राय: पुरुषों से वाध्य हो कर ही
कुपथ पर चलना पड़ता है स्त्रियों को
परन्तु
कुपथ सुपथ की परख करने में
प्रतिष्ठा पाई है स्त्री समाज ने जो
मह यानी मंगल मय माहौल
महोत्सव जीवन में लाती है
महिला कहलाती है वह"।
जो निराधार हुआ, निरालम्ब
आधार का भूखा
जीवन के प्रति उदासीन
हतोत्साही पुरुष में
मही यानी धरती
घृति-धारणी जननी के प्रति
अपूर्व आस्था जगाती है
पुरुष को रास्ता बताती है
सही-सही गन्तव्य का-
'महिला' कहलाती है वह!"

जो संग्रहणी व्याधि से
ग्रसित हुआ है
जिसकी संयम की जठराग्नि
मन्द पड़ी है
परिग्रह संग्रह से पीड़ित
पुरुष को
मही यानी
मठा-महेरी पिलाती है
महिला कहलाती है वह"

मूकमाटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विद्यासागर की गुण आगर की

विद्यासागर की गुण आगर की शुभ मंगलदीप सजाय हो-2
मैं आज उतारूँ आरतिया..।।

मल्लप्पा श्री श्रीमति के गर्भ विषैं गुरु आये-2
सँदलगा ग्राम में जन्म लियो है सब जन मंगल गाये,
गुरुजी सब जन.....
गृह त्यागी की वैरागी की ले दीप सुमन का थाल हो.....
मैं आज.....।।1।।

गुरु उपवास व्रतों के धारी, आतम ब्रह्म बिहारी।
खड़गधार शिव पथ पर चलकर, शिथिलाचार निवारी-2
न रागी की न द्वेषी की ले आतम ज्योति जगाय हो।
मैं आज.....।।

गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया-2
भक्ति भाव से आरति करके, फूला नहीं समाया-2
ऐसे ऋषिवर को ऐसे मुनिवर को कर वंदन बारंबार हो
मैं आज.....।।

विद्यासागर की, गुण आगर की, शुभ मंगल दीप सजाय हो
आज उतारूँ आरतिया.....।।

नमन

मन की छॉव में ही
मान पनपता है।
मन का माथा नमता नहीं
न मन हो तब कहीं
नमन हो 'समण' को
इसलिए मन यही कहता है-सदा
नम न! नम न!! नम न

कलियुग-सतयुग

कलियुग की सही पहचान है
जिसे खरा भी अखरा है सदा
और
सत्युग तू उसे मान
बुरा भी
'बूरा' सा लगा है सदा!

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरुवर तेरे चरणों में. . . . . .

हे गुरुवर तेरे चरणों में हम वंदन करने आये हैं
श्री विद्यासागर मुनिवर की हम आरती करने आये हैं।
तुम काम क्रोध मद लोभ छोड़, निज आतम को पहचाना है,
घर कुटुम्ब छोड़कर निकल पड़े, धर लिया दिगम्बर बाना है।।1।।
हे मुनिवर.....

छोटी सी आयु में स्वामी, विषयों से मन अकुलाना है,
सत् संयम शील साधना में, दृढ़ अपने मन को ठाना है।।2।।
हे गुरुवर.....

कितनी भी भीषण ताप पड़ी हो, क्षुधा-तृष्णा की बाधायें,
स्थिर मन से सब सहते हैं, विपदायें कितनी ही आयें।।3।।
हे गुरुवर.....

नहिं ब्याह किया घरबार तजा समता के दीप सजाये हैं,
हे महाव्रती संयमधारी, हम आरती करने आये हैं।।4।।
हे गुरुवर.....

समता की आँखों से

वातानुकूलता हो या न हो,
वातानुकूलता हो या न हो।
सुख या दुःख के लाभ में भी
भला छिपा रहता है
देखने से दिखता है
समता की आँखों से।
लाभ शब्द स्वयं
विलोम रुप से कह
कह रहा है-
ला... भ...भ...ला....!

(मूक-माटी)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेरे चरणों में हम, काटें अपने करम

(तर्ज - तुमसे लागी लगन, लगन लेलो अपनी शरन.....)

तेरे चरणों में हम, काटे अपने करम, दो सहारा।
गुरुवर शत-शत नमन हो हमारा।।
मल्लप्पा के राजदुलारे, माता श्री मति के प्राण-प्यारे
सबको घर में छोड़ा, जग से मुख को मोड़ा, संयम धारा।
गुरुवर शत्-शत् नमन हो हमारा।।1।।
देशभूषण ने शिक्षा दिखाई, ज्ञान सागर से दीक्षा है पाई,
दोनों भाई सगे, भाग्य उनके जगे, जब संभारा।
गुरुवर शत् शत नमन हो हमारा।।
बाल ब्रह्मचारी संघ बनाया,
सारा बुन्देल खंड जगमगाया,
कभी नैनागिरी, कभी कुंडलगिरी कभी अहारा।
गुरुवर शत् शत् नमन हो हमारा।2।।
जब से दर्शन किये हैं तुम्हारे,
भाग्य जागे हैं गुरुवर हमारे,
करदो ऐसा यतन, हो समाधि मरण, आप द्वारा।
गुरुवर शत् शत् नमन हो हमारा।3।।

बदला

"बदले का भाव वह दल दल है
कि जिसमें
बड़े बड़े बैल ही क्या
बलशाली गज दल तक
बुरी तरह फँस जाते हैं
और गल-कपोलतक
पूरी तरह धंस जाते हैं।"
"बदले का भाव वह अनल है
जो
जलाता है तन को भी
चेतन को भी
भव भव तक"

(मूक-माटी)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसे मुनिवर देखें हमने.....

ऐसे मुनिवर देखे हमने
जाके रागद्वेष नहीं मन में

शीतकाल दरिया के किनारे–2
ऐजी मगन रहे ध्यानन में
ऐसे मुनिवर देखे हमने----

ग्रीष्म काल शिखर के ऊपर–2
ऐजी धीरज धारें मन में
ऐसे मुनिवर देखे हमने-----

चातुर्मास तरूतल ठाड़े–2
ऐजी बूँद पड़े छिन–छिन में
ऐसे मुनिवर देखे हमने-----

ऐसे मुनि को मैं नित प्रति ध्याऊ
ऐजी धोक देत चरणन में
ऐसे मुनिवर देख हमने
जाके रागद्वेष नहीं मन में।

अवला–अबला

"जो अब यानी
"अवगम" ज्ञान ज्योति लाती है
तिमिर–तामसता मिटकर
जीवन को जागृत करती है
'अवला' कहलाती है वह"।

पुरूष चित्त की वृत्ति को
विगत की दशाओं और
अनागत की आशाओं से
पूरी तरह हटाकर
अब यानी
आगत 'वर्तमान में लाती है
अबला कहलाती है वह।"

मूक–माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"शत्-शत बार नमन है"

रत्नत्रय से पावन जिनका
यह औदारिक तन है।
गुप्ति समिति अनुप्रेक्षा में रत,
रहता निशिदिन मन है।
सन्मति युग के ऋषि सा जिनका
बीत रहा हर क्षण है,
त्याग तपस्या लीन यति वर
प्रवचन कला प्रवण है।
जिनकी हितकर वाणी सुनकर
सबका चित्त मगन है,
जिनका पावन दर्शन पाकर
शीतल हुई तपन है
तत्वों का होता नित चिंतन
मंथन और मनन है
विद्या के उन सागर को
मम शत् शत् बार नमन है।

"अधर्म"

"निर्बल-जनों को सताने से नहीं
बस सम्बल दे बचाने से ही
बलवानों का बल सार्थक होता है।"
शिष्यों पर अनुग्रह करना
सहज प्राप्त शक्ति का
सदुयोग करना है, धर्म है
और दुष्टों का निग्रह नहीं करना
शक्ति का दुरुपयोग करना है
अधर्म है।।"

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संदेश है ज्ञान दिवाकर के

श्री गुरुवर विद्यासागर जी संदेश है ज्ञान दिवाकर के,
हमको ज्ञान से भर दो गुरुवर हम आये गुरुद्वार पे।

अपना जीवन मोड़ लिया है, करने आत्म विकास को,
पल प्रतिपल पुरुषार्थ कर रहे, पाने परम प्रकाश को,।
शक्ति की अभिव्यक्ति करने लिया विरक्ति भाव है,।
जन रंजन–और मनरंजन तज वही निरंजन भाव है,।
मुक्ति मंजिल पाओगे गुरु उत्तम संयम धार के,
हमको ज्ञान से..... ।। 1 ।।

स्मरण तर्कणा शक्ति से तुम करते तत्त्व विचार हो,
विसम्वाद तज स्यादवाद से करते धर्म प्रचार हो,।
ममता नहीं विषमता भी नहीं समता रस के स्वादी हो,
मूलाचार औ समयसार सम बनने के तुम आदी हो,।
धन्य हुई है सारी धरती ऐसे गुरुवर पाय के,
हमको ज्ञान से..... ।। 2 ।।

पिता रहे अरिहंत देव माँ कल्याणी जिनवाणी है,
आचार्य ज्ञान सागर जैसे ही, आप भेद विज्ञानी है,।
कुन्द, कुन्द की परिपाटी को पुनः आज दुहरायी है,
अनेकान्तमय समन्तभद्र की गौरव गाथा गायी है,।
इनकी महिमा क्या गा सकते महानतम है आज ये,
हमको ज्ञान से..... ।। 3 ।।

चिंतन, लेखन, काव्य सृजन भी, इनका नित चलता रहता,
ध्यान, अध्ययन, स्वयं गुरु की महिमा को करता रहता।
जैन गीत अरु कुन्द कुन्द का कुन्दन इनकी प्रतिमा है,
'मूकमाटी' महाकाव्य जगत की अपनी अनुपम आभा है,।
दे दो बस आशीष गुरूवर हम सबको मुस्काय के,
हमको ज्ञान से..... ।। 4 ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक डाल पर बहुत पुष्प क्या खिलकर के नहीं रहते हैं,
एक गगन में और अनेकों तारे क्या नहीं रहते हैं,।
एक एक ग्यारह बन जायें ऐसा सुखद सुधार हो,
छह के आगे तीन रहे अरु सदा मधुर व्यवहार हो।
सब संकल्पित होकर आये बनकर एक विचार के,
हमको ज्ञान से.....।।5।।

त्याग तपस्या ऐसी तुमरी गुरुकुल रूप बनाया है,
चन्दनबाला जैसे बनने ब्राह्मी आश्रम पाया है,
ब्राह्मी और सुन्दर बनने जिसमें शिक्षा मिलती है,
कालान्तर में आगे बढ़कर गुरु से दीक्षा मिलती है,
गुरुवर भाव बनाये रखना हम सबके उद्धार के,
हमको ज्ञान से.....

"ललाम चाम वाले
वाम चाल वाले होते हैं
बाहर से कुछ
विमल कोमल रोमवाले होते हैं।
और भीतर से कुछ
समल कठोर कौम वाले होते हैं।"
"सरिता तट की माटी
अपना हृदय खोलती है
माँ धरती के सम्मुख:
स्वयं पतिता हूँ
और पतिता हूँ औरों" से
---अधम पापियों से
पद दलिता हूँ, माँ!
इसका उत्थान कब होगा माँ!

मूकमाटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

..... ज्ञान सिखा देना

विद्यासागर गुरुवर हमें ज्ञान सिखा देना,
मझधार में है नैया उसे पार लगा देना।

जबसे देखा गुरुवर, आनन्द हुआ मन में,
है धन्य भाग गुरुवर, खुशियाँ है जन-जन में,
भूले हम मारग में, हमें राह बता देना।
मझधार में.....

विद्या का सागर है, गहरायी बड़ी भारी,
जो खोजता है इनको, बनता समता धारी,
हम मोह नींद सोये हमें आज जगा देना।
मझधार में.....

कर्मों ने घेरा है, यहां छाया अन्धेरा है,
कोई भी नहीं मेरा, भव-भव का फेरा है,
है कर्म हमें घेरे, कर्मों को भगा देना।
मझधार में.....

'मूकमाटी'

बता दो माँ?
इस पर्याय की
इति कब होगी?
इस काया की
च्युति कब होगी?
बता दो माँ मुझे
इसका जीवन यह
उन्नत होगा या नहीं
अनगिन गुण पाकर
अवनत होगा, या नहीं
कुछ उपाय करो माँ!
खुद अपाय हरो माँ!
और सुनो, बिलम्ब मत करो
पद दो, पथ दो
पाथेय भी दो माँ!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु-स्तुति

पाप पंथ परिहरो, मोक्ष पंथ पग धरो।
अभिमान नहीं करो, निंदा को निवारी है।।
छोड्यो हो संसारी संग, ज्ञानी थाकी राख्यो रंग।
सुमति को करो संग, बड़ो उपकारी हैं।।
मुनिमन निर्मल, जैसा है गंगा का जल।
काटत कर्म बंध, सप्त तत्व धारी है।।
संयम की करें जप, बारह विधि धरे तप।
ऐसे मुनिराज जी को, वंदना हमारी है।।

आओ बच्चे हम सीखें

पुष्पों, से तुम हंसना सीखो, भौंरों से तुम गाना।
सूरज की किरणों से सीखो, जगना और जगाना।
वायु के झोंकों से सीखो, बढ़ना और बढ़ाना।
मेहंदी के पत्तों से सीखो, पिस कर रंग चढ़ाना।
सुई और धागे से सीखो, बिछुड़े बन्धु मिलाना।
दूध और पानी से सीखो, मिलकर प्रेम बढ़ाना
वृक्षों की डाली से सीखो, फल आये झुक जाना।
संतों की वाणी से सीखो, अन्तर्ज्योति जलाना।
चौरासी के बन्धन काटो, जीवन सफल बनाना।
कहे गुरुवर धर वेष दिगम्बर, कर्म काट शिव जाना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीको लगे गुरु द्वारा—

नीको लगे गुरु द्वारा हमें तो बड़ो नीको लगे
फीको लगे घर बारा हमें तो बड़ो फीको लगे।।

नासा दृष्टि पर है धारे, पदमासन में लागे प्यारे
भेष दिगम्बर धारा हमें तो बड़ो नीको लगे

मधुर मधुर मुस्कान है इनकी
वाणी अमृत झरती इनकी
हमने तो तन मन बारा---- हमें तो बड़ों.....

समता में रहना सिखलाया
ममता से हटना सिखलाया
भजन बिना नर फीको-- हमें तो बड़ो नीको लगे

भव सागर में नाव हमारी
राग द्वेष की लहरी सारी
सेवक की नैया संवारा--- हमें तो बड़ो नीको लगे

"दुःख की वेदना में
जब न्यूनता आती है
दुःख भी सुख सा लगता है
और यह
भावना का फल है
उपयोग की बात?"

'मूक-माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुनि दिगम्बर रचते स्वयंवर....

(परम पू. 108 मुनि श्री नियमसागर जी)

मुनि दिगम्बर रचते स्वयंवर
कठिन तपस्या करते अचल हैं।
माता पिता सब सगे संबधी
अपनी गरज के गरजी है चंदी
बन के विरागी, ममता भी त्यागी,
कठिन तपस्या..... ।। 1 ।।
मिट्टी समझकर अपने वदन को,
त्यागा है जग सारा मुक्ति वरण को
छवि निराली सोहे ये प्यारी,
कठिन तपस्या करते अचल हैं।। 2 ।।
मिथ्या ममता का अंधियारा छाया
दूर करो गुरु हमसे ये माया।
संत बनें बस अन्त सुधारा।
कठिन तपस्या करते अचल हैं।। 3 ।।

प्रणाम 'मुनि श्री क्षमासागर जी'

"वेषभूषा
जिसने रख दी उतार
अस्त्र आयुध से
जो हुआ पार
देखकर लगा उसे
दिगम्बर हो जाना
अपने आप में है
अपना श्रृंगार

सर्व मैंत्री, सर्व प्रेम
और प्रतिकार
लहराता है
प्रतिक्षण जिसमें
करुणा का पारावार
प्रणाम उसे
मेरे
बारम्बार"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परम दिगम्बर मुनिवर देख्यो

परम दिगम्बर मुनीवर देख्यो हैयु हरखी जाय छै।
आनन्द उछड़ी जाय छै।।
वास जेनो वन उपवन मा, गिरी शिखर के नदी तटे
वास जेनो चित्त गुफा मा, आनन्द आतम मा बसे छै।।1।।
परम दिगम्बर.....
कंचन कामिनिनी ना त्यागी महातपस्वी ज्ञानी ध्यानी
कामानीनी कायानी माया ना त्यागी, तीन रतनधारी भंडारी।।2।।
परम दिगम्बर.....
तारण तारण मुनीश्वरो ना पावन चरणों मा नमूं छूं।
शीतल मूर्ति सौम्य मुद्रा, आनन्द धारा मां बहू हूं।।3।।
परम दिगम्बर.....
चाह नहीं आ राज्यनी ना, चाह नहीं रमणी तणी।
चाहज उर मा एक बसे छै, शिव रमणी बरखा तणी।।
परम प्रतापी संत ने निरखी-2 हैयु हरखी जाय ।।4।।
हो, 2-2 आनन्द उछड़ी जाय छै।

The self is different from matter, matter from the self this is the quintessence of all the compilations of wisdom; all the rest of knowledge is but an amplification of this!
I am not subject to death; then what should I fear death for? Nor am I subject to disease, then, what can cause me pain? I am not a child; I am not an old man; nor am I a youth : all these appertain to the flesh (matter)!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"अभिनन्दनीय गुरुवर"

हे मोक्षमार्गी गुरुवर
कल्याणकारी गुरुवर
हे वंदनीय गुरुवर
अभिनंदनीय गुरुवर
जीवन सुमन चढ़ाकर
आराधना करेंगे।
तेरी जनम जनम भर
हम वंदना करेंगे
हे मोक्ष मार्गी गुरुवर..... ।।1।।
पग-पग पे अहिंसा का
जो दीप जल रहा है।
आलोक का पथिक जो
अविराम चल रहा है।।
विश्वास है कि पल भर
रुकने उसे न देंगे।
उस धर्म की शिखा को,
ज्योतित सदा रखेंगे
हम वंदना करेंगे
हम अर्चना करेंगे।
हे मोक्षमार्गी गुरुवर
कल्याणकारी गुरुवर
हे वंदनीय गुरुवर
अभिनंदनीय गुरुवर।।

'मूक-माटी'

"किसी कार्य को करते समय
अनुकूलता की प्रतीक्षा करना
सही पुरुषार्थ नहीं है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु वंदना

.....कैसे अदा करेंगे

कैसे अदा करेंगे
उपकार हम तुम्हारे
हम तो बने सितारे
बस आपके सहारे
तन को रचा सम्हारा
माता पिता ने मेरे।
जीवन सम्हारा तुमने
भर ज्ञान उर हमारे।।
कैसे अदा करेंगे---
तुम देवता से बढ़कर
मेरे लिये हो ईश्वर।
चरणों में शीश मेरा
हे ईश जी तुम्हारे।
जब तक हैं हम जमीं पर
विस्मृत न कर सकेंगे
पथ की प्रदीप मेरे
गुरूदेव हो सहारे।।
कैसे अदा करेंगे---
तुमसे मिला है सब कुछ
तुमको क्या भेंट दू मैं
सूरज के आगे जुगनू की
बात क्या करूं मैं।
जीवन सजाने वाले
बस इतनी आरजू है
नजरें न मोड़ लेना
दर से कभी हमारे।।
कैसे अदा करेंगे उपकार हम तुम्हारे
हम तो बने सितारे गुरु आपके सहारे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु–गरिमा

-----तूने कर दिया कमाल

सम्यक् चरित्र ज्ञान की जलती हुई मसाल।
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।

कर्नाटक प्रदेश जिला बेलगांव में,
मल्लप्पा श्रीमति जनक जननी की छांव।
दो हजार तीन का जब चल रहा साल,
आसोज पूर्णिमा जन्म दे हो गई निहाल।
विद्याधर घर सुनाम से बीता सुबाल्य काल,
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।1।।

वाणी तुम्हारी काटती रागादि मोह जाल,
पाया समीप जिसने वही हो गया निहाल!
लहरा रहा अध्यात्म का सागर महा विशाल,
हे ज्ञान मूर्ति क्या कहूं, तेरे गुणों का हाल।
सारा कुटुम्ब एक रंग और एक चाल,
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।2।।

रुचि आत्म ज्ञान में जगी, आया तभी विराग,
गुरु ज्ञान के सागर मिले, वे धन्य महाभाग।
विद्या चरित्र ज्ञान मिले, सोना हुआ सुहाग,
हीरा चढ़ा खराद पर निकला अपूर्व भाग।
बनकर श्रमण निकल पड़े ज्यों उदित सूर्य भाल,
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।3।।

जो अल्प वय में आपने पाया सु आत्म ज्ञान,
वह है अचिन्त्य ज्ञान का क्षयोपशम महान।
आचार्य तुम्हारे गुणों का क्या करें वखान,
पद रज पड़ी वह क्षेत्र धन्य हो गया जहान।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस युगल पाद पद्म में यह नंमित रहा भाल,
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।4।।

शास्त्रानुकूल आपकी चर्चा महान है,
शुद्धोपयोग वीतराग आत्म ध्यान है।
यशकीर्ति लाभ की किंचित इच्छा न जहां है,
हे प्रशम मूर्ति आपको शत्-शत् प्रणाम है!
यह भावना है तुम जियो श्रीमत् हजार साल,
हे सदलगा के संत तूने कर दिया कमाल।।5।।

कौन किसके लिए :-
भोग पड़े हैं यहीं
भोगी चला गया,
योग पड़े है यही
योगी चला गया,
कौन? किसके लिए
धन जीवन धन के लिए?
मूल्य किसका
तन का या वेतन का
जड़ का या चेतन का?

सार्थकता : -
सन्त समागम की
यही तो सार्थकता है कि
संसार का अंत दिखने लगता है।
समागम करने वाला भले ही
तुरन्त संत बने या न बने,
इसमें कोई नियम नहीं है
किन्तु वह संतोषी अवश्य बनता है।
सही दिशा का प्रासाद ही,
सही दिशा का प्रसाद है।

परमार्थ ज्ञानः-
ज्ञान का पदार्थ की ओर
लुढ़क जाना ही
परम आर्त पीड़ा है
और ज्ञान में पदार्थ का
झलक आना ही
परमार्थ क्रीड़ा है।
एक दीनता के वेष में है
हार से लज्जित है
एक स्वाधीनता के देश में है
सार से सज्जित है।

सम्प्रेषणः-
बिना बिखराव
उपयोग की धारा का
दृढ़ तटों से संयत
सरकन शीला सरिता सी
लक्ष्य की ओर बढ़ना ही
सम्प्रेषण का सही
स्वरुप है।

'मूक-माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'हे जैन-जगत के श्रेष्ठ सन्त'

"मुनि श्री 108 प्रमाण सागर जी महाराज"

हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त
युग-युग चमको तुम दिग् दिगन्त।

इस युग में तुम अवतीर्ण हुए जिन धर्म पताका फहराने,
जन जन के मन में समा गये सम्यक् पथ को है दर्शाने।
मानवता का पाठ पढ़ाने तुम हो कितने महिमा वन्त,
हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त---।1।।
होकर निज में तन्मय तुम योगासन धर कर रहे ध्यान,
जन्मों का अज्ञान हटाकर बांट रहे हो जग को ज्ञान।
आत्मध्यान के रसिक बने, तुम हो सच्चे गुरुवर निर्ग्रन्थ
हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त----।2।।
जहाँ धर्म से शुष्क धरा थी, वहाँ धर्म का स्रोत बहाया,
जहाँ भटकते हुए प्राण थे, उन्हें ज्ञान का पन्थ दिखाया।
आच्छादित अज्ञान तिमिर हर, किया जगत को ज्योतिवन्त
हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त।3।।
अध्यात्म और आचरण बीच, तुम अद्भुत योग बना रहे,
मूलाचार और समयसार अपनी चर्या से दिखा रहे।
सब ग्रन्थ छोड़ निर्ग्रन्थ हुए जीवन ही खुद बन गया ग्रन्थ,
हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त।4।।
हम तरुण साधकों की तुमने कितनी बड़ी संख्या है जोड़ी,
बुन्देलखण्ड की ऊसर भू-उर्वरा बनाकर के छोड़ी।
मुनि परम्परा को धन्य किया जिन शासन है तुमसे जयवन्त
हे जैन जगत के श्रेष्ठ सन्त।5।।
युग-युग चमको तुम दिग्दिगन्त।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

. . संसार सिंधु के तुम हो किनारे

श्री विद्यासागर जी, गुरुवर हमारे, संसार सिंधु के तुम हो किनारे-2
तू ज्ञानसागर की पहली लहर है, जाना कहाँ है, ये तुझको खबर है
हमको भी ले चल मुक्ति की मंजिल, जीवन की नैया है तेरे सहारे।।1।।
श्री विद्यासागर. . . . . .

तुम वीतरागी हो वैराग्यदायी,
श्री जैन दर्शन की महिमा बताई।
लाखों को तारा हमने पुकारा, आवाज सुन लो ए गुरुवर हमारे।।2।।
श्री विद्यासागर. . . . . .

तुम हो अहिंसा धरम के मसीहा,
तुम स्वाति की बूंद मैं हूँ पपीहा।
हमको जिला दो, हमको पिला दो, अध्यात्म अमृत वचन ये तुम्हारे।।3।।
श्री विद्यासागर. . . . . .

सम्यक्त्व समता के आलय तुम्ही हो,
माँ भारती के हिमालय तुम्ही हो।
पथ तुमसे पावन उपकारी जीवन, हम अश्रु जल से चरणा पखारें।।4।।
श्री विद्यासागर. . . . . .

ये मूकमाटी जो तुमने लिखी है,
आत्मा की अनुभूति उसमें दिखी है।
हमको मिलालो हमको सम्हालो,
हम सब नदी हैं सागर किनारे।।5।।
श्री विद्यासागर .....

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

----मुझे तेरा शरण मिल गया

(तर्ज-मेरा जीवन कोरा कागज)

मुझे पावन गुरू तेरा शरण मिल गया।
मेरा मुरझाया हृदय आज खिल गया।

चारो गतियों में भ्रमा हूं मिल सका नहीं चैन-2
लाख चौरासी भटकता हो रहा बेचैन-2
मेरा यह अनमोल जीवन व्यर्थ बह गया
मेरा मुरझाया हृदय।1।।

आज मुझको हो रहा है, हे प्रभु यह ज्ञान-2
आप ही केवल सहाई, दो मुझे सद् ज्ञान-2
धर्म बिन पापों का डेरा सिर पे रह गया
मेरा मुरझाया हृदय।2।।

पाप से बचते रहे हम चाह यह मेरी-2
धर्म की आराधना हो राह यह मेरी-2
हे गुरू तेरे चरण का दास बन गया
मेरा मुरझाया हृदय।3।।

आयी हूं तेरी शरण में और न कोई चाह-2
भव भ्रमण से, छूट जाऊं पाऊं मुक्ति राह-2
तुम सा बन जाऊं यही अरमान रह गया।
मेरा मुरझाया हृदय।4।।

मूक-माटी

पथ पर चलता है
सत्पथ-पथिक वह
मुड़कर नहीं देखता
तन से भी, मन से भी

"विगत को भूलो, आगत में आओ, अनागत का स्वागत करो।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

----तकदीर बदल जाये

गुरूवर तेरे चरणों की मुझे धूल जो मिल जाये।
चरणों की रज पाकर तकदीर बदल जाये---

मेरा मन बड़ा चंचल है इसे कैसे मैं समझाऊं।
इसे जितना भी समझाऊँ उतना ही मचल जाये।
गुरूवर तेरे चरणों की----।।1।।
मेरी नाव भंवर में है इसे पार लगा देना।
तेरे एक इशारे पर मेरी नाव उभर जाये।
गुरुवर तेरे चरणों की------।।2।।
नजरों से गिराना न चाहे कितनी सजा देना।
नजरों से जो गिर जाये वो कैसे संभल पाये।
गुरुवर तेरे चरणों की--------।।3।।
बस एक तमन्ना है गुरु सामने हो मेरे।
गुरु सामने हों मेरे चाहे प्राण निकल जायें।
गुरुवर तेरे चरणों की मुझे धूल जो मिल जाये।।4।।
चरणों की रज पाकर तकदीर बदल जाये

मूक-माटी

"ऋषि सन्तों का सदुपदेश-सदादेश हमें यही मिला
कि पापी से नहीं, पाप से-पंकज से नहीं
पंक से घृणा करो! अयि आर्य!
नर से नारायण बनो
समयोचित कर
कार्य"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु वंदना

(---दे दो आसरा)

मेरे श्री विद्यासागर दे दो आसरा।
आप ही दिखा दो मुझे भूला रास्ता।।

दीन दुखियों के सपनों की तकदीर हो,
इस नये दौर के आप महावीर हो।
आप से पड़ा है मुझे फिर वास्ता।
आप ही दिखा दो-----।1।।
पूजनीय वंदनीय आप संतो में,
आन पड़े हैं हम तेरे चरणों में।
पापियों ने देखो कैसा किया माजरा।
आप ही दिखा दो-----।2।।
भावनाओं के तुम इक आकाश हो,
जिसका कोई नहीं उसके विश्वास हो।
भक्तों की जुड़ी है स्वामी तुमसे आस्था।
आप ही दिखा दो-----।2।।
मेरे श्री विद्यासागर

'मूक-माटी'

बात का प्रभाव जब
बलहीन होता है
हाथ का प्रयोग तब
कार्य करता है
और
हाथ का प्रयोग जब
बलहीन होता है
हथियार का प्रयोग तब
कार्य करता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"कलयुग के महासंत"

गिरती हुई इस कौम को, तूने लिया सम्हाल।
आंधी में भी जलती रही गुरुवर तेरी मशाल।
कलयुग के महासंत तूने कर दिया कमाल
गिरती हुई इस कौम को तूने लिया सम्हाल।।1।।
कलयुग के.....।।1।।

तूने अंधेरी रात में, दीपक जला दिये।
धरती चमन बना दी, गुलिस्ता खिला दिये।।
मरते हुये हजारों ही इंसा, जिला दिये।
गुरुवर तुम्हारी शान का हम, क्या कहेंगे हाल।।
कलयुग के .....।।1।।

गुरुवर तू महावीर का है सच्चा सिपाही।
तूने धरम की आन पे बाजी है लगाई।।
भगवान की वाणी तूने दुनिया को सुनाई।
भक्तों को बचाने के लिये बन गया तू ढाल।
कलयुग के .....।।2।।

तूने जिधर नजर की, उधर राह बन गई।
दुखियों की आह, तेरे दिल की आह बन गई।।
इंसान को तेरे चरण की, चाह बन गई।
लाखों बनाये जैन गुरु किया है कमाल।।
कलयुग के .....।।1।।

गुरुवर तुम्हारे हाथ की, छाया जिसे मिली।
जीवन की नांव बहती हुई, मौजों पर चल पड़ी।।
कर्मो के बंध टूट गये, मुक्ति भी मिली
हम हैं शरण तुम्हारी, गुरु डाल दो कृपाल
कलयुग के .....।।1।।

तुम किसी की गल्तियाँ क्यों देखते हो, भगवान ने
तुम्हें न्यायाधीश बनाकर थोड़े ही भेजा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भजन- कठिन साधना संयम तप में---

कठिन साधना संयम तप में बीती भरी जवानी है
विद्याधर से विद्यासागर, तक की अमर कहानी है
सारी दुनिया की सुंदरता, पग-पग पर शरमाती है
जाने क्या आकर्षण इनमें, दुनिया दौड़ी आती है
हो निशल्य इस महाव्रती ने कर्मो को चकचूर किया
लौकिक सुख की इच्छाओं को वन सम्यक्त्वी छोड़ दिया
शोभायमान तपता शरीर इस, परम दिगम्बर मूरत का
दर्शन कर लो सभी मुमुक्षु, अविरल चलते तीरथ का
नहीं आज तक साधु ऐसे, देखे अपने जीवन में
भक्त समर्पण कर देते हैं सरबस जिनके चरणों में
नहीं लेखनी लिख सकती है इस वैरागी की गाथा
नहीं उसे गा सकती वाणी, झुका रहे अपना माथा
जैन धर्म की स्वर्णिम गाथा गूंजी पंचम काल में
खड़े हिमालय का प्रतीक है, भारत मां के भाल पे
ऐसे गुरुवर आज पधारे, धन्य हुआ पश्चिम बंगाल
कोटि-कोटि पुष्पों से जिनका, स्वागत गाती ये जयमाल
विद्यासागर जी ओ सागर जिनकी जोत अब आई है
अखिल विश्व में जैनी साधु की महिमा दुहराई है।
आचार्य श्री विद्यासागर जी . . . . . .।

भावना-शतक

हे ईश धीश मुझ में बल बोधि डालो,
कारुण्य धाम करुणा मुझमें दिखाओ।
देहात्म का बस विभाजन तो करुँगा,
शीघ्रातिशीघ्र सुख सागर तो बनूँगा।।

ये साधु सेवक कहो मिलते कहाँ है?
जो जातरूप धरते जग में अहा है।
प्रत्येक भागे मणि से कब शोभता है,
प्रत्येक नाम कब मौलिक धारता है।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आई पूनम की ये रात आई

आई आई पूनम की ये रात आई
खुशियां उमंगे भी साथ लाई शुभ रात आई
मुस्कातीं गगन में चांदनी जैसे गाये मधुर कोई रागनी
लगी ऐसी लगन, गाये होकर मगन
तेरे चरणों में भक्तों की टोली आई,
आई . . . . . .।
आज लागा पारस जी का मेला, है कितनी सुहानी ये बेला
सजा सजा ये उद्यान, गाये सब मंगलगान
इस उपवन की शोभा है, मन आई
आई . . . . . .।
आज छलके हैं मन की गागर, आये आंगन मुनि विद्यासागर
करे स्वागत अपार सजा ये तोरण द्वार
बजे भक्तों के गीतों की शहनाई
आई . . . . . .।

यह दुनिया दो दिन का मेला, जो आवे सो जावे
जीवन भर सुलगावे चिन्ता, मरत चिता सुलगावे।
बिजली जैसी जीवन लीला, चमके और नशावे,
पुत्र जन्म तो होय सबेरे-सांझ चिता जल जावे।।
तन पिंजड़े से प्राण पखेरू, जब बाहर उड़ जावे,
घरवाली द्वारे तक आवे, बेटा अग्नि लगावे।
रोने वाले रोते जावें जाने वाला जावे,
सुन्दर काया भी मरघट में राख राख हो जावे।।
आशा पल पल बढ़ती जावे आयु घटती जावे।
काया निशदिन जर्जर होवे, माया बढ़ती जावे।
आज सरीखा मंगल अवसर कल आवे ना आवे,
किधर जिन्दगी के किस डग पर क्या घटना घट जावे।

विराग - भावना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भजन – चमका भाग्य सितारा है

नव प्रभात की नई किरण से, स्वर्णिम हुआ उजाला है
मुनिवर के शुभ चरण पड़े अब चमका भाग्य सितारा है।
मंगलमयी प्रभाती गाओ मंगल दीप सजाय के
शत्-शत् वंदन करो मुनि को अंतर भाव जगाय के
आज समय ने ली अगड़ाई फिर से तुम्हें पुकारा है
मुनिवर के शुभ चरण पड़े अब चमका भाग्य सितारा है।1।।
शाश्वत सुख का दर्शन जिनके रग-रग का श्रृंगार है
समता के भावों का सागर-अजर अमर निर्विकार है
विद्या के सागर में जो डूबा उसको मिला किनारा है
मुनिवर के शुभ चरण पड़े अब चमका भाग्य सितारा है।2।।
चंदन की सौरभ जिनके पावन चरणों से झरती है
दशों दिशायें जिस मुनिवर का नित अभिनंदन करती है
चरण धूलि अब माथ पड़े यह परम सौभाग्य हमारा है
मुनिवर के शुभ चरण पड़े अब चमका भाग्य सितारा है।3।।

भूचुम्बी द्वार

आचार्य श्री

प्रभु के
विभु त्रिभुवन के
निकट जाना चाहते हो तुम...
उस मन्दिर में जाने
टिकिट पाना चाहते हो तुम
वहां जाना बहुत विकट है
मानापमान का
अवसान! अनिवार्य है, सर्व प्रथम...।

वहाँ विराजमान हैं भगवान
जिस मन्दिर का
चूल-शिखर!
गगन चूम रहा है
और प्रवेश द्वार---
धरती सूंघ रहा है
वहाँ जाना बहुत विकट है,
डूबो मन लगाओं डुबकी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आर्यिका 105 दृढ़मति माताजी

मन एक मंदिर है

मन एक मंदिर है, मन एक मंदिर है।
भगवन की जिसमें होती है पूजा ये भक्ति भरा घर है।।
हर धड़कन है प्राणी का जीवन मौत जो आई रुक गई धड़कन।
मौत मिटा दे चाहे जीवन, जीव तो अमर है।
मन एक ..... ।।1।।

इस दुनिया में कोई न अपना सारा जहाँ का झूठा है सपना।
गुरूवर का हर वचन कहता, ये जग नश्वर है।
मन एक ..... ।।2।।

हम भक्ति के पुष्प चढ़ायें, और निष्ठा के दीप जलायें
श्वासों का हर तार पुकारे, ये पूज्य प्रभुवर हैं।
मन एक ..... ।।3।।

हर श्वासें हो आरती वंदन, ध्यान में जिनके हो जाते दर्शन।
भक्ति भरा संगीत गाता, ये विद्यासागर हैं।
मन एक ..... ।।4।।

इस जग के कण कण में देखा, फिर भी ना पाया वह जो सोचा
तेरे दरस की आश पुकारे, दरशन की तड़फन है।
मन एक ..... ।।5।।

"उत्कृष्ट परिणाम तभी प्राप्त होते हैं, जब उत्कृष्ट व्यक्तियों का दर्शन किया जाये।"

बात मत कर

कोरी आस्था की बात मत कर किन्तु आस्था से बात कर
कोरी ध्यान की बात मत कर किन्तु ध्यान से बात कर
कोरी ज्ञान की बात मत कर किन्तु ज्ञान से बात कर
कोरी संयम की बात मत कर किन्तु संयम से बात कर"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भजन – सुन ले ओ भाई

सुन ले ओ भाई मुनि की तकड़ाई
सागर है ये ज्ञान के विद्यासागर महाराज जी।
विद्याधर से विद्यासागर बने श्री मुनिराज जी
कर्नाटक के बेलगांव में जन्म हुआ श्री मुनिवर का
मुनिवर के घर फूल खिला जो अंश लिये था ईश्वर का
सौरभ उसकी पहली धरा पर
वो बालक विद्यासागर थे जो सन्मुख, सबके आज भी
सुन ले ----------
मुनियों के परिवार में वचपन बीता और जवान हुये
हिन्दी संस्कृत किया अध्ययन वेद पढ़े विद्वान हुये
ज्योति जगी जब ज्ञान की मन में
मुक्ति का पथ दिखलाये श्री ज्ञानसागर महाराज जी
सुन ले ----------
तीस जून उन्नीस सौ अड़सठ, धरा दिगम्बर भेष जी
चार साल की कठिन तपस्या में बदला परिवेश जी
मुनियों के आचार्य बने फिर
अपनी कठिन तपस्या से ये बन बैठे ऋषिराज जी
सुन ले ----------
दिव्य ज्योति दक्षिण से जागी, चहुँदिश हुआ उजाला है
वीतराग की सौम्य छवि को जिसने आज संभाला है
स्वागत करो जयकार से इनका
अखिल विश्व में जैनधर्म की गूंजी ये आवाज जी
सुन ले ----------

भोगी बनकर, भोग भोगना, भव बंधन का हेतु रहा
योगी बनकर,योग साधना भवसागर का सेतु रहा।
जैसा तुम बोओगे वैसा बीज फलेगा अहो सखे!
निम्ब वृक्ष पर सरस आम्र फल कभी लगे क्या अहो सखे!
"सुनीति शतक"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

108 आचार्य श्री गुरुवर प्रातः स्मरणीय श्री ज्ञानसागर मुनिराज के पावन चरणों में सादर श्रद्धांजलि

गुरो! दल दल में मैं था फंसा,
मोह पाश से हुआ था कसा।
बंध छुडाया दिया आधार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।1।।

पाप पंकसे पूर्ण लिप्त था,
मोह नींद में सुचिर सुप्त था।
तुमने जगाया किया उपचार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।2।।

आपने किया महान् उपकार
पहनाया मुझे रतन् त्रय हार।
हुए साकार मम सब विचार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।3।।

मैनें कुछ ना की तव सेवा,
पर तुमसे मिला मिष्ट मेवा
यह गुरुवर की गरिमा अपार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।4।।

निज धाम मिला, विश्राम मिला,
सब मिला, उर समकित पद्म खिला।
अरे! गुरुवर का वर उपकार,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।5।।
अंध था, बहिर था, था मैं अज्ञ,
दिये नयन व करण बनाया विज्ञ।
समझाया मुझको समयसार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।6।।

मोह-मल घुला, शिव द्वार खुला,
पिलाया निजामृत घुला, घुला।
कितना था गुरुवर उर उदार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।7।।

प्रवृत्ति का परिपाक संसार
निवृत्ति नित्य सुख का भंडार।
कितना मौलिक प्रवचन तुम्हारे,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।8।।

रवि से बढ़कर है काम किया
जन गण को बोध प्रकाश दिया।
चिर ऋणी रहेगा यह संसार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।9।।

स्व पर हित तुम लिखते ग्रन्थ
आचार्य उवझाय थे निर्ग्रन्थ।
तुम सा मुझ बनाया अनगार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।10।।

इन्द्रिय दमन कर, कषायें शमन,
करते निशदिन निजमें ही रमण।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षमा था तव सुरम्य श्रृंगार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।11।।

बहु कष्ट सहे, समन्वयी रहे,
पक्ष पात से नित दूर रहे।
चूंकि तुममें था साम्य-संचार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।।12।।

मुनि गावे तव गुण-गण-गाथा,
झुके तुम पद में मम माथा।
चलते, चलाते समयानुसार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।13।।

तुम थे द्वादश-विध-तप तपते,
पल, पल जिनप नाम जप जपते।
किया धर्म का प्रसार, प्रचार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।।14।।

दुर्लभ से मिली यह 'ज्ञान' सुधा,
'विद्या' पी इसे, मत रो मुधा।
कहते यों गुरुवर यही 'सार',
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।।15।।

व्यक्तित्व की सत्ता मिटादी,
उसे महासत्ता में मिलादी।
क्यों न हो प्रभु से साक्षात्कार
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।16।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करके दिखा दी सल्लेखना,
शब्दों में न हो उल्लेखना।
सुर नर कर रहे जय जयकार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।।17।।

आधि नहीं थी, थी नहीं व्याधि,
जब आपने ली, परम समाधि।
अब तुम्हें क्यों न वरे शिवनार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।18।।

मेरी भी हो इस विध समाधि,
रोष, तोष नशे, दोष उपाधि।
मम आधार सहज समयसार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।19।।

जय हो! ज्ञान सागर ऋषिराज,
तुमने मुझे सफल बनाया आज।
और इक बार करो उपकार,
मम प्रणाम तुम करो स्वीकार।।।20।।

अपनी आत्मा को कुन्दन बना लेते हैं जो लोग,
महानता का चन्दन लगा लेते हैं जो लोग,
युग झुकता है उनके श्री चरणों में,
रत्नों जैसी मति बना लेते हैं जो लोग।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इंद्रियों में सुख मानना एक संपन है।
इन्हीं में डूबे रहना जिन्दा कफन है।
शांति को करते ये दफन हैं
शांति प्रदाता गुरु को मेरा नमन है।
काँटे हों या फूल, फर्क क्या पड़ता बोलो,
कुटिया हो या महल आँख भीतर भी खोलो।
माटी हो या स्वर्ण जागना तो भीतर है,
जो भीतर से जगा है, कौन उससे बढ़कर है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 5

शारदा वन्दन सौरभ

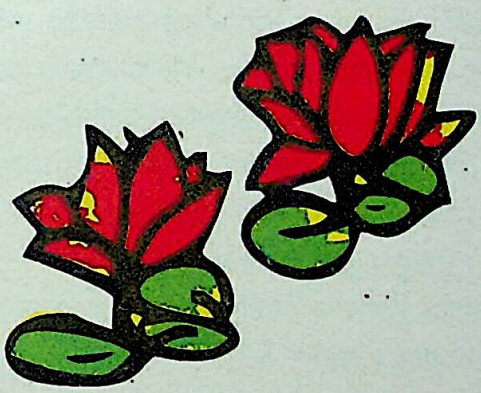

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक मङ्गलाचरण

ओं नमः सिद्धेभ्यः, ओं जय जय जय,
नमोस्तु! नमोस्तु!! नमोस्तु!!!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।
ओकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।।१।।
अविरल-शब्द-घनौघ-प्रक्षालित-सकल-भूतल-मल-कलङ्का।
मुनिभिरुपासित-तीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान्
अज्ञान-तिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।२।।
।। श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः।।

सकल-कलुष-विध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्म-सम्बन्धकं, भव्य-जीव-मनः प्रतिबोध-कारकमिदं शास्त्रं श्री (ग्रन्थ का नाम) नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तर-ग्रन्थ-कर्तारः श्रीगणधर-देवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोनुसारमासाद्य श्री (आचार्य का नाम) आचार्येण विरचितं, श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु।

मंगल भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो, जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्।।

अर्थ- बिन्दुसंयुक्तं (बिन्दु सहित) ओकार (ओकारको) योगिनः (योगी) नित्य (सर्वदा) ध्यायन्ति (ध्याते हैं) कामदं (मनोवांछित वस्तु को देने वाले) चैव (और) मोक्षदं (मोक्ष को देने वाले) ओंकाराय (ओंकार को) नमो नमः (बार-बार नमस्कार हो) अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलमलकलंका (घने शब्द [दिव्यध्वनि] रूपी मेघ-समूह से जिसने संसार सम्बन्धी समस्त पापरूपी मैल को धो दिया है) मुनिभिरुपासित-तीर्था (मुनिगण जिसकी तीर्थ के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूप में उपासना करते हैं ऐसी) सरस्वती (जिनवाणी) नः (हमारे) दुरितान् (पापों को) हरतु (नष्ट करो)।

येन- (जिसने) अज्ञान-तिमिरांधानां (अज्ञानरूपी अन्धेरे से अन्धे हुये जीवों के) चक्षुः (नेत्र) ज्ञानाञ्जनशलाकया (ज्ञान रूपी अंजन की सलाई से) उन्मीलितं (खोल दिये हैं) तस्मै (उस) श्रीगुरवे (श्री गुरु को) नमः (नमस्कार हो)। परमगुरवे (परम गुरु को) नमः (नमस्कार हो) परम्पराचार्यगुरवे (परम्परागत आचार्य गुरु को) नमः (नमस्कार हो)।

सकलकलुषविध्वंसकं (समस्त पापों का नाश करने वाला) श्रेयसां (कल्याणों का) परिवर्धकं (बढ़ाने वाला) धर्मसम्बन्धकं (धर्म से सम्बन्ध रखने वाला) भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकं (भव्यजीवों के मन को प्रतिबुद्ध-सचेत करने वाला) इदं (यह) शास्त्रं (शास्त्र) श्री (यहां पर उस शास्त्र का नाम लेना चाहिये जिसकी वचनिका करनी है। यथा (आदिपुराण) नामाधेयं (नामका है)।

अस्य (इसके) मूलग्रंथकर्तारः (मूल ग्रन्थ रचयिता श्री सर्वज्ञ देवाः (श्री सर्वज्ञदेव हैं) तदुत्तरग्रन्थकर्तारः (उनके बाद ग्रन्थों को गूंथने वाले) श्री गणधरदेवाः (गणधरदेव हैं) प्रतिगणधरदेवाः (उनके पश्चात् मुख्य आचार्य हैं) तेषां (उनके) वचोनुसारं (वचनों के अनुसार) आसाद्य (लेकर) श्री आचार्येण (श्री.....आचार्य ने) [यहां जिस ग्रन्थ के जो कर्ता हों उन आचार्य का नाम लेना चाहिये] विरचितं (रचा है)।

भगवान् वीरः (महावीर स्वामी) मंगलं (मंगल के कर्ता हों) गौतमोगणी (गौतम गणधर) मंगलं (मंगल कर्ता हों) कुन्दुकुन्दार्यो (कुन्दकुन्दस्वामी आदि आचार्य) मंगलं (मंगलकारी हों) जैनधर्मः (तथा जैनधर्म) मंगलं (मंगलदायी) अस्तु (होवे)। श्रोतारः (हे श्रोताओ!) सावधानतया (सावधानी से-ध्यान लगाकर) शृण्वन्तु (सुनिये)।

नोट- बाद में ग्रन्थ का मङ्गलाचरणपढ़कर स्वाध्याय करनी चाहिये।

स्वाध्याय के लिए उपयोगी कुछ ग्रन्थ

कथाग्रन्थ- पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, आदिपुराण, उत्तरपुराण, पांडवपुराण, पार्श्वपुराण, जीवन्धर चरित्र, प्रद्युम्न चरित्र आदि।

अन्य ग्रन्थ- रत्नकरण्डश्रावकाचार, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, परमात्म प्रकाश, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, समयसार, पंचाध्यायी आदि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"शारदा-स्तवन"

आचार्य श्री विद्यासागर जी कृत

वाणी जिनेंद्र कथिता दुःखहारिणी है।
संत्रस्त भव्यजन को सुखदायिनी है।।
तेरा करूं स्तवन मैं अयि अम्बदेवी।
तो शीघ्र ही बन सकूं निज आत्मसेवी।।1।।

अन्धे विमोह तम में भटके फिरे हैं।
कैसे प्रकाश बिन संवर भाव पाये।
हे शारदे! विनय से द्वय हाथ जोड़े।
आलोक दो! विषय को विषमान छोड़े।।2।।

पीयूष है विषय सौख्य विरेचना है।
पीते सुशीघ्र मिटती चिर वेदना है।।
भाई! जरा मरण रोग निवारती है
संजीवनी, सुखकरी जिन भारती है।।3।।

हे शारदे! अब कृपा करदे जरा तो।
तेरा उपासक खड़ा भव से डरा जो।।
माता! बिलंब करना मत, मैं पुजारी।
आशीष दो! बन सकूं बस निर्विकारी।।4।।

होके विलीन जिसमें मन मोद पाते।
संसारी जीव भव वारिधि तैर जाते।।
श्री जैन शासन रहे जयवंत प्यारा।
भाई! यही शरण जीवन है हमारा।।5।।

("दया का होना ही जीव विज्ञान का सम्यक् परिचय है।")

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शारदा-स्तुति

रचयिता-दिगम्बर जैनाचार्य, श्री विद्यासागर जी मुनि महाराज

जिन मुख पंकजसे निकली हो,
सविनय ऋषियों से बिखरी हो।
सकल लोक का हित हो, तम को
हरो शारदे! वर दो हमको।।1।।

मानव मन को सुधा पिलाती,
इह पर भव में सुधार लाती।
कोकिल कण्ठ रूप सलोना,
मम मुख में बस! बसो लसोना।।2।।

विषय दृष्टि की नागिन कंपती,
तुम गरुड़ानी प्रभु गुण जपती।
प्रभु पद पंकज रत मुझ अलि पर,
वीणा लेकर, करूणा कर कर।।3।।

सुरस-योग से लोहा नीला,
बनता जिस विध स्वर्णिम पीला।
मैं भी उस विध तव संगति से,
क्यों न बनूँ शुचि प्रभु सन्मति से।।4।।

वचनामृत पूरित तुम सर हो,
नमन युगल तव सुनय प्रखर हो।
मिथ्या आगम का उपहासा,
करे भारती यहाँ प्रकाशा।।5।।

धर्मामृत की वर्षा करके,
ताप हरौं मुझे हर्षा करके।
सुखमय जीवन अथाह मम हो,
धर्मामृत के प्रवाह तुम हो।।6।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यूँ मानूँ तव सर के सारे,
कुटिल कुटिलतम केश न काले।
तुम में आश्रय जब न पाई,
पाप पंक्तियों बाहर आई।।7।।

प्रशम भाव के भवन बनी हो,
भक्त बना तब भक्ति बनी यों।
भव मिट, शिव हो, रहे काम ना,
इस शिशु की बस यही कामना।।8।।

कमल हारते तुम दृग लख कर,
लसी शशी सी शुभे! सुधाकर!
हमें बता दो यदि ना यों हो,
तुमको लख मुनि प्रमुदित क्यों हो?।।9।।

तब मुख की आभा से जीती,
चन्द्र चाँदनी फिर भी जीती।
तभी शारदे! तुम पद सेवा,
पद नख मिष करती स्वयमेवा।।10।।

श्रवण युगल तब प्रमाण दी हैं,
कहता पर, मत प्रमाण नी है।
कहा गया यतियों से प्यारा,
प्रमाण जिनमत है आधारा।।11।।

कर्त्तव्यों में मेरा मन हो,
शिव पथ पर ही सदा चरण हो।
सरस्वती! तब सदय शरण हो,
मन्द मती का तुम्हें नमन हो।।12।।

"प्रत्येक व्यवधान का सावधान होकर सामना करना, नूतन अवधान को पाना है या यूं कहें कि अंतिम समाधान को पाना है।"

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनवाणी माता

जिनवाणी माता! जिनवाणी माता,
जन-जन की हो तुम, सन्मार्ग दाता।
अशरण जगत में, शरण की प्रदाता,
दुःखमय जगत में, सुख की हो धाता।
तुम्हारे चरण में, तुम्हारी शरण में,
आए हैं हम सब, शरण देना माता।।1।। जिनवाणी माता
हम हैं सभी के सभी है हमारे।
समझा था माता तुम्हारे बिना ये।
तुम्हारी कृपा से सद्ज्ञान पाया,
ना हम किसी के ना कोई हमारा।।2।। जिनवाणी माता
सच्चे प्रभु की सच्ची है वाणी,
गुणों से भरी है, दोषों से खाली
हमको भी भर दो, गुणों से हे माता,
हम सबके दोषो की तुम ही हो हर्ता।।3।। जिनवाणी माता
माता की महिमा गायें तो कैसे,
न हैं भाव पूरे न शब्द भी पूरे।
तुम्हारी ही भक्ति हमें देती शक्ति,
समीचीन मुक्ति की सच्ची हो दाता।।4।। जिनवाणी माता
जिनवाणी माता, जिनवाणी माता,
जन-जन की हो तुम सन्मार्ग दाता

"सारहीन विकल्पों से जीने की आशा को
विष ही मिल जाता है खाने के लिए
और चिरकाल से सोती कार्य करने की क्षमता
धैर्य धृति वह खोलती है अपनी आँख दृढ़ संकल्प की गोद में
मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे भारती माँ

पू. मनि श्री समता सागर जी

हे! भारती माँ! हे भारती माँ
तेरी उतारें सभी आरती माँ।
अर्हन्त भाषित ये जिनवाणी प्यारी
गणधर ऋषि और मुनियों ने धारी
जो तुमको ध्याते, सुख शांति पाते
जीवन की नौका को तू तारती माँ।।1।।
हे भारती माँ-------

तेरे श्रवण से, खुशी हम में छायी
नया बोध पाया, दिशा नव्य पायी।
दया धर्म संयम के पथ पर चलें हम,
अतः आज मिलकर करें आरती माँ।।2।।
हे भारती माँ-------

माँ तेरी महिमा को कैसे बताऊं
अल्पज्ञ हूं भक्ति से सिर झुकाऊं।
सद्ज्ञान का सूर्य तम को करे दूर
ज्योति सदा फैले भू भारती माँ।।3।।
हे भारती माँ-------

दया का कथन निरा है
और
दया का वतन निरा है
एक में जीवन है
एक में जीवन का अभिनय
अब तो-----
अस्त्रों, शस्त्रों, वस्त्रों
और कृपाणों पर भी
"दया धर्म का मूल है"
लिखा मिलता है
किन्तु
कृपाण कृपालु नहीं है
वे स्वयं कहते हैं
हम हैं कृपाण
हम में कृपा न।
'मूक-माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे शारदा माँ! शरण तेरी आये....

(तर्ज-वो देखो उधर आ रहे हैं सिपाही.....)

हे "शारदे मां! शरण तेरी आये, दुख से हैं व्याकुल करम के सताये
नहीं सार जग में न कोई हमारा, ओ माता तुम्हीं से मिले भव किनारा
तुम्हारे लिये मन समर्पित हमारा ओ.....

निजातम को भूले, हैं विषयों में फूले।
नही निज के झूले, कभी हमने झूले।।
आतम भवन में मिले सुख अपारा।
ओ माता.....।1।।

क्षमा की हो जननी, सरलता की खानी,
मृदुता की दानी, हो शुचिता से सानी।
धरम दीप से तुम मिटा दो अंधेरा।।
ओ माता.....।2।।

तप त्याग संयम मयी, सत्य वाणी।
अंकिंचन व ब्रह्म, धरम की बखानी।।
निरंतर बहे भूमि पर, धर्म धारा।
ओ माता.....।3।।

गुरु की कृपा से हे माँ! तुमको पाया।
आशीष दो सब मिटे कर्म हाला।।
जयवन्त वर्तो, अनेकांत प्यारा।
ओ माता.....।1।।

नमन हो, नमन हो, नमन हो हमारा
ओ माता तुम्हीं से मिले भव किनारा।।
तुम्हारे लिये मन समर्पित हमारा।
ओ माता.....।1।।

मूक-माटी

"निर्ग्रन्थ दशा में ही
हमारी उपास्य देवता
अहिंसा पलती है
पल-पल पनपती है
...बल पाती है।"

"विचारों के एक्य से
आचारों के साम्य से
संप्रेषण में , निखार आता है
वरना
विकार आता है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शारदा स्तुति - अज्ञानता से हमें तार देना.....

हे शारदे माँ! हे शारदे माँ! अज्ञानता से हमें तार देना-2
मुनियों ने समझी, गुणियों ने जानी,
शास्त्रों की भाषा, आगम की वाणी।
हम भी तो जानें, हम भी तो समझें
विद्या का फ़ल तो हमें मां! तू देना।।1।।

तू ज्ञानदायी हमें ज्ञान दे दे,
रत्नत्रय का हमें दान दे दे।
मन से हमारे, मिटा दे अंधेरे,
हमको उजालों का शिवद्वार देना।

तू मोक्षदायी ये संगीत तुझमें,
हर शब्द तेरा है हर भाव तुझमें।
हम हैं अकेले हम हैं अधूरे,
तेरी शरण हम, हमें तार देना।
हे शारदे माँ! हे शारदे माँ,
अज्ञानता से हमें तार देना।

"आँखों की पकड़ में
आशा
आ सकती है
परन्तु
आस्था का दर्शन
आस्था से ही सम्भव है
न आँखों से, न आशा से।"

"पथ पर चलता है सत्पथ
पथिक वह
मुड़कर नही देखता
तन से भी,
मन से भी।"

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनवाणी माता! दर्शन की बलहारियाँ

जिनवाणी माता! दर्शन की बलहारियाँ।।
जिनवाणी माता! दर्शन की बलहारियाँ।।
प्रथम देव अरहंत मनाऊं, गणधर जी को ध्याऊँ
कुन्द कुन्द आचार्य हमारे, तिनको शीश नवाऊँ।।
हे जिनवाणी------।1।।

योनि लाख चौरासी मांही घोर महा दुःख पायो
ता दुख दूर करन को माता, शरण तिहारी आयो।
हे जिनवाणी-------।2।।

जाने थारा शरणा लीना, अष्ट कर्म क्षय कीना
जामन मरण मेट के माता मोक्ष महा फल दीना।
हे जिनवाणी-------।3।।

बार बार मैं विनहुँ माता, मेहर मुझ पर कीजो
पारस दास की अरज यही है चरण शरण में लीजो।
हे जिनवाणी माता! दर्शन की बलहारियाँ
हे जिनवाणी-------।4।।

'भारतीय संस्कृति'

महामना जिस ओर
अभिनिष्क्रमण कर गये
सब कुछ तज कर वन वन गये
नग्न, अपने में मग्न बन गये
उसी ओर
उन्हें की अनुक्रम निर्देशिका
भारतीय संस्कृति है
सुख-शान्ति की
प्रवेशिका है?

मूक-माटी

'पश्चिमी सभ्यता'

पश्चिमी सभ्यता
आक्रमण कीनिषेधिका
नहीं है, अपितु.....
आक्रमण-शीला
गरीयसी है
जिसकी आँखों में
विनाश की लीला विभीषिका
घूरती रहती है
सदा-सदोदिता!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माता तू दया करके.....

माता तू दया करके कर्मों से छुड़ा देना।
इतनी सी विनय तुमसे चरणों में जगह देना।
माता आज मैं भटका हूँ माया के अंधेरे में,
कोई नहीं मेरा है, इस कर्म के रेले में,
कोई नहीं मेरा है, तुम धीर बंधा देना।।
इतनी सी विनय.....।।1।।
जीवन के चौराहे पर मैं सोच रहा कब से,
जाऊं तो किधर जाऊं, यह पूछ रहा तुम से
पथ भूल गया हूँ मैं तुम राह दिखा देना।
इतनी सी विनय.....।।1।।
लाखों को उबारा है, मुझको भी उबारो तुम,
मझधार में है नैया, उसको भी तिरा दो तुम,
मझदार में है नैया तुम पार लगा देना।
इतनी सी विनय.....।।1।।
माता तू दया करके कर्मों से छुड़ा देना।
इतनी सी विनय तुमसे चरणों में जगह देना।।

दुहिता

उभयकुल मंगल वर्धिनी
अभय लोक सुख सर्जिनी
स्व पर हित सम्पादिका
कहीं रहकर किसी तरह भी
हित का दोहन करती रहती
सो... दुहिता कहलाती है।।"

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर हिमाचल तैं निकसी जिनवाणी स्तुति

वीर हिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतम के मुखकुंड ढरी है
मोह महाचल भेद चली जग की जड़ता-तप दूर करी है।
ज्ञान पयोनिधि माही रली बहु भंग तरंगनि सो उछरी है
ता शुचि शारद गंग नदी प्रति मैं अंजुलि कर शीश धरी है।
या जग मन्दिर में अनिवार अज्ञान अंधेर छयो अतिभारी,
श्री जिनकी धुनि दीप शिखासम जो नहिं होत प्रकाशन हारी।
तो किह भांति पदारथ पांति कहाँ लहते रहते अविचारी
या विधि संत कहैं धनि हें धनि हैं जिन बैन बड़े उपकारी।।

"यथाकार तथाकार"

मैं यथाकार बनना चाहता हूँ
व्यथाकार नहीं।
मैं तथाकार बनना चाहता हूँ
कथाकार नहीं।
इस लेखनी की भी यही भावना है
कृति रहे, संस्कृति रहे
आगामी असीम कालतक
जागृत-जीवित-अजित!
सहज प्रकृति का वह
श्रृंगार श्रीकार
मनहर आकार से
जिसमें आकृत होता है
कर्त्ता न रहे, वह
विश्व के सम्मुख कभी भी
विषम-विकृति का वह
क्षार दार संसार
अहंकार का हुंकार से
जिसमें जागृत होता है
और हित स्व-पर का यह
निश्चित निराकृत होता है।

'मूक माटी'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खण्ड : 6

विविध विषय सौरभ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अब मैं मम मन्दिर में रहूंगा

आचार्य विद्यासागरजी

अमिट, अमित अरु अतुल, अतींद्रिय-
अरहंत पदको धरूंगा
सज, धज निजको दश धर्मों से-
सविनय सहजता भजूंगा।। अब मैं...

विषय-विषम-विष को तजकर उस-
समरस पान मैं करूंगा
जनन, मरण अरु जरा जनित दुख-
फिर क्यों वृथा मैं सहूँगा? ।। अब मैं...

दुख दात्री है इसीलिए अब-
न माया-गणिका रखूंगा
निसंग बनकर शिवांगना संग-
सानन्द चिर मैं रहूँगा।। अब मैं...

भूला, परमें फूला, झूला-
भावी भूल ना करूंगा
निजमें निजका अहो! निरन्तर-
निरंजन स्वरूप लखूंगा।। अब मैं...

समय, समय पर समयसार मय,
मम आतम को प्रनमूंगा।
साहुकार जब मैं हूं, फिर क्यों-
सेवक का कार्य करूंगा? ।। अब मैं...

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अब मैं मम मन्दिर में रहूंगा

आचार्य विद्यासागरजी

अमिट, अमित अरु अतुल, अतींद्रिय-
अरहंत पदको धरूंगा
सज, धज निजको दश धर्मों से-
सविनय सहजता भजूंगा।। अब मैं...

विषय-विषम-विष को तजकर उस-
समरस पान मैं करूंगा
जनन, मरण अरु जरा जनित दुख-
फिर क्यों वृथा मैं सहूँगा? ।। अब मैं...

दुख दात्री है इसीलिए अब-
न माया-गणिका रखूंगा
निसंग बनकर शिवांगना संग-
सानन्द चिर मैं रहूँगा।। अब मैं...

भूला, परमें फूला, झूला-
भावी भूल ना करूंगा
निजमें निजका अहो! निरन्तर-
निरंजन स्वरूप लखूंगा।। अब मैं...

समय, समय पर समयसार मय,
मम आतम को प्रनमूंगा।
साहुकार जब मैं हूं, फिर क्यों-
सेवक का कार्य करूंगा? ।। अब मैं...

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगंबर

आचार्य विद्यासागरजी

छिदजाय, भिदजाय, गलजाय, सड़जाय,
सुधी कहे फिरभी विनश्वर जड़काय।
करे परिणमन जब निज भावों से सब,
देह नश रहा अब मम मरण कहां कब ? ।।
तव न ये, सर्वथा भिन्न देह अंबर,
पर भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगंबर।।1।।

बन्ध कारण अतः रागादितो हेय,
वह शुद्धातम ही अधुना उपादेय,
'मेरा न यह देह' यह तो मात्र ज्ञेय,
ऐसा विचार हो मिले सौख्य अमेय।
दुख की जड़ आस्रव शिव दाता संवर,
पर-भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगंबर।।2।।

अब तक परमें ही तू ने सुख माना,
इस लिए भयंकर पड़ा दुख उठाना।
वह ऊंचाई नहीं जहां से हो पतन,
तथा वह सुख नहीं जहां क्लेश चिंतन।।
इस बार तो जिया, लख निज के अन्दर,
पर भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगंबर।।3।।

स्व-परबोध बिन तो! बहुत काल खोया,
हाय! सुख न पाया दुःख-बीज बोया।
"विद्या"-आंख खोल समय यह अनमोल,
रह निजमें अडोल अमृत-विष न घोल।
शुद्धोपयोग ही त्रिभुवन में सुन्दर,
पर भाव त्याग तू बन शीघ्र दिगंबर।।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा?

स्वरूप-बोध बिन सहता दुख निशिदिन,
यदि उसे पाता, तू बन सकता जिन।
नितनिजानुमनंन कर व्यामोह हनन,
चाहता न मरण यदि न जरा न जनन।
आशा-गर्त यह कदापि न भरेगा,
मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा?।।1।।

सुखदाता नहीं मात्र वस्त्र मुंचन,
दुखहर्ता नहीं मात्र केश लुंचन।
करे राग द्वेष जो धर नग्न-भेष,
वे अहो जिनेश! पावें न सुख लेश।।
आत्मावलोकन अरे! कब करेगा,
मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा?।।2।।

करता न प्रमाद, नहीं हर्ष विषाद,
लेता वही मुनि, नियम से निज-स्वाद।
सुमणि तज काच में, क्यों तू नित रमता?
पी मद, अमृत तज, क्यों भावमें भ्रमता?।।
निज-भक्ति-रस कब, तुझमें झरेगा?,
मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा?।।3।।

तज मूढ़ता त्रय, भज सदा रत्नत्रय,
यदि सुख चाहता, ले ले, झट स्वाश्रय।
अब "विद्या" जाग, अरे! शिव-पथलाग,
शीघ्र राग त्याग, बन तू वीतराग।।
कब तक लोकमें, जनम ले मरेगा?,
मोक्ष-ललना को जिया! कब वरेगा?!!4!!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भटकन तब तक भव में जारी

विषय-विषम-विष को तुम त्यागो,
पी निज सम रस को भवि! जागो।
निज से निज का नाता जोड़ो,
परसे निज का नाता तोड़ो।।
मिले न तब तक वह शिवनारी,
निज-स्तुति जब तक लगे न प्यारी।।1।।

जो रति रखता कभी न परमें,
सुखका बनता घर वह पलमें।
वितथ परिणमन के कारण जिय!,
न मिले तुझको शिव-ललना-पिय।।
जप, तप तब तक ना सुखकारी,
निज-स्तुति जब तक लगे न प्यारी।।2।।

सज, धज निजको दश धर्मों से,
छूटेगा झट अठ कर्मों से,
मैं तो चेतन अचेतन हितन,
मिले शिव ललन, कर यों चिंतन।।
भटकन तब तक भव में जारी,
निज-स्तुति जब तक लगे न प्यारी।।3।।

अजर अमर तू निरंजन देव,
कर्ता धर्ता निजका सदैव।
अचल अमल अरूप, अखंड,
चिन्मय जब है फिर क्यों घमंड?।।
'विद्या' तब तक भव दुख भारी,
निज-स्तुति जब तक लगे न प्यारी।।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बनना चाहता यदि शिवांगना-पति

कर कषाय शमन, पंच इद्रिय दमन,
नित निजमें रमण, कर स्वको ही नमन।
जिया! फिर भव में, नहीं पुनरागमन,
ओ! क्या बताऊं! बस चमन ही चमन।।
समता-सुधापी, तज मिथ्या परिणति,
बनना चाहता, यदि शिवांगना-पति।।1।।

केवल पटादिक वह मूढ़ छोड़ता,
सुधी कषाय घट, को झटिति तोड़ता।
गिरि-तीर्थ करता वह जिन दर्शनार्थ,
जिनागम जो मुनि पढ़ा नहीं यथार्थ।।
मद ममतादि तज बन तू निसंग यति,
बनना चाहता, यदि शिवांगना-पति।।2।।

सुख दायिनी है यह समकित-मणिका,
दुख दायिनी है वह माया-गणिका।
पीता न यदि तू निजानु-भूति-सुधा,
स्वाध्याय, संयम, तप कर्म भी मुधा।
दिन रैन रख तू केवल निज में रति,
बनना चाहता, यदि शिवांगना-पति।।3।।

उपादान सदृश होता सदा कार्य,
इस विधि आचार्य बताते अयि! आर्य!
'विद्या' सुनिर्मल,-निजातम अतः! भज,
परम समाधि में स्थित हो कषाय तज।।
संयम-भावना बढ़ा दिन प्रति अति,
बनना चाहता यदि शिवांगना-पति।।4।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चेतन निजको जान जरा

आत्मानुभव से नियम से होती
सकल करम निर्जरा
दुखकी शृंखला मिटे भव फेरी
मिट जाय जनन जरा।।1।।
परमें सुख कहीं है नहीं जगमें
सुखतो निजमें भरा
मद ममतादि तज धार शम, दम, यम
मिले शिव सौख्य खरा।।2।।
यदि भव परंपरा से हुवा घबरा
तज देह नेह बुरा
तज विषमता झट, भज सहजता तू
मिल जाय मोक्ष पुरा।।3।।
देह त्यों बंधन इस जीवको
ज्यों तोते को पिंजरा
बिन ज्ञान निशिदिन तन धार भव, वन
तूकईबारमरा।।4।।
भटक, भटक जिया सुख हेतु भव में
दुख सहता मर्मरा
चम चम चमकता निजातम हीरा
काया काच कचरा।।5।।

होके मायूस यूँ न साँझ से ढलते रहिए
जिन्दगी भोर है, सूरज से निकलते रहिए
एक ही छाँव पर ठहरोगे तो थक जाओगे
धीरे-धीरे ही सही राह पर चलते रहिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हरदम है तैयार तू

हरदम है तैयार तू पाप कमाने के लिये।
कुछ तो समय निकाल प्रभु गुण गाने के लिये।।
मात गरभ में कोल किया या नाम जपूंगा मैं तेरा,
इस झूठी दुनिया में आकर भूल गया मैं नाम तेरा।
विद्या सदगुरू आये है समझाने के लिये,
कुछ तो समय निकाल..... ।। 1 ।।
हाड़ जले जैसे सूखी लकड़ी केश जले जैसे घास रे,
कंचन जैसी काया जल गई कोई न आया पास रे।
अपने पराये रोते हैं दिखलाने के लिये
कुछ तो समय निकाल..... ।। 2 ।।
जब तक तेल दिये में बाती जगमग-जगमग हो रहा,
जल गया तेल लिपट गई बाती ले चल ले चल हो रहा।
चार जने मिल आते है ले जाने के लिये,
कुछ तो समय निकाल..... ।। 3 ।।

नयी उमंग नये रंग
नयी उमंग, नये रंग
अंग अंग में नयी तरंग
नयी उषा तो नयी ऊष्मा
नये उत्सव तो नयी भूषा
नये लोचन-समालोचन
नया सिंचन नया चिन्तन
नयी शरण तो नयी वरण
नया भरण तो नयाऽऽभरण
नये चरण-संचरण
नये करण-संस्करण
नया राग-नयी पराग
नया जाग-नहीं भाग
नये हाव तो नयी तृषा
नये भाव तो नयी कृपा
नयी खुशी तो नयी हँसी
नयी-नयी यह गरीयसी
नया मंगल तो नया सूरज
नया जंगल तो नयी भू-रज
नयी मिति तो नयी मति
नयी चिति तो नयी यति
नयी दशा तो नयी दिशा
नहीं मृषा तो नयी यशा
नयी क्षुधा तो निरामिषा
नया योग है, नया प्रयोग है
नये नये ये नयोपयोग है
नयी करना से हरी लसी है
नयी सम्पदा वरीयसी है
नयी पलक में नया पुलक है
नयी ललक में नयी झलक है
नये भवन में नये छुवन है
नये धुवन में नये स्फुरण हैं।

मूक-माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इक रोज तो चलना है--

इक रोज तो चलना है कुछ दिन का ठिकाना है,
जिन्दगी और कुछ भी नहीं यूं ही आना और जाना है।

कल्याण अगर चाहे तू अपने जीवन का,
प्रभु भक्ति कर प्राणी यह खेल है दो दिन का,
प्रभु चरणों की ले लो शरण नहीं और ठिकाना है।।1।।

उड़ जायेंगे पंछी बन तेरे प्राण गगन की ओर,
रह जायेगी बस माटी मच जायेगा ऐसा शोर,
उठ जायेगा दुनियाँ से तेरा पानी दाना है।।2।।

तुझे कोई नहलायेगा पर होश नहीं तुझको,
कोई प्यार से देखेगा, कोइ रोयेगा तुझको
दूल्हा सा सजा करके अर्थी पर सुलाना है।।3।।

कंधों पे उठाकर के कुछ लोग तेरे तुझको,
ले जायेंगे सब मिलकर श्मशान में ही तुझको,
कुछ पल की ही देरी है, सब कुछ मिट जाना है।।4।।

तुझे मृत्यु शय्या पर चिर नींद सुला देंगे,
तेरी सुन्दर सी देह को फिर आग लगा देंगे;
दो गज का कफन देकर बाकी सब कुछ छुड़ाना है।।5।

तेरे अपने सब ही तो वह तुझसे दूर होंगे,
तेरे जीवन के सपने सब जलकर चूर होंगे,
तेरे नाम का दीपक तो कुछ दिन ही जलाना है।।6।।

आमद कम खर्चा ज्यादा, लक्षण है मिट जाने का,
कूबत कम गुस्सा ज्यादा, लक्षण है पिट जाने का।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुःखो से भरा

यह संसार सागर दुःखो से भरा
यामें सुख तो नजर कहीं आता नहीं।
यामें मोह का जाल बिछा है गजब
यामें जीव फसें हैं खबर ही नहीं।
कैसे माता पिता कैसे बंधु सखा
कैसे भाई बहन कैसे दारा पति
सब स्वारथ के हैं झूठे सगे,
सच पूछो तो रहने को घर ही नहीं
यह संसार .....।1।।
नदी नाव संजोग से आके मिले,
जैसे पेड़ों पे पंछी बसेरा करे
अरू भोर भये सब उड़ ही गये
साथ चलने का कोई जिगर ही नहीं।
यह संसार .....।2।।
चाहे फौज पयादे हजारों खड़े
चाहे महल किले में भी बंद करो।
चाहे जंतर मंतर लाखों करो,
मौत टाले किसे से भी टलती नहीं
यह संसार .....।3।।
जिनराज भजो, मन धीर धरो
तप संयम शील श्रृंगार करो
जिन धर्म धरो, निज कर्म करो
बिन धर्म के होगा गुजर ही नहीं।।
यह संसार .....।4।।
यामें सुख तो नजर कहीं आता नहीं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवन के किसी भी पल में

जीवन के किसी भी पल में वैराग्य उपज सकता है।
संसार में रहकर प्राणी संसार को तज सकता है।।
कहीं दर्पण देख विरक्ति, कहीं मृतक देख वैरागी।
बिन कारण दीक्षा लेता, वो पूर्व जनम का त्यागी।
निर्ग्रन्थ साधु ही इतने, सद्गुण से सज सकता है।।
संसार में रहकर प्राणी . . . . . .।1।।
आत्मा तो अजर अमर है, हम आयु गिने इस तन की।
वैसा ही जीवन बनता, जैसी धारा चिंतन की।
वहीं सबको संसझा पाता, जो स्वयं समझ सकता है।।
संसार में रहकर प्राणी . . . . . .।2।।
शास्त्रों में सुने थे जैसे; वैसे ही देखे गुरुवर
तेजस्वी परम तपस्वी, उपकारी विद्यासागर।
जिनकी मृदु वाणी सुनकर, हर प्रश्न सुलझ सकता है।।
संसार में रहकर प्राणी . . . . . .
जीवन के किसी भी पल में वैराग्य उपज सकता है।
संसार में रहकर प्राणी संसार को तज सकता है।।

पुरुष को उपदेश 'मूक माटी'

पुरुष को पुरुषार्थ
के रूप में
कुछ उपदेश
पर को कदापि मत पकड़ो
सही सही परखो
हे, पुरुष
किस-विध मन में
मत पाप रखो
पर खो, उसे पलभर
परखो पाप को भी
फिर, जो भी निर्णीत हो
हो अपना, लो अपनालो उसे।।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवन की पहेली सुलझाने आये हैं

जीवन की पहेली सुलझाने आये हैं।
अपने बड़े बाबा को मनाने आये हैं।
संकटों के डेरे चारों ओर प्रभु मेरे हैं,
मेरी जिंदगानी में अँधेरे ही अँधेरे हैं।
आशाओं का दीप जलाने आये हैं,
अपने बड़े बाबा को मनाने आये हैं . . .।1।।
तेरे दरबार में दया की बरसात है,
मेरी लाज बाबाजी तुम्हारे ही तो हाथ है।
आशाओं का सूरज उगाने आया हूँ,
अपने बड़े बाबा को मनाने आये हैं . . .।2।।
सारे प्रश्नों के यहाँ उत्तर मिल जाते हैं
रोते-रोते आने वाले हँसते-हँसते जाते हैं
भक्ति की आश लगाये आया हूँ
अपने बड़े बाबा को मनाने आये हैं . . .।3।।
दुनिया की रीत कोई दुःख नहीं बाँटे,
मेरी तो डगर में है काँटे ही काँटे।
अपनी नाव पार लगाने आया
अपने बड़े बाबा को मनाने आया हूँ।4।।
जीवन की पहेली सुलझाने आया हूँ।
अपने बड़े बाबा को मनाने आया हूँ।।

पर्वत की तलहटी से भी — *मूक-माटी*
हम देखते हैं कि
उत्तुंग शिखर का दर्शन होता है
परन्तु
चरणों का प्रयोग किये बिना
शिखर का स्पर्शन सम्भव नहीं है।।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आया कहाँ से कहाँ है जाना

आया कहाँ से कहाँ है जाना,
ढूँढ ले ठिकाना प्यारे ढूँढ ले ठिकाना।
इक दिन चेतन गोरा तन ये, माटी में मिल जायेगा,
कुटुम्ब कबीला खड़ा रहेगा, कोई बचा न पायेगा,
..... नहीं चलेगा कोई बहाना, ढूँढ ले ठिकाना।।1।।
बाहर सुखको खोज रहा तू बनता क्यों दीवाना रे,
आतम ही सुखधाम हे प्यारे, उस को भूल न जाना रे,
..... सारे सुखों का ये है ठिकाना ढूँढ ले ठिकाना।
जब तक तन में साँस है तेरे सब तुझको अपनायेंगे,
जब न रहेंगे प्राण ये तन में, सब तुझसे घबरायेंगे।
..... तुझको पड़ेगा प्यारे ले जाना, ढूँढ ले ठिकाना।
धन-दौलत और रूप खजाना, यही धरा रह जायेगा,
दौलत के दीवानो सुन लो, कुछ भी साथ न जायेगा,
..... कंधा लगायेगा सारा जमाना, ढूँढ ले ठिकाना।
गुरु चरणों के ध्यान से चेतन, भव तेरा तर जायेगा,
सम्यक्दर्शन ध्यान से प्यारे, दुख तेरा मिट जायेगा,
..... सच्चे सुखों का है ये खजाना, ढूँढ ले ठिकाना।
आया कहाँ से कहाँ है जाना,
ढूँढ ले ठिकाना प्यारे ढूँढ ले ठिकाना।

मुक्तक-

ये विद्या के सागर हैं - जग का कल्याण करेंगे।
हमको है विश्वास कि ये कुछ नव निर्माण करेंगे।।
जब-जब पाप धरा पर होगा, रावण होंगे भू पर।
तब तब आप धरा पर आकर प्रभु श्री राम बनेंगे।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

.....मम मन्दिर में रहूंगा

अब मैं मम मंदिर में रहूंगा।
अमिट अमित अरु अतुल अतीन्द्रिय, अरहंत पद को धरूँगा।
सज धज निज को दश धर्मो से, सविनय सहज भजूँगा
विषय विषम विष को तजकर उस समरस पान करुंगा।
जनम मरण अरु जरा जनित दुख, फिर क्यों वृथा मैं सहूंगा
अब मैं मन मंदिर में रहूंगा।
दुःखदात्री है इसीलिए अब न माया गणिका रखूंगा
निसंग बनकर शिवांगना संग, सानंद चिर मैं रहूंगा
अब मैं मम मंदिर में रहूंगा।
भूला पर में फूला झूला भावी भूल ना करुंगा
निज में जिन का अहो निरन्तर निरंजन स्वरूप लखूंगा
अब मैं मम् मंदिर में रहूंगा।
समय समय पर समयसार मय, मम आतम को भजूंगा
साहूकार जब मैं हूं फिर क्यों, सेवक का कार्य करूँगा
अब मैं मम् मंदिर में रहूंगा।।

(परमपूज्य 108 आचार्य गुरूवर विद्यासागर जी महाराज)

मूकमाटी

"तन मन वचन ये
बार-बार बहु बार मिले है
और प्राप्त स्थिति पूरी कर
तरलदार हो पिघले हैं
मोह मूढ़तावश
इन्हें हम गले लगाये
परन्तु खेद है
पुरुष के साथ रहकर भी
पुरुष का साथ नहीं देते ये।"

"प्रवृत्ति नहीं,
पाप पुंज है पुरुष है
प्रकृति की संस्कृति परम्परा
पर से पराभूत नहीं हुई
अपितु
अपने में तत्परा है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनोखा भेद

माटी का है भेद अनोखा,

माटी का है भेद अनोखा, भेद समझ में नही आया।
कितने रूप हैं माटी तेरे तूने जग को भरमाया।।
भरा रंग माटी में एक दिन महल कहा सबने सुन्दर,
बिखर गई जब माटी इक दिन महल कहाया वो खण्डहर।
माटी ने माटी के जाने कितने नगर बसाये हैं,
कई दफा माटी ने इनको माटी बीच दबायें हैं।
माटी का सब खेल है बन्धु माटी की है ये माया।।
माटी का है भेद . . . . . .।1।।

कल तक जिन महलों में दीपक रोज दीवाली करते थे,
सुन्दरता कोई नाचा करती प्याले रोज छलकते थे।
माटी के ये महल थे दीपक और माटी के प्याले थे,
माटी नाच दिखाया करती माटी पीने वाले थे।
जाने कितनों को माटी ने माटी बीच छिपाया
माटी का है भेद . . . . . .।2।।

माटी पर चढ़ माटी इक दिन माटी के घर आई,
माटी की शादी माटी से इक माटी ने करवाई।
इक दिन माटी से माटी की गोद में माटी है आई
कुल की ज्योति इस माटी के ये माटी है कहलाई
देख के माटी को माटी ने उत्सव खूब मनाया
माटी का है भेद . . . . . .।3।।

काल ने इक दिन ठोकर मारी माटी बिखर गई सारी,
माँग पोंछकर माटी कहती उजड़ी मेरी फुलवारी।
माटी देख के ममता माटी रो रो कर ये कहती है।
माटी को कँधे में उठा माटी श्मशान में लाती है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माटी जलाके माटी कहती ये माटी की काया।।1।।
माटी का है भेद.....।।
इक माटी को समझ के माटी माटी ही ठुकराती है
माटी के ये बाजे बजते माटी इसे बजाती है।
माटी है यह सुनने वाली माटी इन्हें सुनाती है।
चाँद पे पहुँचा माटी का कण माटी उठाकर लाया।।
माटी का है भेद . . . . . .।।4।।
माटी बीच छिपा इक पंछी माटी तो फिर है माटी,
इस पंछी को जिसने देखा वो माटी ना रही माटी।
जिसको भेद समझ में आया उसे लगी दुनिया माटी,
कौशिक माटी के भीतर है इक अमोलक छाया
माटी का है भेद अनोखा भेद समझ में नहीं आया।।5।।

सुवचन : अपने गुप्त से गुप्त विचारों को भी पवित्र बनाए रखो क्योंकि उनमें भी अद्भुत शक्ति भरी है। तुम्हारे मुख से निकले वचन तुम्हारे विचारों का पता देता है और तुम्हारे भविष्य के निर्माण कर्ता भी तुम्हारे अपने ही विचार होते हैं। अतः चेतन जागो ! चेतो ! विचारों को सम्हालो!

अहिंसावादी

धर्म का रथ न जाने कहाँ जा रहा है
अहिंसावादी मानव अण्डा खा रहा है।

"वासना की जीवन परिधि अंचेतन है तन है दया करुणा निरवधि है
करुणा का केन्द्र वह संवेदन धर्मा-चेतन है पीयूष का केतन है।"
"करुणा की कर्णिका से अविरल झरती है समता की सौरभ सुगन्ध
ऐसी स्थिति में कौन कहता है कि करुणा का वासना से सम्बन्ध है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बोलो बन्धु किधर किधर

मेरी डोली लेके चले हो, बोलो बन्धु किधर-किधर
लोग खड़े जाने पहचाने, राह में मेरी इधर-उधर।।
कैसी गलती की है तुम्हारी शान में आखिरी बार।
तुम तो सब पैदल चलते हो मैं हूँ कांधों पे सवार।।
शर्मिन्दा हूँ जाते-जाते छोड़ के तुमको नई डगर।
मेरी डोली . . . . . ।।1।।

मजबूरी मेरी तो देखो बोल न कुछ भी पाता हूँ,
अंतिम विदा कहूँ मैं कैसे बेबस हो रह जाता हूँ।
जाने की जल्दी है मुझको, जाना है मुझे दूर नगर
मेरी डोली . . . . . ।।2।।

किसकी ये आवाज है आई, टप-टप आँसू गिरने की।
पोंछा सिन्दूर चूड़ियां टूटी, सजन सलोनी सजनी की।।
शायद इसको याद आ गई, प्रथम प्रहर की प्रथम मिलन।
मेरी डोली . . . . . ।।

बचपन बीता जिसकी गोद में, रोती है वो बिलख-बिलख
पिता भाई सब चिल्लाते हैं, बहिना रोती सुबक-सुबक।।
इनसे कह दो राह न रोके, लम्बा हैं ये मेरा सफर।
मेरी डोली . . . . . ।।

अच्छा तो मुझे ले ही आये, जहाँ पे मुझको आना था।
अपने देश में आ ही पहुँचा ये तो देश बेगाना था।।
लकड़ी के इस ढेर पर रखकर, होते हो क्यों तितर-बितर।
मेरी डोली . . . . . ।।

अग्नि की डोली पे बिठाकर, तुमने मेरा भला किया।
तोड़ के बंधन पिजड़े के पंछी को कैद से रिहा किया।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अग्नि नहीं जला सकती है पानी नहीं गला सकता।
शस्त्र न काट सके कोई मेरा असली रूप निखार दिया।
तुम क्या जानो भोले-भालो, कौशिक हुआ है आज अमर।
मेरी डोली . . . . . .।।

तू रोता है क्यों?

ये माटी के पुतले तू रोता है क्यो?
ये नरतन तेरे साथ जाना नहीं।।
जिसको कहता है अपने पराये है सब।
इनसे पलभर भी नेहा लगाना नहीं।।
भाई बंधु बहिन साथी मतलब के हैं।
मृत्यु के बाद कोई साथ जाता नहीं।।
सब भुलाकर चिता में जलाते तुझे।
कोई तुझको चिता से बचाता नहीं।।
ए माटी . . . . . .।।1।।
फूल खिलते हुये माली हँसता तो है।
फूल गिरते हुये देख रोता नहीं।।
सुख में साथी तेरे होके हँसते तो है।
तेरे दुख में ये कोई भी रोते नहीं।।
रागी-द्वेषी जगत में बनाते सभी।
वीतरागी कोई भी बनाता नहीं।।
ए माटी . . . . . .।।
नरतन पाया है तूने प्रभु गुण तो गा।
तेरे दुःख की घड़ी भी बदल जायेगी।।
तू भज ले रे मन ! और सुमर ले प्रभु।
तेरे चमड़े की जिह्वा का भरोसा नहीं।।
ए माटी . . . . . .।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहिंसा की धार

भोले पशुओं की सुन लो पुकार।
करो सफल जीवन अहिंसा की धार।।
पशुओं पर तलवार चलाते, उनकी खाल से पर्स बनाते।
क्रीम पाउडर से सजे हैं बाजार।।
करो सफल .....।1।।

ये तो मूक है ये क्या बोलें, दर्द जो होये मन में रोलें।
बहे आँखों से अँसुअन की धार।।
करो सफल .....।2।।

जो पशुओ के प्राण हरेंगे अगले भव पशु योनि धरेंगे।
होगा उन पर भी ये अत्याचार।
करो सफल .....।3।।

पशुओं का वध अब तो रोको, ये भी जीव हैं इतना तो सोचो?
इनको जीने का दो अधिकार!
करो सफल .....।4।।

ओ हत्यारों ! जाग भी जाओ पापों से कुछ तो भय खाओ।
क्या भूल गये नरकों की मार।।
करो सफल .....।5।।

निगल जायेगा	विश्वास है
जिस दिन	अब
भारत से	उन्हें पाप करने से
शाकाहार	डर नहीं लगता
निकल जायेगा	क्योंकि
उस दिन	उन्हें विश्वास है कि
देखना	मरने के बाद तो
आदमी को आदमी	स्वर्गीय
निगल जायेगा।	लिखा ही जायेगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बाते हैं कल्याण की

आओ मित्रों तुम्हें सुनाये बाते हम कुछ ज्ञान की।
उन बातों पर अमल करो ये बाते हैं कल्याण की।।
वन्दे गुरुवरम्.....।1।।

मत मारो जीवों को ये दीन गरीब बेचारे हैं।
प्राण उन्हें भी प्यारे वैसे जैसे तुम्हें तुम्हारे हैं।।
प्राणी का जो घात करे है वे पापी हत्यारे हैं।
दया धर्म का धाम जगत में ग्रंथ सभी उच्चारे हैं,
जीव दया को दिल में रखो आज्ञा है भगवान की
उन बातों.....।2।।

लालच क्रोध तजो तुम प्यारे मान कपट को तुम हरना।
माता-पिता की आज्ञा मानो गुरुवर की लो तुम शरणा।।
अनुशासन में रहो निरंतर धर्म हमें ये सिखाता है।
आत्मोन्नति की करो सभी मिल बाते हमें ये बताता है।
विनय सम्पदा विद्या सीखो धर्म कला विज्ञान की।।
उन बातों.....।3।।

सप्त व्यसन को कभी ना छुओ, दूर नशों से तुम भागो।
सत् संगति में रहो निरंतर शौक सिनेमा सब त्यागो।।
फैशन के मत दास बनो तुम दूर अनिद्रा से भागो।
मुक्ति मित्र यदि बनना चाहो धर्म के रास्ते पर लागो।।
सर्व धर्म के पालन में तुम बाजी लगा दो जान की।
उन बातों.....।4।।

भगवान महावीर

होमकुण्ड से धधक रही थी हिंसा की भीषण ज्वालायें।
मनुज अश्व पशु होमे जाते, भू पर ये शैख पीड़ायें।।
जिसे रोकने महावीर ने अपना दृढ़तम कदम बढ़ाया।
रचनात्मक करुणा दर्शाकर, अभयदान सबको दिलवाया।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समाधि – भावना

(दिन रात मेरे स्वामी)

दिन रात मेरे स्वामी मैं भावना ये भाऊं।
देहान्त के समय में तुमको न भूल जाऊं।
शत्रु अगर कोई हो, संतुष्ट उनको कर दूं।
समता का भाव धरकर, सबसे क्षमा कराऊं।।1।।
त्यागूं आहार पानी औषध विचार अवसर।
टूटे नियम न कोई, दृढ़ता हृदय में लाऊं।।2।।
जागे नहीं कषायें, नहीं वेदना सतावें।
तुमसे ही लौ लगी हो दुर्ध्यान को भगाऊँ।।3।।
आतम स्वरूप अथवा आराधना विचारूं।
अरहंत सिद्ध साधु, रटना यही लगाऊं।।4।।
धर्मात्मा निकट हों, चर्चा धरम सुनावें।
वे सावधान रक्खें, गाफिल न होने पाऊं।।5।।
जीने की हो न वांछा, मरने की हो न इच्छा।
परिवार मित्र ज़न से, मैं राग को हटाऊं।।6।।
भोगे जो भोग पहले, उनका न होवे सुमरन।
मैं राज्य संपदा या पद इन्द्र का न चाहूं।।7।।
रत्नत्रय का पालन, हो अंत में समाधि।
शिवराम प्रार्थना यह जीवन सफल बनाऊँ।।
हम सबकी प्रार्थना है, जीवन सफल बनाऊं।।8।।
दिन-रात मेरे स्वामी मैं भावना ये भाऊं . . . . . .

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"समाधि-भावना"

(तर्ज - जब प्राण तन से निकले)

भगवन ! समय हो ऐसा, जब प्राण तन से निकले।
नवकार मन्त्र जपते, मम प्राण तन से निकले।।
ये क्रोध मान माया अरू लोभ जो बताया
चारों कषायें छूटें जब प्राण तन से निकलें। भगवन समय . . .
नहीं बैर हो किसी से, समभाव हो सभी से।
शांति क्षमा हो मन में, जब प्राण तन से निकले। भगवन समय . . .
आठों कर्म दुखोरे, लागे हैं संग मेरे।
इनसे मैं मुक्त होऊं, जब प्राण तन से निकले। भगवन समय . . .
होवें मरण समाधि, व्यापें न मोह व्याधि।
घट में हो ध्यान मेरा, जब प्राण तन से निकलें। भगवन समय . . .
वस्तु स्वरूप निरखूं, स्व आत्मगुण निहारू।
निज में हो ध्यान मेरा, जब प्राण तन से निकले। भगवन समय . . .
भक्ति में रत हूँ तेरी, शुद्ध आत्मा हो मेरी।
प्रभु नाम भजते-भजते, मम प्राण तन से निकले। भगवान समय . . .
कर जोड़ अर्ज मेरी काटो कर्म की बेड़ी।
सम्यक्त्व होय पैदा जब प्राण तन से निकलें। भगवन समय . . .
भगवन ! समय हों ऐसा जब प्राण तन से निकलें।
नवकार मन्त्र जपते, मम प्राण तन से निकले।।

शरण

"धम्मो दया विशुद्धो"
यही एक मात्र
अशरणों की शरण
महा आयतन है यह
यही हमारा जतन है
वरना, निश्चित ही
आज या कल
काल के गाल में
कवलित होंगे हम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बारह-भावना

(कविवर भूधरदास जी)

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार।।१।।
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरियां जीवको, कोई न राखनहार।।२।।
दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान।।३।।
आप अकेला अवतरै, मरै अकेलो होय।
यूं कबहूं इस जीव का, साथी सगा न कोय।।४।।
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर संपति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय।।५।।
दिपै चाम-चादर मढी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन-गेहा।।६।।

सोरठा

मोह-नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा।
कर्म-चोर चहुं ओर, सरवस लूटैं सुध नहीं।।७।।
सतगुरु देय जगाय, मोह-नींद जब उपशमै।
तब कछु बनैं उपाय, कर्म-चोर आवत रुकैं।।८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर।
या विध बिन निकसै नहीं, बैठे पूरब चोर।।९।।
पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय धार निर्जरा सार।।१०।।
चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत हैं बिन ज्ञान।।११।।
धन कन कंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान।।१२।।
जाँचे सुर-तरु देय सुख, चिंतन चिंतारैन।
बिना जाचै बिन चिंतये, धर्म सकल सुख दैन।।१३।।

बोल मानव बोल रे.....पू. दृढमति माताजी

पर को क्यों तू जानता
पर को क्यों तू देखता
क्यों न निज को जानता
और क्यों न निज को देखता।
बोल मानव बोल रे

जिनने निज को जाना देखा
सबको भी जाना औ देखा
पाया है शिवसुख का खजाना
जो है शाश्वत बाना रे।
सोच मानव सोच रे.....
सच्चे दिल से सोच रे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो।।१।।
विषयों की आशा नहिं जिनके साम्य-भाव धन रखते हैं।
निज-परके हित-साधन में जो निश-दिन तत्पर रहते हैं।।
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या बिनाखेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दुख-समूह को हरते हैं।।२।।
रहे सदा सत्संग उन्हीं का ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन्हीं जैसे चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
नहीं सताऊँ किसी जीव को झूठ कभी नहीं कहा करूँ।
परधन-वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ।।
अहंकार का भाव न रक्खूं न ही किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरों की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ।
रहे भावना ऐसी मेरी सरल सत्य व्यवहार करूँ।।
बने जहां तक इस जीवन में औरों का उपकार करूँ।
मैत्री भाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे उर से करूणा स्रोत बहे।।
दुर्जन -क्रूर-कुमार्ग-रतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूं मैं उनपर ऐसी परिणति हो जावे।।५।।
गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहां तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे।।
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुण-ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोषों पर जावे।।६।।
कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज भी आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा कभी न पग डिगने पावे।।७।।
होकर सुख में मग्न न फूले दुख में कभी न घबरावे।
पर्वत नदी श्मशान भयानक अटवी से नहीं भय खावे।।
रहे अडोल-अकंप निरंतर यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट -वियोग-अनिष्ट-योग में सहन-शीलता दिखलावे।।८।।
सुखी रहें सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे।
बैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मङ्गल गावें।।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावें।।
ज्ञान-चरित्र उन्नत कर अपना मनुज-जन्म-फल सब पावें।।९।।
ईति भीति व्यापे नहिं जग में वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर रांजा भी न्याय प्रजा का किया करे।।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगत में फैल सर्व हित किया करे।।१०।।
फैले प्रेम परस्पर जगत में मोह दूर ही रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं कोई मुख से कहा करे।।
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से देशोन्नति-रत रहा करें।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से सब दुख संकट सहा करें।।११।।

हे साधक!

तुम दुनिया में अनिन्दित बने रहना चाहते हो न!
और दूसरों की निंदा रुप निन्दित कार्य करते हो!
फिर स्वयं सोचो, कैसे अनिन्दित बन रह सकोगे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वज्रनाभि चक्रवर्ती की

वैराग्य भावना

दोहा बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जगमाहिं।
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं।।

जोगीरासा वा नरेन्द्र छंद।

इहविधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो।
सुखसागर में रमत निरंतर, जात न जान्यो कालो।।
एक दिवस शुभ कर्म-संजोगे क्षेमकर मुनि बंदे।
देखि श्रीगुरु के पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे।।१।।
तीन प्रदक्षिण दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी।
साधु-समीप विनय कर बैठ्यो, चरनन में दीठी लीनी।।
गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे।
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे।।२।।
मुनि-सूरज-कथनी-किरणावलि लगत भरम बुधि भागी।
भव-तन-भोग-स्वरूप विचारयो, परम धरम अनुरागी।।
इह संसार महावन भीतर, भरमत ओर न आवै।
जामन मरन जरा दव दाहै जीव महादुख पावै।।३।।
कबहूँ जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी।
कबहूँ पशु परजाय धरै तहँ, बध बंधन भयकारी।।
सुरगति में परसंपति देखे राग उदय दुख होई।
मानुषयोनि अनेक विपतिमय, सर्वसुखी नहिं कोई।।४।।
कोई इष्ट वियोगी विलखै, कोई अनिष्ट संयोगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोई दीन-दरिद्री विलखे, कोई तन के रोगी।।

किसही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम भाई।

किसही के दुख बाहिर दीखैं, किसही उस दुचिताई।।५।।

कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरैं तब रोवै।

खोटी संततिसों दुख उपजै, क्यों प्राणी सुख सोवै।

पुण्य उदय जिनके तिनके भी नाहिं सदा सुख साता।

यह जगवास जथारथ देखे, सब दीखै दुखदाता।।६।।

जो संसार विषै सुख होता, तीर्थङ्कर क्यों त्यागै।

काहे को शिवसाधन करते, संजमसों अनुरागै।।

देह अपावन अथिर घिनावन, या में सार न कोई।

सागर के जलसों शुचि कीजै, तो भी शुद्ध न होइ।।७।।

सात कुधातुभरी मलमूरत, चर्म लपेटी सोहै।

अंतर देखत या सम जग में, और अपावन को है।।

नव-मल-द्वार स्रवैं निशि-वासर, नाम लिये घिन आवै।

व्याधि-उपाधि अनेक जहाँ तहँ, कौन सुधी सुख पावै।।८।।

पोषत तो दुख दोष करै अति, शोषत सुख उपजावै।

दुर्जन-देह-स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै।।

राचन-जोग स्वरूप न याको विरचन-जोग सही है।

यह तन पाय महातप कीजे या में सार यही है।।९।।

भोग बुरे भवरोग बढ़ावैं, बैरी हैं जग जीके।

बेरस होंय विपाक समय अति, सेवत लागें नीके।।

वज्र-अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्म-रतन के चोर चपल अति, दुर्गति-पंथ सहाई।।१०।।

मोह-उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानै।

ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन मानै।।

ज्यों-ज्यों भोग संजोग मनोहर, मन-वांछित जन पावैं।

तृष्णा नागिन त्यों-त्यों डंके, लहर जहर की आवे।।११।।

मैं चक्रीपद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे।

तौ भी तनक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे।।

राजसमाज महा अघ-कारण, बैर बढ़ावन-हारा।

वेश्या-सम लक्ष्मी अतिचंचल, याका कौन पतयारा।।१२।।

मोह-महा-रिपु बैर विचार्‌यो, जग-जिय संकट डारे।

घर-कारागृह वनिता बेडी, परिजन जन रखवारे।।

सम्यकदर्शन ज्ञान चरण तप, ये जियके हितकारी।

येही सार असार और सब, यह चक्री चितधारी।।१३।।

छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, अरु छोड़े संग साथी।

कोटि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी।।

इत्यादिक संपति बहुतेरी जीरण-तृण-सम त्यागी।

नीति विचार नियोगी सुतको, राज दियो बड़भागी।।१४।।

होय निशल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे।

श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पंच महाव्रत धारे।।

धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज-धारी।

ऐसी संपति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी।।१५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

परिग्रहपोत उतार सब, लीनो चारित, पंथ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ।।

इति श्री वज्रनाभि चक्रवर्ती की वैराग्य भावना।

आलोचना पाठ

दोहा

बंदों पाँचो परम-गुरु, चौबीसों जिनराज।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि-करन के काज।।१।।

सखी छन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निवृति काजा, तुम सरन लही जिनराजा।।२।।
इक वे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी।।३।।
समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिके, क्रोधादि चतुष्टय धरिकै।।४।।
शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परिछेदन तैं।
तिनकी कहुं कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी।।५।।
विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनय के।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो।।७।।
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पर वनिता सों दृग जोरी।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो।।८।।
सपरस रसना घ्रानन को, चखु कान विषय सेवनको।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने।।९।।
फल पंच उदम्बर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये।
नहिं अष्ट मूलगुण धारे, सेये कुविसन दुखकारे।।१०।।
दुइबीस अभख जिन गाये, सो भी निश-दिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो।।११।।
अनंतानु जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये।।१२।।
परिहास अरति रति शोक, भय ग्लानि तिवेद संयोग।
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम।।१३।।
निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जागि विषय वन धायो, नाना विध विष-फल खायो।।१४।।
आहार विहार नीहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई।।१५।।
तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकल्प उपजायो।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गई है।।१६।।
मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी।
भिन्न-भिन्न अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषैं सब पइये।।१७।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हा हा! मैं दुष्ट अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी।
थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी।।१८।।
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागा चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन बिलोल्यो।।१९।।
हा हा। मैं अत्याचारी, बहु हरितकाय जु विदारी।
तामधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा।।२०।।
हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई।
तामध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये।।२१।।
बीध्यो अन्न रात्रि पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो।
झाड़ू ले जागां बुहारी, चींटी आदिक जीव बिदारी।।२२।।
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई।।२३।।
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये।।२४।।
अन्नादिक शोध कराई, तातें जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया।।२५।।
पुनि द्रव्य कमावन काजै, बहु आरंभ हिंसा साजै।
किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी।।२६।।
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
संतति चिरकाल उपाई, वाणी तैं कही न जाई।।२७।।
ताको जु उदय अब आयो, नाना विध मोहि सतायो।
फल भुँजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसें करि गावै।।२८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानो।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है।।२९।।
इक गाँवपती जो होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अंतरयामी।।३०।।
द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता-प्रति कमल रचायो।
अंजन से किये अकामी, दुख मेटो अंतरयामी।।३१।।
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपना विरद सम्हारो।
सब दोष-रहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरयामी।।३२।।
इंद्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज पद दीजे।।३३।।

दोहा

दोष-रहित जिनदेवजी, निज-पद दीज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय।।
अनुभव माणिक पारखी, जौहरि आप जिनन्द।
येही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनन्द।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैन साधुओं को आहार दान क्यों? कैसे?

(शुभाशीष–आर्यिका श्री मृदुमति जी)

साधु धर्म का प्रचार करते हुए समाज के सुरक्षा कवच होते हैं क्योंकि आज की अत्यन्त प्रतिकूल स्थितियों में साधु ही इस समाज को गिरते हुए माहौल का नियंत्रित कर रहे हैं ये किसी से छिपा नहीं है कि इस परम्परा में संत शिरोमणी 108 आचार्य विद्यासागर मुनिमहाराज का चतुर्विध संघ के साथ बिगड़े समाज को नियंत्रित करने में कितना सहयोग, जगह जगह छोटे–छोटे संघों में विभक्त ये साधु, समाज की प्रत्येक पीढ़ी को दिशा बोध दे रहे हैं और वे समाजिक पीढियाँ अपने में एकत्रित सामर्थ्य के अनुसार धर्म का रसपान कर अपने स्वास्थ्य और समाज के स्वास्थ्य की रक्षा कर रही है।

तब समाज का परम कर्तव्य हो जाता हे कि उन दिशा निर्देशक साधुओं, साध्वियों के आहार चर्या संबंधी विषय का अच्छे से अच्छा ज्ञान हो जावे, और इसी आवश्यकता को महसूस कर आहार संबंधी जानकारी देने का प्रयास पुस्तक में सरल भाषा में किया है।

धर्मात्मा हमारी संस्कृति (धर्म) के भंडार हैं। आप सभी जानते हैं कि किसी भी आधेय की सुरक्षा के लिए आधार की सुरक्षा बहुत आवश्यक है। जैसे घड़े में रखे घी की सुरक्षा तभी हो सकती है जब आपकी दृष्टि घी पर न रहकर घड़े पर रहेगी। घड़ा सुरक्षित रहेगा तब घी अपने आप सुरक्षित रहेगा। इसी क्रम में शुद्ध, उपयोगी, पौष्टिक आहार जो आपके द्वारा साधु को दिया जा रहा है। वह धर्मात्मा के साथ साथ धर्म की रक्षा करने में सहायक हो रहा है।

सोचिए ! आपके द्वारा दिए गए आहार का क्या महत्व है। आप समझ गये हैं। आपके द्वारा दिया गया आहार दान सीधा–धर्म की सुरक्षा कर रहा है। अतः क्यों न हम पूर्ण सावधानी और विवेक के साथ साधु की आहार चर्या को सुगम बनावें और धर्म समाज के साथ अपनी सुरक्षा करें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रावक के दान पूजा प्रमुख कर्तव्यों में दान देना वह भी आहार, औषधि, उपकरण और वसतिका, दान, बिना पात्र के संभव नहीं हैं। आज हम देख रहे हैं जगह जगह लोगों को संतों का समागम मिल रहा है और मनुष्य अपने विवेक के अनुसार उस समागम से लाभान्वित हो रहा है तथा जीवन जीने की कला सीखकर उसके फलस्वरुप दान देकर अपने आप को धन्य मानता है।

इन सभी दानों में आहारदान की प्रक्रिया समझना और उसको व्यवस्थित करना प्रत्येक श्रावक का कर्तव्य है। क्योंकि इसी कर्तव्य में कमी होने से श्रावक को अपनी अज्ञानता के कष्ट का अनुभव होता है, व साधकों की साधना में बाधा की संभावना होती है। आर्यिका अतः श्रावक धर्म के बाबत कुछ सीखा उसको उपयोगी समझकर प्रत्येक श्रावक श्राविका को ध्यान में रखने योग्य महत्वपूर्ण बाते यहाँ दी जा रही हैं।

विशेष रुप से मुनि, आर्यिका 46 दोषों से रहित व 32 अंतरायों का पालन करते हुए समभाव से श्रावक के द्वारा दिया आहार ग्रहण करते हैं। वे स्वयं ऐसा नहीं कहते हैं कि आप लोग हमें आहार दो। साधु को जब अंतराय आ जाये या वे द्वारे से लौट जाये तो हमें अपनी कमी का अनुभव होता है। नवधा भक्ति व दाता के 7 गुण व आहार शुद्धि की कमी नजर आती है।

दानविधि, दान दाता, दान पात्र व दान

"नवपुण्यैः प्रतिपतिः सप्तगुण समाहितेन शुद्धेना।
अपसूनारम्भाणामार्याणा मिष्यते दानम्।।"

सप्तव्यसन त्याग से शुद्ध, सात गुणों से युक्त, नवधाभक्ति सहित श्रावकों के द्वारा सूना व आरम्भों से रहित आर्यो का आहारादि दान देने के रुप में जो आदर सत्कार किया जाता है वह दान है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आहार दान का महत्वः-

"भोयण दाणे दिण्णे तिण्णिवि दाणाणि होति दिणाणि।
भुक्ख तिसाए वाही दिणे दिणे होंति देहीणं।।"

भोजन दान देने पर तीनों दान दिए जाते हैं, क्योंकि प्राणियों को भूख व प्यास रूपी व्याधि प्रतिदिन होती है।

भोयण बलेण साहू सत्यं सेवेदि रत्ति दिवसं पि।
भोयण दाणे दिण्णे पाणा वि य रक्खिया होंति।।

भोजन के बल से ही साधु रात दिन शास्त्रों का अध्ययन करते हैं और भोजन दान देने पर प्राणों की भी रक्षा होती है।

आहार दान से :-

1. विद्या, धर्म, तप, ज्ञान, मोक्ष सभी नियम से दिया हुआ जानो।
2. आरोग्गं हवे दिण्णं - आरोग्य ही दिया जानो !
3. यह शरीर आहार मय है, आहार न मिलने से नियम से नहीं टिक सकता अतः जिसने आहार दिया उसने शरीर ही दिया जानो।

आहार दान के समय ध्यान देने योग्य बाते :-

1. घी, तेल, दूध, पानी आदि पतले पदार्थों को बिना छना उपयोग में नहीं लेना बल्कि उनको दृढ़ वस्त्र से छानना, पुराने छेद वाले, छोटे कपड़े से नहीं छानना।
2. छन्ना- छानने का कपड़ा 80 से. मी. अर्थात् 36 अंगुल लंबा और 24 अंगुल चौड़ा वस्त्र दोहरा करके उससे जल छानना, रंगे व पहने हुए वस्त्रों से नहीं छानना।
3. छने हुए पानी की दो घड़ी मर्यादा है, हरड़े आदि से प्रासुक दो पहर या छह घंटे तथा उबाले जल की 24 घंटे की मर्यादा है। (1 घड़ी = 24 मिनट)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

4. दो घड़ी के बाद छना हुआ अप्रासुक जल पुनः छानने योग्य हो जाता है। वैसे ही सभी मर्यादा के बाद जल बिना छने के समान हो जाता है।

आहार दान भूमिका :-

1. मर्यादित जल से मर्यादित भक्ष्य सामग्री तैयार करने आहार/औषधिकोई भी देने योग्य वस्तु को प्राथमिक समय से शुद्धि व शोधकर सावधानी पूर्वक निर्मित करना।
2. आहार बनाने का समय-सूर्योदय के दो घड़ी बाद से लेकर सूर्यास्त के दो घड़ी पूर्व तक आहार बना सकते हैं, सुबह जब अंधेरा होता है, उस समय से भोजन बनाना प्रारंभ करने से रात्रि भोजन नाम का दोष लगता है। आहार बनाने से पूर्व आहार सामग्री का अच्छी तरह विवेकपूर्वक शोधन होना चाहिए।
3. साबुतदाने वगैरह भी नहीं देना चाहिये, उनको बीच में से दो हिस्से कर, देना चाहिये जैसे- बादाम मूंगफली आदि।

चौका-चारों चीजों की शुद्धिः-

★ द्रव्य शुद्धि - हितकारी योग्य सामग्री की शुद्धता

★ क्षेत्र शुद्धि - चौके की व जहाँ से अतिथि/साधु को ले जाना है, उन रास्तों का स्वच्छ शुद्ध एवं सूखा होना।

★ काल शुद्धि - अतिथि की आहार बेला का अतिक्रम नहीं करना, समय पर उन्हें शुद्ध प्रासुक जल देकर शुद्धि करने व आहारचर्या को उठने की प्रार्थना करना।

★ भाव शुद्धि :- दान का उद्देश्य साधु के रत्नत्रय की वृद्धि व अपने पाप की हानि तथा पुण्य में हेतु रूपभाव रखना।

आहार चर्या की 2 बेला होती हैं - एकबेला - सूर्योदय से 2 घंटे के पश्चात से लेकर सामायिक के पहले तक समय की।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दूसरी बेला – दोपहर सामायिक के उपरांत सूर्यास्त के 2 घंटे पहले तक।

साधु का पडगाहन करें इससे पूर्व

1. चौका का निरीक्षण कर लें कहीं कोई अपवित्रता बाल, जीव इत्यादि न हों, सभी वस्तुएँ शुद्ध व साफ हों।
2. प्रकाश की तरफ आहार रखने के लिए चौकी पाटा लगायें जिससे दाताओं के बैठनें से आहार लेने, देने वालों को अंधेरा न पड़े।

नवधा भक्ति :-

(1) प्रतिग्रहण = पड़गाहन (2) उच्चासन (3) पादप्रक्षालन (4) पूजन (5) नमस्कार (6) मन शुद्धि (7) वचन शुद्धि (8) काय शुद्धि व (9) आहार जल शुद्धि – बोलना।

मुनियों की नवधा भक्ति में विशेषता :-

मुनियों को पड़गाहन के बाद अपना दायां हाथ मुनि की तरफ करते हुए तीन परिक्रमा करना, पाद प्रक्षालन करके गंधोदक मस्तक पर लगाना व अष्ट द्रव्य से पूजन करना तथा नमस्कार के संबोधन में नमोस्तु कहना।

आर्यिकाजी को नमस्कार के लिए वंदामि, ऐलक क्षुल्लक क्षुल्लिकाओं के लिए इच्छामि शब्द का प्रयोग करना, इनकी परिक्रमा, पूजन व पाद प्रक्षालन नहीं होता।

पड़गाहन विधि :-

हे !/भो स्वामिन् नमोस्तु, नमोस्तु ..... तीन बार व कई बार।

भो/हे माताजी वंदामि, वंदामि, वंदामि ..... कई बार

अत्र, अत्र, अत्र = (अत्र = यहाँ)

तिष्ठ, तिष्ठ, तिष्ठ ! = (तिष्ठ ! = ठहरो)

मन, वचन, काय व आहार जल शुद्ध है। गृह व भोजन शाला में प्रवेश कीजिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

★ पात्र के हिसाब से विधि/नवधा भक्ति अपनाते हुए विशेष ध्यान देना, आगे-आगे स्वयं जाते हुए, किन्तु पात्र को बिना पीठ दिखाये तथा विवेक के साथ जीवरक्षा करते हुए स्वयं पैर ऐसी जगह धोयें कि कहीं चींटी आदि जीव तो नहीं है। पानी नाली इत्यादि में तो नहीं जा रहा।

★ उच्चासन आदि यथायोग्य करके व्यवस्थित चौकी पर आहार सामग्री शुद्ध थाली व वर्तनों में लगाकर रखें व आहार से वस्त्रों को व मुख को दूर रखते हुए संकेतों में या धीमे व अल्प शब्दों में सामग्री का ज्ञान अतिथि को करायें।

★ आहार देते समय ध्यान रखें कि कोई भी गरम पदार्थ या सामग्री के बाद एकदम ठंडी सामग्री या जलादि न देवे। ठंडी और गरम वस्तुओं के बीच में अंतर रखकर बीच में अन्य सामग्री चला देवे।

★ शुद्धि स्पष्ट बोलें, व कहें हे स्वामिन्/माताजी मुद्रा छोड़कर अंजली बाँध आहार ग्रहण कीजिए।

दाता के गुणों की विशेषताएँ :-

1. **श्रद्धा** - पात्र का रत्नत्रय का आधार समझकर उस पर पूर्ण श्रद्धा रखें।
2. **भक्ति** - उनके गुणों में अनुराग रखते हुए प्रशंसात्मक स्तुति करें
3. **तुष्टि** - अतिथि अपने घर नहीं आये, व आहार देने न मिल पा रहा हो तो खेद-खिन्न न होते हुए संतोष धारण करें।
4. **विवेक** - पात्र की स्थिति बाल, वृद्ध, शिक्षाशील, तपस्वी आदि के अनुसार व देशकाल व स्वाध्याय का ध्यान रखते हुए आहार को क्रम से व पात्र की तात्कालिक स्थिति को देखकर उनकी परिचर्या करना विवेक गुण है।
5. **अलोलुपता** - आहारादि दान देकर प्रत्युपकार की आकांक्षा न करे कि इनसे मंत्र तंत्र मिल जावें। उदार भाव के साथ अतिथि का आहार सत्कार करना।
6. **क्षमा** - किसी कारण से आहार न दे पा रहे हों या किसी के द्वारा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंतराय हो जाये तो क्रोध नहीं करना। क्षमा भाव धारण करना। दूसरे दाताओं से ईर्ष्या नहीं करना उनके यहाँ आहार होते देखकर व अन्य कारणों से।

7. **सामर्थ्य/शक्ति :-** अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान देना, क्लेश का कारण बने ऐसा दान नहीं देना।

– आजकल केवल वस्त्रों की शुद्धि को ही 'सोला' कहते हैं। जबकि 'सोला' कहते हैं जिनमें निम्नलिखित 16 बातों की शुद्धि होती है 9 प्रकार की नवधा भक्ति, 7 प्रकार के दाता के गुण [9+7 = 16]

आहार दाता के नियमः-

★ शुद्ध धोती व दुपट्टा सिर ढांकते हुए पहनना

★ रात्रि भोजन का त्याग [कम से कम अन्न का]

★ सप्त व्यसन का त्याग होना। [जुआ खेलना, माँस सेवन, मदिरा-पान करना, चोरी करना, परस्त्रीसेवन, [गमन करना] वेश्यागमन करना, शिकार खेलना

★ नशे का त्याग [शराब तम्बाकू, गांजा भांग, बीड़ी, सिगरेट आदि]

★ चौके में ध्यान देना बार बार दाताओं का परिवर्तन न करें। एक व्यक्ति की जगह खाली रखें जो कि आधे आहार के बाद दाता आहार दे सके।

★ मुख्यदाता जिन्हें सामग्री व साधू के आहार क्रम का ज्ञान है, वे वहीं ध्रुव रुप से मुनि, के लिए हो तो खडे रहें, आर्यिकादि के लिए हो तो वहीं बैठे रहें।

★ चौका लगाने वाले एवं आहार देने वाले दाताओं को अपना मन शांत और भाव शुद्ध रखना चाहिए।

★ उठते समय सावधानीपूर्वक देखभाल कर उठें बैठें। किसी वस्तु को घसीटें नहीं, धीरे से उठाकर रखें।

★ अनावश्यक न बोलें, जिससे थूक व अपशब्द न निकले।

★ फलों व नमक को अग्नि पर प्रासुक करके रखें, कच्चे फलों को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खूब पक जाने दें जिससे अपक्व का दोष न आये। फलों को साफ कर, प्रासुक जल से धोकर पश्चात अग्नि पक्व करें।

★ वस्त्र भूमि बाल व अंगों में हाथ लग जाने पर धोयें।

★ शुद्धि बोलते समय बर्तनों से दूर मुख करके बोलें तथा हाथ में कोई आहार सामग्री न हो।

चौके में नहीं करने योग्य कार्य :-

★ शोर अनावश्यक बातें, जल्दबाजी व भीड़ न करें।

★ प्रकाश व हवा को नहीं रोकना तथा साधु को घेरकर नहीं बैठना।

★ अस्वस्थ, बाल-वृद्ध व अनजान व्यक्ति तथा 8 वर्ष से कम उम्र वालों से एवं जिनको दिखता ना हो उनसे आहार नहीं दिलाना।

★ अतिथि की अंजली में आहार देने के बाद पुनः नहीं उठाना।

★ अतिथि के आने पर भोजन (आरंभ) बनाना आदि कार्य नहीं करना।

★ अशुद्ध जल व अशुद्ध सौंदर्य प्रसाधनों का उपयोग नहीं करना

★ बाल खुले न छोड़ें व वस्त्रों से जमीन को न झाड़े इसका ध्यान रखें

★ सनमाइका वाली चौकी पाटे पर आहार सामग्री न रखें व चौके में शंख सीप कौड़ी आदि की शो माला न लटकायें।

★ ज्यादा चिकने व तरल एवं गीले पदार्थों का शोधन करते हुए अपने हाथ में ज्यादा समय न रखें बार बार हर किसी को न दें, चम्मच में रखकर ही दें।

★ औषधि सावधानी और विवेक के साथ दें, ऐसा न हो दवा कुछ वर्तन में, कुछ हाथों में रह जाये अन्यथा औषधि का कोई प्रभाव न होगा। अनुपात बदल/बिगड़ जाने से वह लाभदायक नहीं हो सकती।

★ अस्वस्थ के स्वस्थ होने की, पात्र के संयम वृद्धि हो, ऐसी भावना के साथ पूर्ण आहार होने तक समता भाव रखें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिशिष्ट

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादाएँ :

अघ्हन से फागुन तक	चैत्र से आषाढ़ तक	श्रावण से कार्तिक तक	
न. पदार्थ	शीत	ग्रीष्म	वर्षा
1. बूरा	1 मास	15 दिन	7 दिन
2. दूध (दूहने के पश्चात)	2 घड़ी	2 घड़ी (1 घड़ी 24 मिनट)	2 घड़ी
दूध (उबालने के पश्चात)	8 पहर	8 पहर (पहर 3 घंटा)	8 पहर
नोट यदि स्वाद बिगड़ जाये तो त्याज्य है			
3. दही (गर्म दूध का)	8 पहर 16 पहर	8 पहर 16 पहर	8 पहर 16 पहर
4. छाछ			
बिलोते समय पानी डालें तो	4 पहर	4 पहर	4 पहर
पीछे पानी डालें तो	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी
5. घी	(जब तक स्वाद न बिगड़े।)		
6. तेल	जब तक स्वाद न बिगड़े।		
7. गुड़	जब तक स्वाद न बिगड़े।		
8. आटा सर्वप्रकार	7 दिन	5 दिन	3 दिन
9. मसाले पिसे हुए	7 दिन	5 दिन	3 दिन
10. नमक पिसा हुआ	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी 48 मिनिट
मसाला मिला दें तो	6 घंटे	6 घंटे	6 घंटे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

11. खिचड़ी, रायता, कढ़ी दाल, तरकारी (सब्जी)	2 पहर	2 पहर	2 पहर
12. अधिक जल वाले पदार्थ रोटी, पूरी, हलवा, बड़ा आदि	4 पहर	4 पहर	4 पहर
13. मौन वाले पकवान	8 पहर	8 पहर	8पहर
14. बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
15. मीठे पदार्थ मिला दही	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी
16. गुड़ मिला दही व छाछ	सर्वथा अभक्ष्य होता है।		

लौकिक अशुचिता / अपवित्रता क्या है, उसको कैसे दूर करना :

काम सेवन से, अत्येष्टि से, चाण्डाल के स्पर्श से केश क्षौर कर्म (कटिंग करवाने) से, रजस्वला (एम. सी.) स्त्री से स्पर्श हो जाने से उत्पन्न अशुचिता को पूर्ण स्नान के माध्यम ये शुद्ध करना अन्य प्रकार से भी जो अशुचिता है उसको भी जल के माध्यम से धोना।

जैसे अपने नाक, कान, मुख के मल को धोना, खून, हाड़ मांस, चर्म आदि से स्पर्श होने पर धोना वस्त्र बदलकर शुद्ध वस्त्र पहिनना।

सूतक पातक विषयक जुगुप्सा/ग्लानि छोड़ना चाहिए:-

लोक व्यवहार शोधनार्थ सूतक आदि का निवारण करने के लिए जो लौकिकी जुगुप्सा की जाती है, वह छोड़ने योग्य है

श्रावको!

अणुव्रती श्रावकों को अपने भोजन की शुद्धि बनाये रखने के लिए अथवा एषणा शुद्धि के लिए यथोक्त सूतक पातक का भी त्याग कर देना चाहिए। भावार्थ किसी के सूतक पातक में भोजन नहीं करना चाहिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूतक-पातक किसको व कहाँ नहीं लगता:-

जिस वंश वाला यजमान बिम्ब प्रतिष्ठा करा रहा है, उसके वंश कुल गोत्र में उस दिन से अशौच नहीं माना जाता अर्थात् जिस दिन नान्दी अभिषेक हो गया, उस दिन से यजमान के कुल में सूतक तथा पातक नहीं लगता।

सूतक पातक शुद्धि काल प्रमाण :-

ब्राह्मण 5 दिन में, क्षत्रिय 10 दिन में, वैश्य 12 दिन में और शूद्र 15 दिनों में पातक के दोष से शुद्ध होते हैं।

व्यवहार गत सूतक पातक शुद्धि का काल प्रमाण :

अवसर	जन्म	मरण	अवसर/स्थिति	जन्म मरण
3 पीढ़ी तक	10 दिन	12 दिन	1 महीने तक का बालक	1 दिन
4 पीढ़ी तक	10 दिन	10 दिन	8 वर्ष तक का बालक	3 दिन
5 पीढ़ी तक	6 दिन	6 दिन	3 मास तक का गर्भपात हो	3 दिन उसी स्त्री
6 पीढ़ी तक	4 दिन	4 दिन	इसके पश्चात जिसने मास	मात्र को
7 पीढ़ी तक	3 दिन	3 दिन	का गर्भपात हो	उतने दिन
8 पीढ़ी तक	8 पहर	8 पहर	गृहत्यागी सन्यासी	1 दिन
9 पीढ़ी तक	2 पहर	2 पहर	गृहस्थी परदेश	खबर आने
पुत्री, दासी-दास		3 दिन	में मरे तो	के पीछे
अपने घर में				शेष दिन
गाय भैंस आदि	1 दिन		अपघात मृत्यु	6 माह
(अपने घर में)				
अनाचारी				
स्त्री पुरुष के घर		सदा	सदा	

लेखक- श्री देशराज जैन, (एडवोकेट)
P.O. TADA, SAGAR (M.P)

जिस अनाज के बराबर दो दल हो जाते हैं उसको कच्चे दूध का या उबले दूध के जमाये दही छाछ के साथ नहीं खाना क्योंकि लार के सबंध में मुख में संमूर्छन जीव पैदा हो जाते हैं। अतः दही के साथ द्विदल खाना अभक्ष्य है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अलौकिक-निर्ममत्व

श्री मूलचन्द जी लुहाड़िया

वैराग्य एवं त्याग के महापथ के यात्री सन्त, मुनिराज, भारतीय संस्कृति के प्राण तत्त्व है। भारतीय जन-जीवन की पृष्ठभूमि सन्तों के आदर्शों पर निर्मित हुई है। उन सन्तों का व्यक्तित्व अगर अलौकिक निर्ममत्व से युक्त हो तो यह सन्त परम्परा का महान सौंदर्य है। सन्त परम्परा की शोभास्वरूप अलौकिक निमर्मत्व रूप व्यक्तित्व आचार्य श्री के जीवन में हर समय देखने को मिलता है। कभी भी किसी भी शिष्य के प्रति कुछ भी कहते समय उनकी भाषा में ममत्व भाव देखने में नहीं आता। एक बार की बात है बुन्देलखण्ड में प्रथम प्रवेश के समय आचार्य श्री व क्षुल्लक श्री समयसागर जी कटनी में गंभीर रूप से बीमार हो गये। रोग की चपेट से किंचिन्त् स्वस्थ पाते ही आचार्य श्री रोगग्रस्त क्षुल्लक.जी श्री समय सागर महाराज को कटनी ही छोड़कर कुण्डलपुर आ गये। पीछे से क्षु. श्री की स्थिति और भी अधिक चिन्ताजनक हो गई। ऐसी दशा में पं. जगमोहन लाल जीने एक पत्र में समाचार देकर दो व्यक्तियों को शीघ्र ही कुण्डलपुर भेजा। पत्र में पंडित जी ने श्री समयसागर जी महाराज के रोग की गम्भीरता बताते हुए समाधि कराने के लिए आचार्य श्री से पुनः वापिस कटनी आने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की थी। गृहस्थ अवस्था के सहोदर एवं आचार्य अवस्था के प्रथम शिष्य के समाधि लेने जैसे रोग की भीषणता के समाचारों से भी आचार्य श्री की प्रशान्त मुद्रा पर तनिक भी विषाद की रेखा अंकित नहीं हो पाई। उस समय मोह विजेता आचार्य श्री का समता एवं शान्त भाव से दिया गया छोटा सा उत्तर था कि "यदि समाधि का अवसर आ गया हो तो पंडित जी ठीक से समाधि करा देंगे।" बस इतना कह कर आचार्य श्री अपने चिंतन में डूब गये। धन्य है इनका "अलौकिक निर्ममत्व"।

'हम सबके गुरू'

व्यवहार में सहज निर्ममता के कारण इतने विशाल संघ में से कोई भी साधु अथवा श्रावक आचार्य श्री के सर्वाधिक निकट होने का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दावा नहीं कर सकता, साथ ही उनकी शिष्यानुग्रह कौशल्य के कारण कोई भी आचार्य श्री एवं अपने बीच की दूरी का भी अनुभव नहीं करता। सभी शिष्य पृथक-पृथक चाहे वे मुनि हो, चाहे आर्यिका हो, चाहे ऐलक हो, क्षुल्लक हो, चाहे ब्रह्मचारी भाई अथवा ब्रह्मचारिणी बहिने हो, अपने आप में ये महसूस करते है कि आचार्य श्री का वरद हस्त सदैव उनके सिर पर है और उन्हें संयम में दृढ़ता के लिए सम्बल प्रदान करता रहता है। यही कारण है कि समव्यवहार के कारण सभी शिष्य परस्पर में, अपनी भाषा में कहते रहते है कि आचार्य श्री मुझे बहुत चाहते है, दूसरा कहता है - मुझे बहुत चाहते है। ठीक उसी प्रकार स्थिति होती है कि बहुत सारे लोग नीचे धरती से आसमान में सूर्य को देखकर कहते है कि ठीक मेरे सामने सूर्य है, दूसरा कहता है - ठीक मेरे सामने। सूर्य एक है लेकिन सब उसे ठीक अपने सामने ऊपर पाते है, ठीक वैसे ही आचार्य श्री एक है लेकिन वे अपने प्रत्येक शिष्य के सामने पूर्ण रूप से पृथक्-पृथक् रह लेते है। उनका यह आलौकिक निर्मम वात्सल्यमय व्यवहार बड़ा ही प्रभावकारी है।

मूक-माटी

—आचार्य श्री विद्यासागर जी

इस युग के
दो मानव
अपने आप को
खोना चाहते हैं
एक
भोग राग को
मद्यपान को
चुनता है;
और एक
योग त्याग को
आत्म-ध्यान को
धुनता है।
कुछ ही क्षणों में
दोनों होते
विकल्पों से मुक्त।
फिर क्या कहना
एक शव के समान
निरा पड़ा है
और एक
शिव के समान
खरा उतरा है।

■ ■ ■

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रभावक चुम्बकीय व्यक्तित्व

आचार्य श्री के प्रभावक चुम्बकीय व्यक्तित्व से कौन परिचित नहीं है, जो भी उनके चरणों में प्रथम बार गया हे उसने इसका अनुभव किया है। अपने आप को नास्तिक की कोटि में रखने वाले भी इससे प्रभावित हुए है और धर्म मार्ग पर आगे बढ़े है।

एक बहिन जिसके परिवार के प्राय: लोगों ने गुरुदेव की महिमा सुन, दर्शन का लाभ ले लिया था उस समय जबकि बुन्देलखण्ड में आचार्य श्री प्रवेश करके, श्री कुण्डलपुर जी क्षेत्र में आये थे। उस बहिन ने भी आचार्य श्री के प्रभावक व्यक्तित्व को सुना था, दूर से ही, कि आप बहुत अच्छे प्रवचन करते है, आपकी वीतराग छवि की छटा बड़ी ही प्रभावकारी है, आप किसी को नजर उठाकर देखते भी नहीं हमेशा नासा-दृष्टि, शास्त्र स्वाध्याय, तत्त्व चर्चा में मग्न रहते है, जो आपके एक बार दर्शन कर लेता है वह निहाल हो जाता है। किसी ने ऐसा अनुभव कर दो पंक्तियां लिख ही दी -

"तुम में कैसा सम्मोहन है, या है कोई जादू टोना।
जो दर्श आपके कर जाता, नहीं चाहे कभी विलग होना।।"

गुरु-गुणगान सुन मन में एक बार अति तीव्र भावना हुई आपके दर्शन की, योग-संयोग की बात है कि सागर से कुण्डलपुर बस जा रही थी, वह भी गई-पूरे मार्ग में बड़ी उत्सुकता रही, वहां पहुंचकर जैसा सुना था वैसा ही पाया, वीतराग छवि के दर्शन का प्रभाव रहा कि वीतराग धर्म मार्ग के प्रति आस्था जागृत हुई-सुबह से शाम तक सभी आवश्यकों सहित निर्दोष चर्या से युक्त गुरु-उपदेश भी उसे मिला - नेत्र भी तृप्त हुए, कर्ण भी तृप्त हुए। शाम को आचार्य भक्ति के उपरान्त बड़े बाबा के पुन: दर्शन कर वापिस सागर आने का समय हुआ, लोग बार-बार बुलाने लगे लेकिन वह एकमात्र उस व्यक्तित्व से ऐसी प्रभावित हुई और उसे लगा कि अब मुझे यहां से कोई दूर नहीं कर सकता; वह गुरु जी के व्यक्तित्व से ऐसे आकर्षित हो गई जैसे कि चुम्बक से लोहा आकर्षित हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाता है, फिर अपने आप वह लोहा दूर नही हटता, पकड़ कर अलग करना पड़ता है, वैसे ही वह अपने आप गुरु सान्निध्य से दूर नहीं होना चाहती थी लेकिन साथ जाने वालों ने उसको जबरदस्ती अलग कर दिया। परन्तु कुछ वर्ष उपरान्त पुनः उनके प्रभावक व्यक्तित्व के प्रभाव में उसने प्रभावित हो अपना जीवन समर्पित कर दिया।

ये आज के युग के महान आचार्य हैं इनके चुम्बकीय प्रभावक व्यक्तित्व की ओर सैकड़ों परिवारों के शिक्षित युवक-युवतियाँ आकर्षित हो इन्द्रिय भोगवादी संस्कृति से मुंह मोड़कर वैराग्य की ओर कदम बढ़ाते हुए उनसे संयम प्रदान करने की प्रार्थनाएँ करते रहते है। योग्यता देखकर गुरुदेव संयम प्रदान कर उनका जीवन स्वपर कल्याणमय बना देते है।

धन्य-धन्य है उन गुरुवर का प्रभाव और धन्य है वे जो उस प्रभाव से प्रभावित हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे।

आप जानना चाहेंगे वो कौन है। वो हैं, जिन्हें हम सब जानते हैं पू. आर्यिका दृढ़मति माताजी के नाम से।

BRIEF STORY OF TRUTH

Self is self, and matter is matter,
The Twain can never meet in one.

"The Path of Victory"
In all hours of day and night
Sitting, Walking or Sleeping
To conquer the evil of Egotism,
Think, meditate and ever feel.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"आचार्य श्री के मनोरंजक शैली"

तेंदुखेड़ा में जब आचार्य श्री के दर्शन आर्यिका श्री गुरुमति जी के साथ समस्त आर्यिकाओं को मिले, गुरु के पहुँचने के पूर्व ही सभी वहां गुरुदर्शन की प्रतीक्षारत थे। प्रतिदिन प्रातःकाल आचार्य भक्ति के उपरान्त 'समयसार' जी ग्रन्थ की गाथाओं का सामूहिक पाठ चलता था, बाद में तत्त्व चर्चा होनी थी, शीत का समय था।

एक दिन तत्त्व चर्चा के उपरान्त संदर्भ वश कुछ विहार सम्बन्धी चर्चा चली। माता जी ने कहा कि आचार्य श्री, आप नये नये नगरों में, ग्रामों में, शहरों में पहले तो बहिनों को या हम लोगों को भेज देते है, इसके उपरान्त कोई मुनि संघ को, अंत में आप जाते हैं, इसमें क्यारहस्य हे? तब आचार्य श्री ने बड़ी मनोरंजक शैली में दृष्टांत देते हुए कहा कि बड़े-बड़े सरकस जो होते हैं उनको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने से पूर्व, वहां सरकस लगाने योग्य स्थान है या नहीं, देखने के लिए और सरकस का प्रचार-प्रसार कर टैण्ट आदि लगाने के लिए कुछ लोगों को पहले से ही भेज देते हैं, उसी प्रकार यहां समझ लेना चाहिए - जितने भी साधु और श्रावक वहां थे, सबके चेहरे पर हँसी आ गयी, हर्षमय वातावरण बन गया और इतना कहकर - पिच्छी, कमण्डलु उठा चल दिए जंगल की ओर।

"एक और नीलांजना जैसे बदल दो"

आर्यिका श्री गुणमति

त्वरित जिज्ञासा का समाधान देने में निपुण आचार्य श्री के समक्ष, जो कभी भी कोई व्यक्ति कैसी भी जिज्ञासा रख दे, तुरन्त उसका ऐसे चुने हुए, खिले हुए पुष्प की तरह अपने ज्ञान की खुशबू को शब्दों से बिखेर देते हैं कि सभी जिज्ञासु तृप्त हो जाते हैं और मौन हो उस खूशबू का आनंद लेने लग जाते हैं।

एक बार आचार्य श्री से कहा कि जिस जगह से हम लोग विहार करते है तो वियोग के विषाद में उनके अश्रु निकलने लगते है, उनके रोने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को देखकर, कभी-कभी अपने नेत्र भी सजल हो उठते हैं, समवेदना के प्रभाव से। उस समय क्या करना चाहिए, कैसे अपने आप को बदलना चाहिए ?- तुरंत गुरु जी का आकर्षक सम्बोधन मिला - कि "अपने आप को एक और नीलांजना जैसा बदल लेना चाहिए। कितनी महान साधना का अनुभव छुपा है इस वाक्य में, लेकिन वे इसका हमेशा अनुभव करते रहते है, हमेशा अपने आप को बदलते रहते हैं। एक ओर नीलाजना जैसे तभी तो इतनी बड़ी बात को इतने सहज शब्दों में कह दिया।

अनोखा मातृभाव

तुम्हीं हो माता पिता तुम्हीं हो-

(आर्यिका श्री मृदुमति जी)

"सिस्साणुग्गह कुसले" शिष्यों का अनुग्रह करने में कुशल आचार्य श्री के निकट एक बार ब्राह्मी आश्रम की सभी बहनें बैठीं थी। बात उस समय की है जबकि आश्रम की बहिनें कुण्डलपुर क्षेत्र पर रहकर साधना करतीं थीं, बाद में जब आश्रम की बहिनों को, सागर-समाज ने सागर उदासीन आश्रम स्थल पर रहने का निर्णय लिया जाने वाला था तब आचार्य श्री ने सोचा कि जिन्हें आश्रम में रहना है उनसे भी तो पूछें कि ये सब कहाँ रहना चाहते हैं। पूछा कि बोलो क्या करना हे, क्या निर्णय लेना हे सभी के मन में विचार आया कि इतने महान दूरदृष्टिकोण से चिन्तन करने वाले गुरुदेव हम तुच्छ बुद्धि वालों से निर्णय लेने की बात कर रहे हैं, इनको क्या जवाब दें इस संकोच से किसे ने कुछनहीं कहा क्योंकि इतने महान गुरुदेव को हम क्या निर्णय दें। तब आचार्य श्री ने बहिनों की संकोचमय वृति को देखकर प्रोत्साहन देते हुए कहा कि हाँ-हाँ, कुछ तो कहो, "उसी तरह कह दो जिस तरह अपनी माँ से कहते हो कोई भी बात।" मोक्षमार्गी आचार्य श्री का ये कैसा अनोखा मातृभाव।

"सिस्साणुग्गह कुसले" का साक्षात् दर्शन इनके आत्मदर्शनमय जीवन में भी देखने को मिलता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सामायिक : प्रक्रिया और विधि

(डा0 नेमीचंद जैन 'तीर्थंकर'' इन्दौर)

सामायिक में हम खड़े, या बैठे हैं अनुप्रेक्षण चल रहा है : 'संसार के सारे प्राणी मेरे मित्र हैं। मेरा किसी से बैर नहीं है; मुझसे किसी की शत्रुता नहीं है। मैं उन सारे कुकृत्यों से निवृत्त हुआ हूँ जिनसे मेरा आचार दूषित, प्रमत्त या शिथिलिन हुआ था। मन का घोड़ा विकृतियों की ओर दौड़ रहा था।

मैंने उस पर संयम की जीन कस दी है और चित्त की एकाग्रता की लगाम से मैंने उसे वीतरागता में दृढ़ कर लिया है.निष्फल कर दिया है मैंने उसके रागद्वेषों को, उसकी चंचलताओं को।''

सामायिक चल रही है। चित्त का आँगन बुहरा हुआ है। स्वच्छ है। स्वस्थ है। निरापद और निराकुल है। मन अनुशासन में है। आत्म-स्वरूप का चिन्तवन चल रहा है।

सामायिक तीन बार संभव है। यों साधु के जीवन में वह अनवरत/निरन्तर चलती है। श्रमण साम्य/माध्यस्थ की जीती-जागती तस्वीर है।

गृहस्थ इसे तीन बार कर सकता है। सूर्योदय, मध्याह्न, सूर्यास्त छह घड़ी, चार घड़ी, दो घड़ी एक सौ चवालीस मिनिट, छियानवे मिनिट, अड़तालीस मिनिट। उत्तम, मध्यम, जघन्य।

आधी सूर्योदय-रेखा से पूर्व, आधी सूर्योदय-रेखा के बाद आधी दुपहर से पूर्व, आधी दुपहर के बाद, आधी सूर्यास्त से पूर्व, आधी सूर्यास्त के बाद। इन तीनों में एक-एक संधि-बिन्दू आयेगा ही। उत्तम में बहत्तर मिनिट पर, मध्यम में अड़तालीस मिनिट पर जघन्य में चौबीस मिनिट पर।

गृहस्थ/श्रावक को चाहिये कि जहां तक संभव हो सामायिक में वक्त की पाबन्दी का पूरा ध्यान रखें। घड़ी के काँटों से चले। एक पल, एक मिनिट का फर्क भी न आने दें। ध्यान रहे काम जितना सूक्ष्मतर होता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है, समय की नियमितता का महत्त्व भी तदनुसार बढ़ जाता है।

सामायिक में शुद्धता और स्वच्छता का महत्त्व सर्वाधिक है। श्वास से मन को बुहारो, शुद्ध सूती/कम-से-कम वस्त्र शरीर पर धारण करें और ऐसे स्थान पर उसे संपन्न करें जो एकान्त हो, निर्जन्तुक हो, कोलाहल/व्यर्थ के शोरगुल से मुक्त हो। ऐसे स्थान पर शान्त/निराकुल चित्त से किसी कोमल वस्त्र, या पीछी से जमीन को बुहार और निर्वसन भूमि पर या उस पर आसन बिछा कर पूर्व अथवा उत्तर की दिशा में मुख कर निर्द्वन्द्व खड़े हो जाएँ।

सर्वप्रथम अंजलिबद्ध हाथ जोड़ें, अंजलि को मस्तक तक ले जाएं, और तीन आवर्तों के साथ एक शिरोनति (सिर झुकाने की क्रिया) तथा तीन बार 'नमोस्तु' के रोम-रोम में गूंजने वाले मौन उच्चार के साथ संपन्न करें। इसके बाद तीन बार ओम् नमः सिद्धेभ्यः' कहें और फिर रीढ़ की हड्डी को बिलकुल सीधा कर दोनों भुजाओं को उन्मुक्त छोड़ते हुए इस तरह खड़े हो जाएं की एड़ियों के बीच चार अंगुल का अंतर हो और अंगूठों के मध्य बारह अंगुल का। सिर सीधा हो आँख नाक-की नोक पर केन्द्रित हों, तथा पूर्व दिशा में मुख रखकर 27 श्वासोच्छ्वासों में 9 बार णमोकार महामन्त्र का जाप हो।

जाप मध्यम सुर में हो, किन्तु इस तरह से कुछ हो कि उसकी धुन रोम-रोम में झंकृत हो उठे।

ण्मोकार महामन्त्र तीन श्वासोच्छ्वासों में संपन्न करें। श्वास भीतर खींचते (इनहेल) करते हुए 'णमो अरिहताणं' बोलें, श्वास छोड़ते (एक्झेल) करते समय णमोसिद्धाणं कहें, फिर दूसरे दौर में श्वास लेते हुए 'णमो आयरियाणं का उच्चारण करें। तथा श्वास लौटाते वक्त 'णमो उवज्झायाणं' गूंजने दें। यह दूसरा दौर हुआ। तीसरे दौर में श्वास खींचते समय 'णमो लोए' बोलें तथा उसे छोड़ते वक्त 'सव्व साहूणं' कहें।

इस तरह एक संपूर्ण मन्त्रोच्चार में तीन और नौ में सत्ताईस श्वासेच्छ्वास होंगे। इसे एक 'कायोत्सर्ग' की संज्ञा दी गयी है अर्थात् एक कायोत्सर्ग संपन्न करने में सत्ताईस श्वासोच्छ्वासों पर नौ मन्त्रोच्चारों का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पहरा बैठाया जाएगा। इस परहेदारी का फल यह होगा कि हम स्वानुभूति की दिशा में मन्द किन्तु स्थायी गति से अपने कदम उठा सकेंगे। सामायिक का नाभिबिन्दु स्वानुभूति (सेल्फरिएलाइजेशन) है, यह वह रास्ता है जिस पर हम भेदविज्ञान की दिशा में स्व-स्व (सेल्फ-सिच्युएटेड) चूक सकते हैं। आत्मजागृति सामायिक का प्रथम फल है।

कायोत्सर्ग के बाद पूर्व दिशा से (तीन आवर्त + एक शिरोनति के बाद) दक्षिण में कायोत्सर्ग के लिए कटिबद्ध होने से पूर्व अपने घुटने जमीन पर टेकें, मस्तक से धरती का स्पर्श करें यानी अष्टांग नमस्कार करें और फिर जितने समय की सामयिक करनी हो उतने समय का संकल्प करें। प्रतिज्ञा करते समय शरीर पर जो परिग्रह हो उसे छोड़ शेष तमाम को त्याग दें। असीम शान्ति का अनुभव करें। शरीर की संपूर्ण दासता से इस्तीफा दे दें। अपने स्वामित्व को समझें। उसे तेजोमय रूप दें। अब हम दक्षिण दिशा में मुंह किये खड़े हैं और द्वितीय कायोत्सर्ग कररहे हैं। इसे संपन्न करने के बाद पश्चिम में तीसरा कायोत्सर्ग करें। अन्त में उत्तर में मुख कर चौथा कायोत्सर्ग संपन्न करें। देख लें कि इन चार कायोत्सर्गों में हमने 108 श्वासोच्छ्वासों के अन्तर्गत 36 बार महामन्त्र णमोकार का उच्चारण संपन्न किया है। 9-27, 9-27, 9-27, 9-27 के जाप/श्वासोच्छ्वासों के साथ ध्यान रहे कि हमारे द्वारा 12 आवर्त और 4 शिरोनतियाँ भी कर ली गयी हैं।

इतना कर चुकने के बाद हम पूर्व दिशा में मुंह कर सुस्थिर खड़े हो जायेंगे, या पद्मासन अथवा अर्द्धपद्मासन में बैठ जायेंगे, तथा सामायिक पाठ, आलोचनापाठ, बारह भावना, तथा मेरी भावना को एकाग्रचित्त से उनका रसास्वादन करते हुए आत्मतल्लीन होने का प्रयत्न करेंगे।

अन्त में सामायिक को उपसंहार पर लाते हुए मन नौ बार णमोकार मन्त्र को अपने मन:प्राण में अनुगुंजित करेंगे तथा आगामी सामायिक तक के लिए कुछ चरित्रिक प्रतिज्ञाएं लेगे; ताकि उपलब्ध एकाग्रता को सुरक्षित रखा जा सके। शास्त्रों में सत्रह प्रतिज्ञाएं चर्चित हैं; किन्तु हम वर्तमान संदर्भ में जितनी सार्थक समझते हों उतनी लें, किन्तु ली हुई प्रतिज्ञाओं का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राणपण से परिपालन करें।

ध्यान रखें। सामायिक से जो दृढ़ता और एकाग्रता प्राप्त होगी उससे न केवल हममे एक अभूतपूर्व आत्म जाग्रति घटित होगी वरन् दिन-भर के चर्यागत कार्य भी अधिक सफलता से संपन्न होंगे।

सामायिक का प्रमुख लक्षण है; स्वानुभुति की गहराइयों में उत्तर कर आत्मानन्द का रसास्वादन।

जैन ध्वज वंदना

तर्ज - जन-गण-मन अधिनायक जय हे . . .

शिवपुर-पथ- परिचायक जय हे, सन्मति युग निर्माता
गंगा कल-कल स्वर से गाती, तव गुण गौरव गाथा
सुर-नर-किन्नर तव पद-युग में, नित नत करते माथा
हम भी तव यश गाते सादर शशि झुकाते
हे सद्बुद्धि प्रदाता
दुखहारक सुखदायक जय हे, सन्मति युग निर्माता
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।1।। सन्मति.
मंगलकारक दयाप्रचारक, स्वग-पशु-नर उपकारी।
भविजन तारक कर्म-विदारक, सब जग तव आभारी।।
जब तक रवि-शशि-तारे, तब तक गीत तुम्हारे
विश्व रहेगा गाता
चिर सुख-शान्ति विधायक जय हे, सन्मति युग निर्माता
जय हे जय हे जय हे, जय जय जय जय हे।।2।। सन्मति.
भ्रातृ भावना भुला परस्पर, लड़ते हैं जो प्राणी
उनके उर में विश्वप्रेम फिर, भरे तुम्हारी वाणी
सबमें करूणा जागे, जग से हिंसा भागे
पाये सब सुख-साता,
हे दुर्जय दुःखत्रायक जय हे, सन्मति युग निर्माता
जय हे जय हे जय हे, जय जय जय जय हे ।।3।। सन्मति.
शिवपुर पथ-परिचायक . . . . . .

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ध्यान दीजिए

(मंदिर में न करने योग्य कार्य)

- मंदिर में नाक, कान, आँख का मैल निकालना नहीं।
- मंदिर में मल मूत्र आदि करना नहीं।
- खाँसी कफ आदि करना नहीं।
- वमन, कुल्ला आदि करना नहीं।
- हाथ पैर के नख तोड़ना नहीं।
- शरीर का मैल व पसीना डालना नहीं।
- अंगुली चटकाना फोड़े आदि को फोड़ना नहीं।
- दन्तमंजन व दांतों में सींक करना नहीं।
- घाव आदि पर पट्टी करना नहीं।
- शौच आदिको पहनकर गये हुये वस्त्र को पहनकर आना नहीं।
- पैर पसारकर बैठना व गुप्त अंगादि दिखाना नहीं।
- आलस्य करना, जम्भाई लेना व छींकना नहीं।
- दीवाल व खम्बे के सहारे बैठना नहीं।
- हाथ, पैर, शरीर दबाना नहीं।
- अधो अंग (नाभि से नीचे के अंग) खुजाना नहीं।
- गद्दी तकिया लगाकर बैठना नहीं।
- पैर पर पैर रखकर ऊँट के समान बैठना नहीं।
- पगड़ी साफा आदि बाँधना नहीं।
- स्नान, उबटन, तेल, कंघा करना नहीं।
- तेल तथा इत्र, सेन्ट लगाना नहीं।
- शयन करना व बैठे बैठे ऊँघना नहीं।
- पंखा व रुमाल आदि से हवा करना नहीं
- आग तापना नहीं।
- चमर छत्र अपने ऊपर करना नहीं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

- ✧ दाढ़ी मूँछ पर ताव देना नहीं।
- ✧ जूता, चप्पल मोजा पहनकर आना नहीं।
- ✧ शर्त व ताश आदि लगाना व खेलना नहीं।
- ✧ दर्पण में केश तिलक सँवारना नहीं।
- ✧ फूलों की माला हार आदि पहनकर आना नहीं।
- ✧ ऊनी वस्त्र व रेशमी वस्त्र पहनकर आना नहीं।
- ✧ चमड़े की वस्तु कोई भी मन्दिर में लाना नहीं।
- ✧ रोना बिलखना हिचकी लेना नहीं।
- ✧ गाली भंड वचन या कटुक वचन करना नहीं।
- ✧ सब्जी, अनाज, पापड़ आदि मंदिर में सुखाना नहीं।
- ✧ बिना पैर धोये मंदिर में प्रवेश करना नहीं।
- ✧ पान, तम्बाकू, भांग आदि लाना या खाना नहीं।
- ✧ पक्षी आदि मंदिर में पालना नहीं।
- ✧ भोजन पान आदि करना नहीं।
- ✧ औषध चूर्ण गोली आदि खाना नहीं।
- ✧ प्रसाद आदि मन्दिर में खाना नहीं।
- ✧ होली आदि मन्दिर में खेलना नहीं।
- ✧ फटाके आदि मंदिर में फोड़ना नहीं।
- ✧ बुरे संकल्प विकल्प करना नहीं।
- ✧ बैर व ईर्ष्या भाव रखना नहीं।
- ✧ खाली हाथ मंदिर आना नहीं।
- ✧ वैद्यक ज्योतिष आदि करना नहीं।
- ✧ राज्यादिक के भय से छिपना नहीं।
- ✧ झूठ गर्हित अप्रिय वचन कहना नहीं।
- ✧ द्रव्य यथायोग्य स्थान पर चढ़ाना ।
- ✧ रिश्वत घूंस आदि लेना देना नहीं।
- ✧ शस्त्र आदि लेकर मंदिर आना नहीं।
- ✧ गाय भैंस आदि मंदिर में बाँधना नहीं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

- ✧ विवाह सगाई संबंधी चर्चा करना नहीं।
- ✧ उधार लेन देन किसी से करना नहीं।
- ✧ धन उपार्जन व्यापार की चर्चा करना नहीं।
- ✧ इलायची, लौंग, मसाला आदि खाना नहीं
- ✧ लड़ाई झगड़ा क्लेश विसम्बाद करना नहीं।
- ✧ बिना हाथ धोये शास्त्र व गन्धोदक लेना व छूना नहीं।
- ✧ चढ़ा हुआ द्रव्य खरीदना बेचना नहीं।(छूना नहीं)
- ✧ जुहार, मुजरा, बंदगी आदि मंदिर में करना नहीं
- ✧ बिरादरी पंचायत संबंधी मीटिंग मंदिर में करना नहीं।
- ✧ द्रव्यादि अधिक कम व अधिक ज्यादा चढ़ाना नहीं।
- ✧ दर्शन करते हुए व्यक्ति के सामने खड़े होकर दर्शन करना नहीं।
- ✧ दूसरे को बाधा हो इतना जोर से बोलना नहीं।
- ✧ शास्त्र, मालादिअयथायोग्य स्थान पर रखना व उठाना नहीं।
- ✧ देव, शास्त्र, गुरु से ऊँचे स्थान पर बैठना नहीं।
- ✧ विकार उत्पन्न करने वाले चित्र लगाना व लगवाना नहीं।
- ✧ बिना शुद्ध वस्त्र पहन कर गर्भगृह में प्रवेश करना नही।
- ✧ शास्त्र, प्रतिमा आदि को नाभि के नीचे के स्थानों से स्पर्शित करना नहीं।
- ✧ नेलपालिश, लिपिस्टक आदि लगाकर मंदिर आना नहीं।
- ✧ मंदिर में प्रत्येक कार्य यत्नाचार पूर्वक करना।
- ✧ मंदिर आते वक्त परिक्रमा लगाते वक्त नीचे देखकर चलना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शास्त्र स्वाध्याय (सभा) में न करने योग्य कार्य

- शास्त्र को पैर पर रखकर पढ़ना नहीं।
- शास्त्र को नाभि के नीचें के अगों से स्पर्श करना नहीं।
- शास्त्र के पन्ने हाथ में थूक लगाकर पलटना नहीं।
- शास्त्र सभा में बाद में आकर आगे बैठना नहीं।
- शास्त्र सभा में बीच से उठकर जाना नहीं।
- शास्त्र सभा में टिककर बैठना नहीं।
- शास्त्र सभा में आगे पैर कर के बैठना नहीं।
- शास्त्र पढ़ते समय हँसी मजाक करना नहीं।
- शास्त्र सभा में इधर उधर की बातें करना नहीं।
- शास्त्र की पूर्ण रूप से विनय करना।

गुरु के निकट न करने योग्य कार्य

- गुरु के निकट व्यर्थ की गपशप मत करो।
- गुरु के निकट किसी दूसरे की निन्दा मत करो।
- गुरु से अयतना से मत बोलो।
- गुरु के समक्ष पैर पर पैर रखकर मत बैठो।
- गुरु के समक्ष छल कपट मत करो।
- गुरु के निकट टिककर मत बैठो।
- हमेशा गुरु के पीछे चलो।
- गुरु से कुछ भी बात मत छिपाओ।
- गुरु के समक्ष किसी प्रकार का भी गर्व मत करो।
- गुरु जी से हमेशा नीचे दृष्टि रखो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

MY SELF (SOUL)

"Acharya Vidyasagar Ji"

Oh ! passionlessness which is my nature
So I am myself certain best teacher
Anent (Have't) consciousness of imperfection.
I have no eternal and real relation.
Objects of pleasure are like sharp razor,
Whereby the soul deviates into danger.
My nature is free from deceitfulness,
Because, filled with sure uprightness,
I am the store of asset of knowledge.
So I am free from attachment and rage.

THE DISCOURSE DIVINE

(Ishtopadesha)

(Swami Pujayapada Acharya Ji)

1. Whatever action is beneficial to the soul is harmful to the body, and whatever action is beneficial to the body is harmful to the soul.

2. Devotion to ignorance bestows ignorance, and devotion to Gnana (Self-knowldge) bestows knowledge; for it is well established that a thing can grant only that of which it is possessed !

3. I am one, I am without delusion, I am knower of things, I am knowable by master Ascetics, all other conditions that arise by the union of the not-self are foreign to my nature in every way !

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"विद्या सुधा सूक्ति"

धर्म से रहित, दया से रहित, परोपकार से रहित जो जीवन है वह जीवन कैसा जीवन? "मनुष्यरूपेणमृगाश्चरन्ति" मनुष्य के रूप में पशु है। उनसे यह पृथ्वी भी भार का अनुभव करती है। धिक्कार है उस भारमय जीवन को।

★ आँखें हों तो दृश्य समाहित हो सकता है, अन्यथा दृश्यों को ढेर भी लगा दिए जायें, तो कुछ नहीं, क्योंकि जहाँ पर दृश्य है और दृष्टि नहीं है तो आप सृष्टि का निर्माण भले ही करते चले जाइये, तृप्ति तीन काल में भी नहीं होने वाली।।

★ धर्म का अर्थ यही है कि दीन दुःखी जीवों को देखकर आँखों में करूणा जल छलके, अन्यथा नारियल में भी छिद्र हुआ करते हैं।

★ धर्म कोई जबरदस्ती का सौदा नहीं हे, जबरदस्ती ग्रहण किया गया धर्म अंदर तक नहीं पहुँच पाता। जैसे माँ बच्चे को जबरदस्ती दूध नहीं पिला सकती, अगर पिला भी दे तो उससे लाभ के स्थान पर हानि ही होगी।

★ धर्म मात्र? मानने का नहीं, किन्तु महसूस करने का है, क्योंकि धर्म मात्र परिभाषा नहीं वरन् प्रयोग भी है।

★ अन्तरंग की आँख जितनी पवित्रता से खुलेगी, उतना ही पवित्र पथ देखने में आयेगा, ज्यों ही इसमें दूषण आने लग जायेंगे, तथा पथ की पवित्रता भी नहीं दिख सकेगी।

★ महावीर भगवान के दरबार में अन्याय और अनीति के लिए कोई स्थान नहीं, यहाँ तो नीति-न्याय के अनुसार सादगीमय जीवन से काम लेना होगा।

★ यह संसार एक अथाह समुद्र की भाँति है, इसे केवल अपने बाहुबल से पार नहीं किया जा सकता, इसको पार करने के लिए सच्चे गुरु वीतरागी, निर्ग्रन्थ गुरु का अवलम्बन अनिवार्य है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

★ चेतन तत्व की उपलब्धि के लिए गहराई में उतरना पड़ता है, जो केवल तट पर बैठे रहते हैं, उन्हें केवल लहरें ही हाथ लगती है, मोती तो गहराई में ही मिल पाते हैं।

★ अनुशासन ही विश्व में शान्ति, आनन्द फैला सकता है, जो व्यक्ति मात्र कषाय के वशीभूत होकर आत्मानुशासन न करके विश्व के ऊपर शासन चलाना चाहता है वह व्यक्ति खुद भी शासित नहीं है।

★ आत्मानुशासन के लिए न देश की, न पर की, न वित्त की, न और किसी की आवश्यकता है एक मात्र आवश्यकता है अपनी कषायों पर कुठाराघात करने की।

★ तुम किसी की गलतियाँ क्यों देखते हो क्या तुम्हें भगवान ने न्यायाधीश बनाकर भेजा है।

★ यदि वर्षा होना बन्द हो जाए तो अकाल का कुहरा छा जायेगा, वैसे ही धर्म की वर्षा न हो तो मानव जीवन में दुःख संकटों का प्रकोप छा जायेगा।

★ खाते खाते कभी भी केवल ज्ञान का खाता खुल नहीं सकता।

★ प्रेम की स्याही और आचरण की कलम से ही जीवन का काव्य निर्मित होता है।

★ अपनी पहचान मानवता की पहली सीढ़ी है।

★ उत्साह का जल आलस के मल को बहाने में सक्षम है, उत्साह जीवन की वह सम्पदा है, जो संसार की किसी भी वस्तु को खरीद सकता है।

★ यह मनुष्य पर्याय कोटि-कोटि जन्मों के उपरांत प्राप्त होती हैं, अतः इंद्रियों को और मनको सम्यक् ज्ञानोपलब्धि में लगाना चाहिए, भोगों की प्राप्ति में नहीं।

★ जीवन निर्वाह प्रत्येक गति में किया जाता है परंतु जीवन निर्वाण मनुष्य गति से ही संभव है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

★ नदी तीव्र प्रवाह के साथ बह रही हो, उसमें नाव नहीं चल सकती ऐसा नहीं है बल्कि खेवनहार/नाविक में यदि चतुराई है तो वह तीव्र प्रवाह में भी नाव को चला सकता है। वैसे ही कर्म भी तीव्र प्रवाह को लेकर उदय में आते हैं तो नियम से बंध हो ही, यह नियम नहीं किंतु जो ज्ञानी होते हैं, वे उस तीव्र प्रवाह में भी समताभाव रखकर बंध से बचते चले जाते हैं।

★ "धीरा सो गंभीरा, उतावला सो बावला"।

★ वे आँखें किस काम की, जिनमें ज्ञान होते हुए भी, संवेदना की दो बूंदें भी नहीं आती। वे आँखें लोहे की हैं, पत्थर की हैं। हमारे किसी काम की नहीं।

★ 'जिन' भगवान की उपासना करने वाले जैन माने जाते हैं यानि हमारे साथ ऐसे 'जिन' भगवान का नाम जुड़ा है, जो उन भगवान को इंगित करता है, रागद्वेष नहीं करते, विषय कषाय से रहित होते हैं, आरंभ परिग्रह से रहित होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अगर हम जैन हैं, तो जैनों जैसा कार्य भी होना चाहिए। "जिन" भगवान के आदेशानुसार सिद्धान्तों का, आचरणों का अनुसरण करना चाहिए।

★ दिगम्बरत्व ही एक ऐसा बाँध है, जिसको लांघने का साहस वादियों में नहीं हो सकता, ज्यों ही यह बाँध टूटा, त्यों ही धर्म का निर्मल स्वरूप नष्ट हो जाएगा।

★ अनुशासन सब कलाओं की जननी है। अनुशासन का पथ, फूलों से नही कांटों से भरा है किंतु उस पथ से गुजर जाने के बाद हर कांटा फूल बनकर मुस्करा उठता है।

★ अनुशासन का अस्वीकार जीवन की पहली हार है।

★ वर्तमान का पुरुषार्थ अतीत और अनागत दोनों को संभाल कर रखता है। भविष्य की चिन्ता में वर्तमान को अंधकारमयमत बनाओ, यदि वर्तमान को अंधकार मय बना दिया, तो भविष्य कभी प्रकाशमान नहीं हो सकता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुक्तक

"ये ऐसे संत जिन्हें नमते उर का क्रन्दन खो जाता है,
जिनके चरणों में अंगारा, आकर चंदन हो जाता है।
चेतनता इतनी जग जाती चिन्तन तन्मय हो जाता है,
इनका वंदन करते करते खुद का वदंन हो जाता है।" ।।1।।

मत सोच
लोग तेरे बारे में क्या सोचते हैं?
क्या जानते हैं?
क्या समझते हैं?

सोच ये कि
तू अपने बारे में क्या सोचता है?
क्या जानता है?
क्या समझता है?
अपने आप को।।2।।

आपनी आत्मा को कुंदन बना लेते हैं जो लोग,
महानता का चंदन लगा लेते हैं जो लोग,
युग झुकता है उनके श्री चरणों में
रत्नों जैसी मति बना लेते हैं जो लोग।।3।।

"साधना को सत्य का श्रृंगार दो
कामना को आचरण-आधार दो
तब हमारी अर्चना फल लायेगी
भावना को पुरुषार्थ का आकार दो"।।4।।
इंदियों में सुख मानना एक सपन है।
इन्हीं में डूबे रहना जिन्दा कफन है।
शांति को करते ये दफन हैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शांति प्रदाता गुरू को मेरा नमन है।।5।।
काँटे हों या फूल, फर्क क्या पड़ता बोलो,
कुटिया हो या महल आँख भीतर की खोलो
माटी हो या स्वर्ण जागना तो भीतर है,
जो भीतर से जगा है, कौन उससे बढ़कर है।।6।।

मेघ आते बहुत हैं मगर कुछ ही बरसते हैं,
फूल खिलते बहुत मगर कुछ ही महकते हैं।
आते और जाते, इंसान तो बहुत हैं धरा पर
मगर इन्सानियत को कुछ ही समझते हैं।।7।।

जीवन दर्द की कसौटी है, इसे अभिशाप मत समझो।
'धम' मानव की अमानत है, इसे बरवाद मत समझो।।8।

जलते हुए दीप को बुझना पड़ेगा,
बहती हुई नदी को रुकना पड़ेगा।
कोई अमर नहीं है इस जहां में
जो जन्मा है उसे एक दिन मरना पड़ेगा।।9।।

कुछ काम करके जाना, दुनिया में आने वाले
जाते हैं रोज लाखों, बेकार जानें वाले।
चौरासी लाख योनी में जन्म बहुत पाये,
अब व्यर्थ मत गंवाना, पर जन्म पाने वाले।।10।।

मूल्य पूजा का नहीं, कुछ याचना का है।
साधकों का मूल्य कब है साधना का है।
लाखों या तुम चढ़ाओ एक पैसा
मूल्य मंदिर में हृदय की भावना का है।।11।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो प्रेम के दीप शांति की किरण हैं,
जो लाखों चमन में अहले चमन हैं।
जिनके सिद्धान्त आज पथ प्रदर्शक बने हैं
ऐसे विद्यासागर जी को, शत् शत् नमन हैं।।12।।

"कातिल का कर खुद रुके, लखकर जिसका रूप
जिसे देख जगने लगे निज का आत्म स्वरूप
निज का आत्म स्वरूप जगाए, जिनकी वानी
करे सत्य से प्यार, पाप पर हो खुद ग्लानि
कहें सभी जन 'जैन' आग कर दे जो चंदन
उसी संत के लिए सभी का शत्शत् वंदन।"।।13।।

हो के मायूस यूं न सांझ से ढलते रहिए
जिन्दगी भोर है, सूरज से निकलते रहिए
एक ही छाँव पर ठहरोगे तो थक जाओगे
धीरे-धीरे ही सही राह पर चलते रहिए।"।।14।।

जो फूल खिल रहे है उन्हें एक दिन मुरझाना होगा।
गगन चुम्बी महल मीनारों को बिखर जाना होगा।।
कुछ दिनों का समागम जो मिला है तुम्हें
कुछ करना हे तो करलो नहीं तो यूं ही जाना होगा।।15।।

प्रेम का प्याला पिलाकर देखो,
पतित को पावन बनाकर देखो।
तुम्हारे धर्म की कसौटी तभी मानेंगे हम,
बिखरे हुये अस्तित्व को मिलाके देखो।।16।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शाकाहार

आदमी निर्मम, महा बेदर्द बनता जा रहा है,
दर्द देता दूसरों को और खुद दुख पा रहा है।
प्राणियों के प्राण हर्ता, मांस खाने के लिए,
आदमी का पेट मानों कब्र बनता जा रहा है।।

मदिरा की बोतल छोड़ भक्ति, रस का पान करो तुम,
वृत्ति दानवी तजकर, प्रेम का दान करो तुम।
सुरा सुन्दरी व्याधि का आमंत्रण है प्यारे,
धन यौवन का क्षण भर ना अभिमान करो तुम।।

गमों को भूलने सुरा का पान करते हैं,
अधर से जहर का अनुपान करते हैं।
खेलते हैं जिन्दगी से, पाप ढोते जो,
वे स्वयं दुर्भाग्य का आह्वान करते हैं।।

सांस सांस सुरा विष घोल रही है,
द्वार नरक का मदिरा खोल रही है।
बिलख रहे हैं बच्चे घर में भूखो,
पत्नी भीख मांगते घर घर डोल रही है।।

तपन को महसूस जो करता नहीं है
शीत का संधान वह कैसे करेगा?
हो नहीं संवेदना जिसके ह्रदय में
वह किसी के जख्म रिसते क्यों भरेगा?
पीर जो पहचानता गूंगे मनुज की
वही अपने समय का बनता प्रणेता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बकरी पाती खात है, ताकी काटै खाल।।
जो नर बकरी खात है बाको कौन हबाल?

दान

धरती को प्यास लगी है
नीर की आस जगी है
मुख पात्र खोला है
कृत संकल्पिता हे धरती कि
दाता की प्रतीक्षा नहीं करना है
दाता की विशेष समीक्षा
नहीं करना है
अपनी सीमा
अपना आंगन
भूलकर भी नहीं लांधना है
कारण
पात्र की दीनता
निरभिमान दाता में
मान का अर्विमान कराती है
पाप की पालड़ी फिर
भारी पड़ती है वह,
और
स्वतंत्र-स्वाभिमान पात्र में
परतंत्रता आ ही जाती है
कर्तव्य की धरती धीमीधीमी
नीचे खिसकती है
तब क्या होगा?
दाता और पात्र
दोनों लटकते हैं अधर में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'पुण्य' (तोता क्यों रोता)

हे आर्य !
दान देना
दाता का कार्य है
प्रतिदिन अनिवार्य है
यथाशक्ति
तथा भक्ति
मान सम्मान के साथ
पाप को पुण्य में
ढालना है ना !

दाता
समुचित विधान यही है
दान से पूर्व मान सम्मान हो
वह भी भरपेट हो
पश्चात दान
भले ही अल्प अधपेट हो
सहर्ष स्वीकार है।।

पात्र

याचना यातना की जनी है
कायरता की खनी है
इस पात्र को
कैसे छू सकती है वह
यह वीरता का धनी है
सदा सदा के लिए
इसमें धीरता आ ठनी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महापर्व आया

आर्यिका *श्री दृढ़मति जी*

आया सुनहरा ये पर्व आया
संयम की सौरभ को साथ लाया
महापर्व आया . . . . . .
आया आया ये भादों का महीना
जिसमें दशलक्षण धर्म की महिमा
मिलके आओ सभी, गीत गाओ सभी
पर्व आया, भक्तों में आनन्द छाया (महापर्व . . .)
उत्तम क्षमा धरम को धारो
क्रोध शत्रु को मन से हटाओ
करो सबकी विनय, हो अहं का विलय
मार्दव धर्म ये शुभ सन्देश लाया (महापर्व . . .)
आर्जव, शौच व सत्य धरम को
धारो संयम, तप त्याग यम को
न है कोई मेरा, न है कोई तेरा
उत्तम आकिंचन धर्म सन्देश लाया (महापर्व . . .)
ब्रह्मचर्य की महिमा अपार है
इसे धारो तो बेड़ा पार है
धारो शक्ति अनुसार, करो जीवन सुधार
आज जीवन में संयम माहौल आया (महापर्व . . .)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"रहस्य के घूंघट का उत्पाटन
पुरुषार्थ के हाथ में है
रहस्य को खोजने की कड़ी प्यास
उसे ही लगती है जो भोक्ता
संवेदन शील होता है . . . . ।

"वीर रस से तीर का मिलना कभी सम्भव नहीं
और पीर का मिटना त्रिकाल असम्भव"

(मूक माटी)

दुहिता

मूक-माटी

"दो हित जसमें निहित हों
वह दुहिता कहलाती है
अपना हित स्वयं ही कर लेती है
पतित से पतित
पति का जीवन भी
हित सहित होता
जिससे वह
'दुहिता' कहलाती है।

"क्षमा-भावना"

खम्मामि, खमंतु मे
क्षमा करता हूँ सबको,
क्षमा चाहता हूँ सबसे
सदा सहज बस
मैत्री रहे मेरी!
बैर किससे
क्यों और कब करूँ?
यहाँ कोई भी तो नहीं है संसार भर में मेरा बैरी!

मूक माटी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री गुरुवर विद्यासागर जी
समकित मम परिवार के

श्री गुरुवर विद्यासागर जी, समकित मम परिवार के।
सबको पार लगाने आये, जो डूबे मझधार में।।
संसार देह वैरागी होकर धरा दिगम्बर भेष है।
खोज रहे अपनी मंजिल जो रहा चिदानन्द देश है।।
नश्वरमय संसार यहाँ सुख मिला नहीं लवलेश है।
छोड़ दिये जग वैभव सारे जहाँ भरा दुख क्लेश है।।
रूप निहारा तुमने अपना उत्तम संयम धारके।
सबको पार .....

वाणी में ऐसा जादू अमृत का झरना झरता है।
तव सांसो के कण-कण से भी आतम ज्ञान बिखरता है।।
दारुण कायक्लेश को तजकर, परिणामों में थिरता है।
भला कहाँ विचलित होंगे जब भरी हृदय में समता है।।
भटक रहे है हम भव वन में, तुम राही शिवद्वार के।
सबको पार .....

जहाँ उठे दो पग पावन इक जन सागर लहराता है।
मुदित हुये वे नयन छवि जो एक बार लख जाता है।।
जिन शासन के जग जन मानस से गुरुवर तेरा नाता है।
तु आराध्य आज सबके, जग तुमको शीश झुकाता है।।
अरुण तरुण सी तरुणाई में, आये संयम धार के।।
सबको पार .....

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धन्य हुए वे पिता मल्लपा, तुम जिनके अवतारी हो।
धन्य हुई वे मातश्री जिन भक्ति की उजयारी हो।।
धन्य ज्ञान सागर गुरुवर तुम जिनकी गौरव लाली हो।
कुंद-कुंद के समयसार की बगिया के तुम माली हो।।
सुंदर सुरभित सुमन खिले हैं, रत्नत्रय के हार के।
सबको पार .....

किस दाई ने वैराग्य घोटकर घूटी तुम्हें पिलाई थी।
गोदी में क्या कुंद-कुंद की लोरी मां ने गाई थी।।
बचपन बीता कुमार गया जब तुम्हें उदासी आई थी।
रह-रह पीच्छी और कमण्डलु माँग रही तरुणाई थी।।
वह चले ज्ञान के सागर में, बन नाविक निज उद्धार के।
सबको पार .....

त्याग तपस्या ऐसी आपकी गुरुकुल रूप बनाया है।
चंदन वाला जैसी बनने ब्राह्मी आश्रम आया है।।
ब्राह्मी और सुंदरी बनने जिसमें शिक्षा मिलती है।
कालान्तर में आगे चलकर गुरु से दीक्षा मिलती है।।
गुरुवर भाव बनाये रखना, हम सबके उद्धार के।
सबको पार .....

- *धर्म का अर्थ यही है कि दीन दुःखी जीवों को देखकर आँखों में करुणा जल छलके, अन्यथा नारियल में भी छिद्र हुआ करते है।*
- *धर्म मात्र मानने का नहीं, किन्तु महसूस करने का है, क्योंकि धर्म मात्र परिभाषा नहीं वरन् प्रयोग भी है।*

5184

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

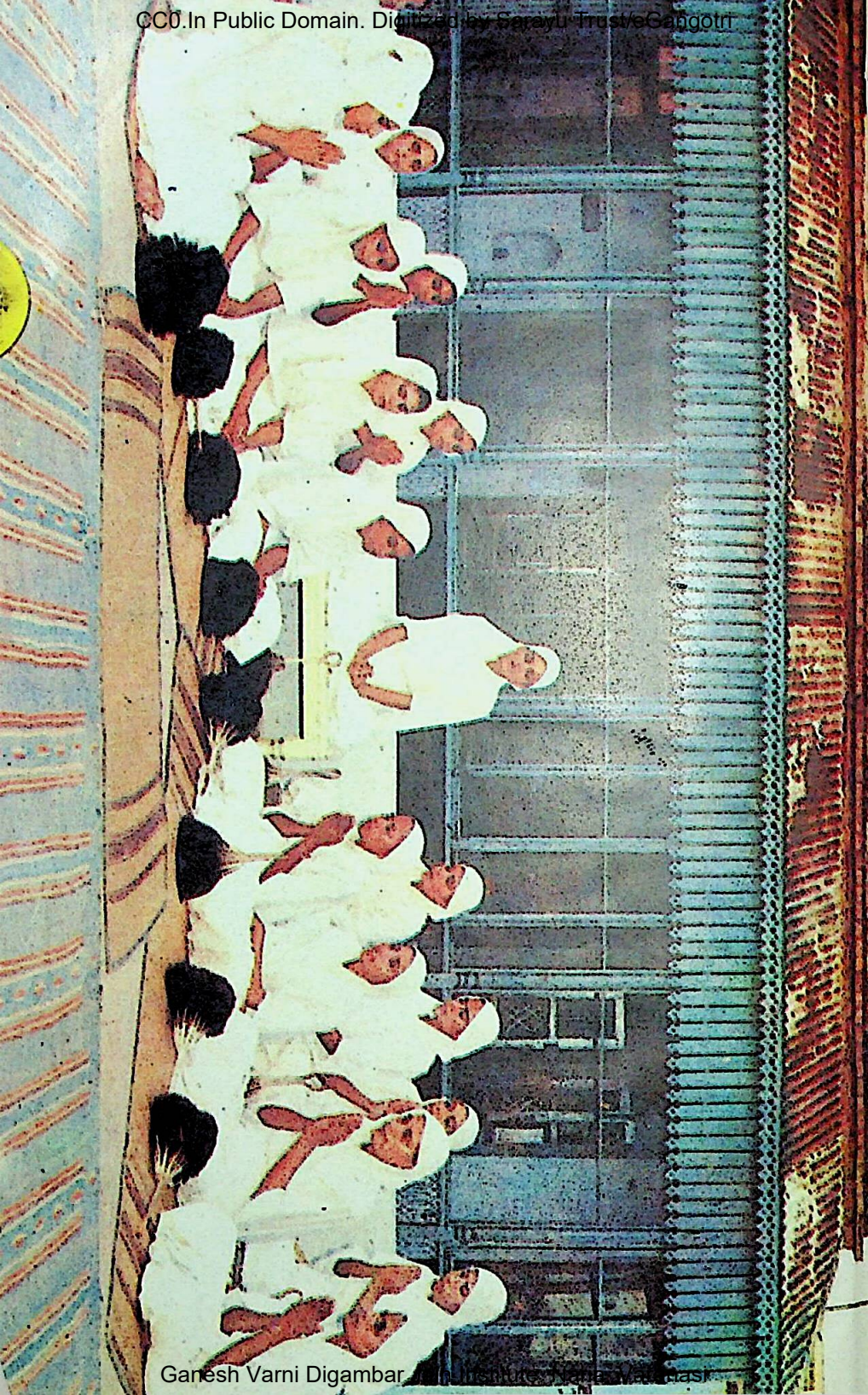

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Nara, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रतनत्रय में दृढ़ रहती जो,
सुख दुख सहती समता से।
कुशल संघ संचालन करती,
विरक्त रहकर ममता से।।
संघ सहित शोभा पातीं जो,
अपने दृढ़ अनुशासन से।
गुरुपद अनुचर मात "दृढ़मति"
सुरभित हो जिन शासन से।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi